

ज्ञानपीठ मूर्तिदेवी जैन-ग्रन्थपाला [प्राकृत ग्रन्थाङ्क ७]

सिरि भगवंत् भूदबलि भडारय पणीदो

महाबंधो

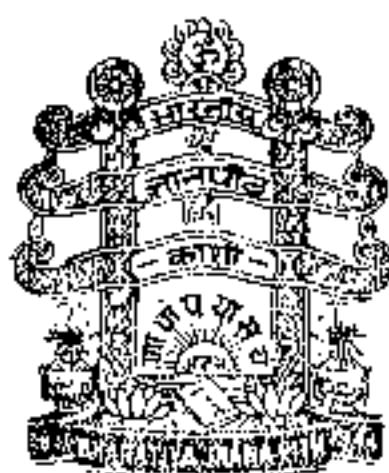
[महाधबल सिद्धान्तशास्त्र]

३ तदियो अणुभागबंधाहियारो

[तृतीय अनुभागबन्धाधिकार]

पुस्तक ५

हिन्दी भाषानुवाद सहित



—सम्पादक—

पण्डित फूलचन्द्र सिद्धान्तशास्त्री

भारतीय ज्ञानपीठ काशी

प्रथम आवृत्ति
१००० प्रति

}

आपाह वीर निः सं० २४८२
वि० सं० २०१३
कृत १९५६

{ सूल्य ११ रु०

प्रशस्ति

जितचेतोजातनुर्वीश्वरमङ्गुटतदेवृष्टपादारविन्द-
 द्वितयं चाक्षमिनीधीयरकुचकलशालङ्गुतोदारहार ।
 प्रतिमं दुर्दीरसंस्त्वसुलविपिनदावानलं माघनन्दि-
 अतिनार्थं शारदाभोजयलविशदयशो राजिताशान्तकान्तम् ॥ १ ॥
 भावभविजयिष्वरवाम्बेवीमुखदर्पणनाम—
 मूनावनि पालकनेसेदनिलाविनुतकिन्ते माघनन्दिमुनीन्द्रम् ॥ २ ॥
 वररादान्ताभ्योमिधितद्वरकोरकालितान्ते आचार्ये जी सुदिदिसागर जी महाराज
 करणं श्रीमेघचन्द्रवत्पतिपद्मद्वृहामनकरण—
 वरणं तीव्रप्रतापोद्यतविततवलोपेतपुष्पेषु भृसं—
 हरणं सैद्धान्तिकाग्रेसरनेने नेकलद्वं माघनन्दिवतीन्द्रम् ॥ ३ ॥
 महानीयगुणनिधानं सहजोचत्वद्विद्विनयनिधियेने नेगलद्वम् ।
 महियिनुतकिन्ते किञ्चित्तमहिमानं मानिकाभिमानं सेमम् ॥ ४ ॥
 विनयद शीलदोल गुणदग्धलियं पंपिनपुड्डिजमनो—
 जगरति रूपिनोल पूनिक्षिदै-मनोहरमपुदीन्दु रू ।
 पिन मने दानदागरमेनिष्प वधूत्तमेयप्प सन्देसे—
 नन सति मलिलकब्बेगे धरियिहोलार दोरे सद्गुणकलिम् ॥ ५ ॥
 सकलधरित्रीविनुतप्रकटितधीयशो मलिलकब्बे वरेसि सापु-
 प्याकरमहायन्धद पुस्तकं श्रीमाघनन्दिमुनिगलिगित्तक ॥ ६ ॥

जिसने मन्मथ को जीत लिया है, जिसके दोनों पादकमलों को राजाओं के सुकुट के अग्रभाग चूमते हैं, जो सरत्वती के पीवर स्तनकलशोंसे अलंकृत मनोहर हार के समान है, जो दुनिवार संसारलपी विपुल कानन के लिये दाचानलस्वरूप है, ऐसा माघनन्दिवतिपती शशकालीन मेघके समान दिग्नतव्याप्त उज्ज्वल वश से विराजमान है ॥ १ ॥

मन्मथविजयी, सरत्वती मुख के लिये दर्पणरूप और पृथ्वीविश्वुतकीर्ति माघनन्दिमुनीन्द्र पृथ्वीपालक हैं ॥ २ ॥

जो श्रीष्ठ रिद्धान्तरूपी समुद्र के तरल तरङ्गों से प्रक्षालित अन्तःकरणवाला है, जो श्री मेघचन्द्र वतिपति के पादकमलों में आसक्त भ्रगर के समान है, जो तीव्र प्रतापी है, जिसने निपुलबल से मन्मथ को जीत लिया है ऐसा माघनन्दिवतीन्द्र सैद्धान्तिकाग्रेसर के नाम से प्रख्यात था ॥ ३ ॥

जो महानीय गुणों का आकर है, जो सहज और उन्नत बुद्धि तथा विनय का विधिस्वरूप है, पृथ्वीमें जिसकी कीर्ति बन्दनीय है, जिसकी महिमा विख्यात है और जिसका भान-समान है वह सेन प्रसिद्ध है ॥ ४ ॥

पृथ्वी में सद्गुणों में विनययुक्त, शीलदती, रति के समान मनोहर रूपवती और दानशूर ऐसी सन्देसेन की भावी मलिलकब्बे के समान कौन है ॥ ५ ॥

सकल पृथ्वी माण्डल के द्वारा विनुत तथा प्रख्यात बुद्धि और यशवली मलिलकब्बे ने पुष्याकर महायन्ध पुस्तक लिखवाकर माघनन्दिमुनीन्द्र को भेट की ॥ ६ ॥

वह प्रशस्ति अनुभागबन्ध के अन्त में उपलब्ध होती है। स्थितिवन्धके अन्तमें भी एक प्रशस्ति आई है। गुणभद्रसूरिके उल्लेख को लोडकर इस प्रशस्तिमें वही बात कही गई है जिसका निदेश स्थितिवन्धके अन्तमें पाई जानेवाली प्रशस्तिमें किया है। मात्र इसमें मेघचन्द्र वतिपतिका विशेष रूपसे उल्लेख किया है और माघनन्दिवतपतिको इनके पादकमलोंमें आसक्त बतलाया है।

विषय-सूची

संक्षिप्तप्रस्तुपणा		१		२		अल्पबहुत्व		३१८		३२६	
				पदनिक्षेप				३३५		३४९	
सन्निकर्षके दो भेद		१		६८		समुत्कीर्तिना		३२५		३२६	
स्वस्थानसन्निकर्ष		१		२७		दो भेद		३२६		३२६	
उत्कृष्ट सन्निकर्ष						यार्थक्षेप : - अचार्याचार्द अहस्युविदिसामार जी घटात्र		३२६		३२६	
जघन्य सन्निकर्ष				६८	१२६	जघन्य		३२६		३२६	
परस्थान सन्निकर्ष				६८	१२७	स्वामित्व		३२६		३२६	
उत्कृष्ट सन्निकर्ष				१३	१२८	दो भेद		३२६		३२६	
जघन्य सन्निकर्ष				१३	१२९	उल्लृष्ट		३२६		३४०	
भंगविचयप्रस्तुपणा		१२६		१२९	१२०	जघन्य		३४०		३५६	
उत्कृष्ट		१२६		१२०	१२१	अल्पबहुत्व		३५६		३५९	
जघन्य		१२६		१२१	१२१	दो भेद		३२६		३२६	
प्रस्तुपणा		१२९		१२१	१२०	उत्कृष्ट		३५६		३५७	
उत्कृष्ट		१२९		१२०	१२१	जघन्य		३५७		३५७	
जघन्य		१३०		१२१	१२१	युद्धि		३५७		३७२	
परिभाषाप्रस्तुपणा		१३१		१४२	१३७	समुत्कीर्तिना		३७१		३८१	
उत्कृष्ट		१३१		१३७	१४२	स्वामित्व		३८१		३८१	
जघन्य		१३७		१४२	१४१	काल		३८१		३८१	
क्षेत्रप्रस्तुपणा		१४२		१४१	१४६	अन्तर		३८२		३८२	
उत्कृष्ट		१४२		१४६	१४१	भंगविचय		३८२		३८२	
जघन्य		१४६		१४१	१५१	भागाभाग		३८२		३८४	
स्पर्शनप्रस्तुपणा		१५१		१५१	१८२	परिभाषा		३८४		३८४	
उत्कृष्ट		१५१		१८२	१५१	क्षेत्र		३८४		३८५	
जघन्य		१८२		१५१	११६	स्पर्शन		३८५		३८५	
कालप्रस्तुपणा		२११		२१६	२१४	काल		३८५		३८८	
उत्कृष्ट		२११		२१४	२१६	अन्तर		३८८		३८८	
जघन्य		२१४		२१६	२१६	गाव		३८८		३७१	
अन्तरप्रस्तुपणा		२१६		२१६	२१७	अल्पबहुत्व		३७१		३७२	
उत्कृष्ट		२१६		२१७	२१९	अध्यवसानसुदाहार		३७२		४१३	
जघन्य		२१८		२१९	२१०	तीन भेद		३७२		३७२	
आधप्रस्तुपणा				२१०	२३९	प्रकृति समुदाहार		३७४		३८५	
अल्पबहुत्वप्रस्तुपणा					२१०	दो भेद		३७४		३७४	
अल्पबहुत्वके दो भेद					२२०	प्रमाणानुगम		३७५		३७५	
स्वस्थान अल्पबहुत्व					२२०	अल्पबहुत्व		३७५		३८६	
उत्कृष्ट					२२०	दो भेद		३७५		३७५	
जघन्य					२२४	त्वस्थान अल्पबहुत्व		३७५		३७५	
परस्थान अल्पबहुत्व					२२८	परस्थान अल्पबहुत्व		३७५		३८७	
उत्कृष्ट					२२८	स्थितिसमुदाहार		३८७		३९२	
जघन्य					२३३	दो भेद		३८७		३८७	
भुजमारवन्ध					२३५	प्रमाणानुगम		३८७		३८७	
अर्यपद					२३७	श्रेणिप्रस्तुपणा		३८७		३८९	
समुत्कीर्तिना					२४०	दो भेद		३८७		३८७	
स्वामित्व					२४१	अनन्तरोपनिधा		३८७		३८७	
काल					२४१	परम्परोपनिधा		३८८		३८८	
अन्तर					२४६	अनुभाववन्धवसानस्थान		३८९		३९३	
भंगविचय					२४६	दो भेद		३९०		३९०	
भागाभाग					२४८	अवन्तरोपनिधा		३९१		३९१	
परिभाषा					२४९	परम्परोपनिधा		३९१		३९२	
क्षेत्र					२४३	तीव्रमन्दता		३९२		४१३	
स्पर्शन					२४६	अनुकृष्टि		३९२		३९८	
काल					२०९	तीव्रमन्द		३९३		४१३	
अन्तर					३१२	जीवसमुदाहार		४१३		४१५	
भाव					३१७						

सिरिभगवंतभूदबलिभडारथपणीदो महावंधो

तदियो अणुभागवंधाहियारो १५ सरिण्यासपरुषणा

१. सण्णियासं दुविधं—सत्थाणं परत्थाणं च । सत्थाणं हुवि०—जह० उक० । उक्ससए पगदं ॥ हुविठ—ओषेज्जादै॒ खोभिछ्वज्जिण्येभिष्णाणावरणस्स उक्ससयं अणुभागं वंधंतो चदु॑णाणावरणीयं पियमा वंधमो तं तु उक्ससा वा अणुक्ससा वा । उक्ससादो अणुक्ससा छद्वाणपदिदं वंधदि अणंतभागहीयं वा ॥ ५ । एवमण्णमण्णाणं । पिद्वाणिहाए उक० बं० अहृदंस० पियमा वं० । तं तु छद्वाणपदिदं वंधदि । एवमण्ण-मण्णाणं । साद० उ० वं० असाद० अवंधमो । असाद० उ० वं० साद० अवंध० । एवं आद॑-मोद॑ पि ।

१५ सन्निकर्षप्ररूपणा

२. सन्निकर्ष दो प्रकारका है—स्वस्थान सन्निकर्ष और परस्थान सन्निकर्ष । स्वस्थान सन्निकर्ष दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे आभिनिवोधिकज्ञानावरणके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव वह ज्ञानावरणका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह इनके उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह उनके उत्कृष्ट अनुभागवन्धकी अपेक्षा छह स्थान पतित अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है । या तो अनन्तभागहीन अनुभागका बन्ध करता है या असंख्यात भागहीन या संख्यात-भागहीन या संख्यातगुणहीन या असंख्यातगुणहीन या अनन्तगुणहीन अनुभागका बन्ध करता है । पाँचों ज्ञानावरणोंका इसी प्रकार परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए । निद्रानिद्राके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव आठ दर्शनावरणका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह इनके उत्कृष्ट अनुभाग का भी बन्ध करता है और आनुत्कृष्ट अनुभागका भी । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह उनके उत्कृष्ट अनुभागवन्धकी अपेक्षा छह स्थान पतित अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है । सब दर्शनावरणोंका परस्पर इसी प्रकार सन्निकर्ष जानना चाहिए । सातवेदनीयके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव असातवेदनीयका बन्ध नहीं करता है । असातवेदनीयके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव सातवेदनीयका बन्ध नहीं करता है । इसी प्रकार आयु और गोत्र कर्मके विषयमें भी जानना चाहिए ।

३. ता० प्रतौ अणुभागा (ग) चदु—इति पाठः ।

२. मिच्छ० उ० व० सोलसक०-णवुंस-अरदि-सोग-भय०-दु० पिय० व० । तं कु छदाण० । एवं सोलसक०-पैचणोक० । इत्थ० उ० व० मिच्छ०-सोलसक०-अरदि-सोग०-भय०-दु० पिय० व० अणंतगुणहीणं व० । एवं पुरिस० । हस्स० उक० व० मिच्छ०-सोलसक०-भय०-दु० पियमा व० अणंतगुणहीणं व० । इत्थ०-णवुंस० सिया व० सिया अव० । यदि व० पिय० अणु० अणंतगुणहीणं । रदि० पिय० तं तु० । एवं रदीए० ।

३. पिरयगदि० उ० व० पंचिदि०-वेउच्चि०-तेजा०-क०-वेउच्चि०आंगो०-पसत्य०-४-अगु०३-तस०४-पिमि० पिय० व० अणंतगुणहीणं व०^१ । हुँड०-अप्पसत्य०४-पिरयाणु०-उप०-अप्पसत्य०-अथिरादिच० पिय० व० । तं तु० छदाणपदिदं । एवं पिरयाणु० ।

^१ मिथ्यात्वके उल्कुष अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव सोलह कषाय, नपुंसकवेद, अरति, यज्ञदृशक : अप्यद्यर्थ श्री हृषिकेशवाच्च नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह इनके उल्कुष अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुल्कुष अनुभागका बन्ध करता है तो वह उनके उल्कुष अनुभाग बन्धकी अपेक्षा छह स्थान पतित अनुल्कुष अनुभागका बन्ध करता है । इसी प्रकार सोलह कषाय और पाँच नोकपार्योंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना बन्ध करता है । खीवेदके उल्कुष अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव मिथ्यात्व, सोलह कषाय, अरति, शोक, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह इनके अनन्तगुणे हीन अनुल्कुष अनुभागका बन्ध करता है । इसी प्रकार पुरुषवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । हास्यके उल्कुष अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह इनके अनन्तगुणे हीन अनुल्कुष अनुभागका बन्ध करता है । खीवेद और नपुंसकवेदका कदाचित् बन्ध करता है और कदाचित् नहीं बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो नियमसे इनके अनन्तगुणे हीन अनुल्कुष अनुभागका बन्ध करता है । रतिका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उसके उल्कुष अनुभागका बन्ध करता है और अनुल्कुष अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुल्कुष अनुभागका बन्ध करता है तो वह उसके उल्कुष अनुभाग बन्धकी अपेक्षा छह स्थान पतित अनुल्कुष अनुभागका बन्ध करता है । इसी प्रकार रतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

४. नरकगतिके उल्कुष अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, वैकियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वैकियिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु तीन, त्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह इनके अनन्तगुणे हीन अनुल्कुष अनुल्कुष अनुभागका बन्ध करता है । हुण्ड संस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, नरकगत्यानुपूर्वी, उपघात, अनुभागका बन्ध करता है । अप्रशस्त विहायोगति और अस्थिर आदि छहका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह इनके अनुल्कुष अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुल्कुष अनुभागका बन्ध करता है तो वह इनके उल्कुष अनुभागबन्धकी अपेक्षा छह स्थान पतित अनुल्कुष अनुभागका बन्ध करता है । इसी प्रकार नरकगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

५. ता०-आ०प्रस्तोः 'रदि० पिय०' इति आरम्भ 'पिमि० पिय०' ० अणंतगुणहीण द० इति यावत् पाठस्य पुनराधृतिः ।

४. तिरिक्खगदि० उ० व० एहंदि०-अप्पसत्थवि०-थावर-दुस्सर सिया तं तु० बद्धाणपदिदं व० । पंचिदि०-ओरालि०अंगो०-असंपत्त-आदाउज्जो०-तस० सिया अण्ठत-एष्टीणं व० । ओरालिय०-तेजा०-क०-पसत्थ०४-अगु०३-वादर-पज्जच-पत्ते०-णिमि० णिय० अण्ठतगुणहीणं । हुँड०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-उप०-अथिरादिपंच णिय० तं तु० बद्धाणपदिदं । एवं तिरिक्खाणु० ।

५. मणुसग० उ० व० पंचिदि०-तेजा०-क०-समचदु०-पसत्थापसत्थवण्ण ४-अगु०४-पसत्थ०-तस०-४-थिरादिक्ष०-णिमि० णिय० अण्ठतगुणहीणं । ओरालि०-ओरालि०अंगो०-बज्जरिस०-मणुसाणु० णिय० व० तं तु० बद्धाणपदिदं । तित्थ० सिया० अण्ठतगुण० व० । एवं ओरालि०-ओरालि०अंगो०-बज्जरि०-मणुसाणु० ।

६. देवगदि० उ० व० पंचिदि०-वेउविव०-तेजा०-क०-समचदु०-वेउविवय-

४. तिर्यक्षगतिके उत्कृष्ट अनुभागका किन्धु करनेवाला जीव उत्कृष्ट आत्मा, वृद्धप्रशस्त विहायोगति, स्थावर और दुःस्वरका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह उनके अपने उत्कृष्ट बन्धकी अपेक्षा छह स्थान परित अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है । पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासुपाटिका संहनन, आतप, उद्योत और ब्रसका कदाचित् बन्ध करता है और कदाचित् नहीं बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो वह इनके अपने उत्कृष्ट बन्धकी अपेक्षा अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है । औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु तीन, वादर, पर्याप्ति, प्रत्येक और निर्मणिका नियमसे बन्ध करता है जो उनके अपने उत्कृष्ट बन्धकी अपेक्षा अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है । हुण्ड संस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यक्षगत्यानुपूर्वी, उपधात और अस्थिर आदि पाँचका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उनके उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो उसका वह छह स्थान परित हानिको लिए हुए बन्ध करता है । इसी प्रकार तिर्यक्षगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए ।

५. मनुष्यगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरल संस्थान, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, स्थिर आदि छह और निर्मणिका नियमसे अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए बन्ध करता है । औदारिक शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्षभनाराच संहनन और मनुष्यगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उनके उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो उसका वह छह स्थान परित हानिको लिये हुए बन्ध करता है । तीर्थकूरका कदाचित् बन्ध करता है और कदाचित् नहीं करता । यदि बन्ध करता है तो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है । इसी प्रकार अर्थात् मनुष्यगतिके समान औदारिक शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्षभनाराच संहनन और मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए ।

६. देवगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, वैकियिक शरीर,

१. ता० आ० प्रत्यो० एहंदि० अप्पसत्थ० अप्पसत्थवि० इति पाठः । २. आ०प्रत्यौ पदिर्व० । आहारदुर्ग तित्थ० इति पाठः ।

अंगो०-पसत्थ०४-देवाणु०-अगु०३-पसत्थ०-तस०४-थिरादिपंच०-णिमि० णिय० बं० । तं तु० छट्टाणपदिदं । आहारदुग-तित्थ० सिया० । तं तु० छट्टाणपदिदं० । अप्प-सत्थ०४-उप०-जस० णिय० अणंतगुणहीण० । एवमेदाओ पसत्थाओ एकमेकसस । तं तु० ।

मार्गबिशेष :- अग्निर्वाच श्री सुरिलिङ्गमर्ज जी मुहारज्जु
 ७. एहिदि० उ० ब० तिरिक्खवग०-हुँड०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खवाणु०-उप०-थावर-
 अथिरादिपंच णिय० । तं तु० छट्टाणपदिदं० । ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थ०४-
 अगु०३-बादर-पज्जत-पत्ते०-णिमि० णिय० अणंतगुणहीण० । आदाउज्जो० सिया०
 अणंतगुणहीण० । एवं थावर० । बीहिंदि० उ० ब० तिरिक्खवग०-ओरालि०-तेजा०-
 क०-हुँड०-ओरालि०अंगो०-पसत्थापसत्थ०४-तिरिक्खवाणु०-अगु०-उप०-तस०-बादर-

तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरसंस्थान, वैकिञ्चिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुत्रिक, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, स्थिर आदि पाँच और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह इनके उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुकृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो उसका वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए बन्ध करता है । आद्वारक द्विक और तीर्थङ्करका कदाचित् बन्ध करता है और कदाचित् बन्ध नहीं करता । यदि बन्ध करता है तो उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुकृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो उसका वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए बन्ध करता है । अप्रशस्त वर्ण चतुष्क, उपवात और यशःकीर्तिका नियमसे अनन्तगुणी हानिका लिये हुए अनुकृष्ट बन्ध करता है । इसी प्रकार इन प्रशस्त प्रकृतियोंका एक दूसरेको मुख्यतासे सञ्जिकपे जानना चाहिए । किन्तु इनका परस्पर अनुभाग बन्ध उत्कृष्ट भी करता है और अनुकृष्ट भी । यदि अनुकृष्ट अनुभागबन्ध करता है तो उनका वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए अनुभाग बन्ध करता है ।

७. एकेन्द्रिय जातिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यक्चगति, हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्ण चतुष्क, तिर्यक्चगत्यानुपूर्वी, उपवात, स्थावर और अस्थिर आदि पाँचका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह इनके उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुकृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो उसका वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए बन्ध करता है । औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, प्रशस्त वर्ण चतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणका नियमसे अनन्तगुणा हीन अनुकृष्ट अनुभागका बन्ध करता है । आतप और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है और कदाचित् नहीं बन्ध करता । यदि बन्ध करता है तो नियमसे अनन्तगुणा हीन अनुकृष्ट अनुभागका बन्ध करता है । इसी प्रकार स्थावर प्रकृतिकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ण जानना चाहिए । द्वीन्द्रिय जातिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यक्चगति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्डसंस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्ण चतुष्क, अप्रशस्त वर्ण चतुष्क, तिर्यक्चगत्यानु-पूर्वी, अगुरुलघु, उपवात, त्रस, बादर, अपर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच और निर्माणका नियमसे अनन्तगुणा हीन अनुकृष्ट अनुभागका बन्ध करता है । असम्प्राप्तासृपाटिका संहननका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है या अनुकृष्ट अनुभागका

अपज्ज०-पते०-अथिरादियंच०-णिमि० णिय० अणंतगुणहीण॑। [असंप० णि० तं तु०]।
एवं तेऽदि०-चदुरिंदि० ।

८. णग्नोद० उ० वं० तिरिक्खग०-मणुसग०-चदुसंघ०-दोआणु०-उज्जो० सिया
अणंतगुणहीण॑ वं०। पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०-अंगो०-पसत्थापसत्थ०४-
अगु०४-[अ-] पसत्थ०-तस०४-अथिरादिच्छ०-णिमि० णिय० अणंतगुणहीण॑। एवं
सादि०। णवरि तिणिसंघ० ।

९. सुज्ज० उ० अणु० वं० तिरिक्खब०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-
ओरालि०-अंगो०-पसत्थापसत्थ०४-तिरिक्खबाणु०-अगु०४-[अ-] पसत्थ०-तस०४-
अथिरादिच्छ०-णिमि० णिय० अणंतगुणहीण॑। दोसंघ०-उज्जो० सिया० अणंतगु० ।
एवं वामणसंठा०। णवरि एयसंघ०-उज्जो० सिया अणंतगु० ।

१०. हुण्ड० उ० वं० णिरय-तिरिक्खग०-एइंदि०-असंप०-दोआणु०-अप्यसत्थ-
विहा०-[थावर०]-दुस्सर० सिया०। तं तु० छटाणपदिदं०। पंचिंदि०-ओरालि०-वेजन्त्रि०-
दोअंगो०-आदाव०-तस०^{पुर्णदर्शक}० सिया० अणंतगु०। क्षमाठैकश्च-क्षमाश्च-छष्ट-अगु-लैदैद्यज
भी बन्ध करता है। यदि अनुकृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप
होता है। इसी प्रकार व्रीन्दियजाति और चतुरन्दियजातिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

८. न्ययोध संस्थानके उक्तृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यङ्गगति, पञ्चेन्द्रिय
चार संहनन, दो आनुपूर्वी और उद्योतका कदाचित् अनन्तगुणा हीन अनुकृष्ट अनुभागका बन्ध
करता है। पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग,
प्रशस्त वर्ण चतुष्क, अप्रशस्त वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, व्रसचतुष्क,
अस्थिर आदि छह और निर्माणका नियमसे अनन्तगुणा हीन अनुकृष्ट अनुभागका बन्ध करता
है। इसी प्रकार स्वाति संस्थानकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि
इसके तीन संहनन कहने चाहिए।

९. कुड़जक संस्थानके उक्तृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यङ्गगति, पञ्चेन्द्रिय
जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्ण चतुष्क,
अप्रशस्त वर्ण चतुष्क, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, व्रसचतुष्क
अस्थिर आदि छह और निर्माणका नियमसे अनन्तगुणा हीन अनुकृष्ट अनुभागका बन्ध करता
है। दो संहनन और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है। जो अनन्तगुणा हीन अनुकृष्ट
अनुभागका बन्ध करता है। इसी प्रकार वामन संस्थानकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।
इतनी विशेषता है कि वह एक संहनन और उद्योतका कदाचित् अनन्तगुणा हीन अनुकृष्ट
अनुभागका बन्ध करता है।

१०. हुण्ड संस्थानके उक्तृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव नरकगति, तिर्यङ्गगति,
एकेन्द्रिय जाति, असंप्राप्तासूपाटिका संहनन, दो आनुपूर्वी, अप्रशस्त विहायोगति, स्थावर,
और दुःस्वरका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो उक्तृष्ट अनुभागका भी बन्ध
करता है और अनुकृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुकृष्ट अनुभागका बन्ध करता है
तो वह इनका छह स्थान पतित हानिको लिये हुए बन्ध करता है। पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिक-
शरीर, वैक्रियिकशरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, आतप और त्रसका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा

बादर-पञ्जत-पत्ते०-णिमि० णिय० अणंतगुण०। उज्जोवं सिया अणंतगुणहीण०। अप्पसत्थ०४-उप०-अथिरादिपंच० णिय०^१। तं तु० ब्रह्माणपदिदं०। एवं हुँड०भंगो अप्पसत्थवण्ण०४-उप०-अथिरादिपंच०। यथा संठाणं तथा चदुसंघ०।

११. जसंय० उ० अणु० वं० तिरिक्खव०-हुँड०-अप्पसत्थवण्ण०४-तिरि-क्खाणु०-उप०-अप्पस०-अथिरादिष्ठ० णिं०। तं तु० ब्रह्माणपदिदं०। पंचिदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-पसत्थ०४-अगु०३-तस०४-णिमि० णिय० अणंतगुणहीणं०। उज्जो० सिया० अणंतगुणहीणं०।

१२. आदाव० उ० वं० तिरिक्खव०-एङ्गेदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुँड०-पसत्थापसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-धावर-बादर-पञ्जत-पत्ते०-दूध०-अणादे०-णिमि० णिय० अणंतगुणहीणं०। विराधिर-सुभासुभ-जस०-अजस० सिया० अणंतगुणहीणं०। उज्जो० उ० वं०^१ तिरिक्खव०-पंचिदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-

हीन अनुकूष्ट अनुभागका बन्ध करता है। तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरु-लघुव्रक, बादर, पर्याप्ति, प्रत्येक और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणेहीन अनुकूष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणेहीन अनुकूष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। अप्रशस्त वर्ण चतुष्क, उपघात और अस्थिर आदि पाँच का नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह इनके उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनु-कूष्ट अनुभागका पाँचव्यं फरता है। यदि अनुकूष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। इसी प्रकार हुण्डक संस्थानके समान अप्रशस्तवर्ण चतुष्क, उपघात और अस्थिर आदि पाँचकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना चाहिए। जिस प्रकार चार संहननोंकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना चाहिए।

१३. असम्प्राप्तसुपाटिका संहननके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यक्कगति, हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्ण चतुष्क, तिर्यक्कगत्यानुपूर्वी, उपघात, अप्रशस्त विद्यायोगति और अस्थिर आदि छहका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकूष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि वह इनके अनुकूष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो इनका छह स्थान पतित हानिको लिये हुए बन्ध करता है। पंचेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्तवर्ण चतुष्क, अगुरुलघुव्रिष्ट, चस चतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणेहीन अनुकूष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणेहीन अनुकूष्ट अनुभागको लिये हुए होता है।

१४. आतपके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यक्कगति, एकेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, प्रशस्त वर्ण चतुष्क, अप्रशस्त वर्ण चतुष्क, तिर्यक्कगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, स्थावर, बादर, पर्याप्ति, प्रत्येक, हुर्मग, अनादेय और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणेहीन अनुकूष्ट अनुभाग बन्धको लिये हुए होता है। स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्तिका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणेहीन अनुकूष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। उद्योतके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करने-

१. ता०-आ०प्रत्योः पंच णिमि० णिय० इति पाठः। २. ता० आ०प्रत्योः 'अणंतगुणहीण' आगेऽप्ते 'यथा गदितथा आणुभुविष्ट०' इत्याधिकः वागोऽस्ति। ३. ता० आ०प्रत्योः उज्जो० उप० तिरिक्ख० इति पाठः।

ओरालि० अंगो० उज्जरि० पसत्यापसत्य० ४—तिरिक्खाणु० अगु० ४—पसत्य० तस० ४—थिरादिव० णिमि० णिय० अण्टगु० ।

१३. अप्पसत्य० उ० व० णिरय० तिरिक्ख० असंप० दोआणु० सिया० । तं तु० छटाणपदिदं० । पंचिदि० तेजा० क० पसत्य० ४—अगु० ३—तस० ४—णिमि० णिय० अण्टगुणहीण० । ओरालि० वेदव्वि० दोअंगो० उज्जो० सिया० अण्टगुणहीण० । हुँड० अप्पसत्यवण्ण० ४—उप० अथिरादिव० णिय० । तं तु० छटाणपदिदं० । एवं दुस्सर० ।

१४. सुहूम० उ० व० तिरिक्ख० एङ्गिदि० ओरालि० तेजा० क० हुँड० पसत्यापसत्यवण्ण० ४—तिरिक्खाणु० अगु० उप० थावर-अथिरादिपंच० णिमि० णिय० अण्टगुणहीण० । अप्ज्ज० साधार० णिय० । तं तु० छटाणपदिदं० । एवं अप्ज्जत्त-साधारण० । पंचतराइयाणं णाणावरणभंगो० ।

१५. णिरएमु सत्तणं कम्माणं ओघं । तिरिक्ख० उ० व० पंचिदि० बाला जीव तिर्यङ्गगति, पंचेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरल्ल संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णर्थम नाराच संहनन, प्रशस्त वर्ण चतुष्क, अप्रशस्त वर्ण चतुष्क, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, प्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुकूष अनुभागका बन्ध करता है ।

१६. अप्रशस्त विहायोगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव नरकगति, तिर्यङ्गगति, असम्प्राप्तसूपाटिका संहनन और दो आनुपूर्वीका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकूष अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुकूष अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है । पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, प्रशस्त वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु त्रिक, प्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुकूष अनुभागको लिये हुए होता है । औदारिक शरीर, वैक्रियिक शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुकूष अनुभागको लिये हुए होता है । हुण्ड संस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपधात और अस्थिर आदि छहका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकूष अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुकूष अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है । इसी प्रकार दुःखवर प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

१७. सुहूमके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यङ्गगति, एकेन्द्रियजाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्ड संस्थान, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपधात, स्थावर, अस्थिर आदि पौँच और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुकूष अनुभागको लिये हुए होता है । अपर्याप्त और साधारणका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकूष अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुकूष अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है । इसी प्रकार अपर्याप्त और साधारणकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । पौँच अन्तरायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्षका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है ।

१८. नारकियोंमें सात कर्मोंका भंग ओघके समान है । तिर्यङ्गगतिके उत्कृष्ट अनुभागका

ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थ०४—अगु०३—तस०४—णिमि० णिय० अणंतगुणहीर्ण। हु०ड०-असंप०-अप्पसत्थ०४—तिरिक्खाणु०-उप०-अप्पसत्थ०-अथिरादिक्ष० णिय०। तं तु० छद्माणपदिदं०। उज्जो० सिया० अणंतगुणहीर्ण०। एवं तिरिक्खगदिभंगो
हु०ड०-असंप०-अप्पसत्थ०४—तिरिक्खाणु०-उप०-अप्पसत्थ०-अथिरादिक्ष०। यद्यदिक्षकं अप्पार्थं तद्विधानात् जी महाराज

१६. मणुसगदि० उ० व० पंचिदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०-अंगो०-वज्जरि०--पसत्थ०४—मणुसाणु०—अगु०३—तस०४—पसत्थवि०-धिरादिक्ष०-णिमि० णिय०। तं तु० छद्माणपदिदं०। अप्पसत्थ०४—उप० णिय० अणंतगुणहीर्ण व०। तित्थ० सिया०। तं तु० छद्माणपदिदं०। एवं पसत्थाओ एकमेककेण सह। तं तु० तित्थय-रेण सह कादव्यं। चदुसंठा०-चदुसंघ०-उज्जो० ओघं। एवं छमु पुढवीसु। यद्यरि उज्जोवं उ० व० तिरिक्ख०-पंचिदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०-अंगो०-पसत्थापसत्थ०४—

बन्धक जीव पंचेन्द्रिय जाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्तवर्णं चतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, त्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुकूष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। हुण्ड संस्थान, असम्भ्राप्तासृपाटिकासंहनन, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यङ्गत्यातुपूर्वी, उपघात, अप्रशस्त विहायोगति और अस्थिर आदि छहका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उक्षुष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकूष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुकूष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुकूष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। इसी प्रकार तिर्यङ्गतिके समान हुण्ड संस्थान, असम्भ्राप्तासृपाटिकासंहनन, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यङ्गत्यातुपूर्वी, उपघात, अप्रशस्त विहायोगति और अस्थिर आदि छहकी मुख्यता से सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१६. मनुष्यगतिके उक्षुष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पंचेन्द्रिय जाति, औदारिक-शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरुण संस्थान, औदारिक आङ्गोपङ्ग, वर्णभनाराच संहनन, प्रशस्त वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यातुपूर्वी, अगुरुलघुत्रिक, त्रसचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, स्थिर आदि छह और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उक्षुष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकूष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुकूष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। अप्रशस्त वर्णचतुष्क और उपघातका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुकूष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। तीर्थङ्करका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो उक्षुष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकूष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुकूष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। इसी प्रकार प्रशस्त प्रकृतियोंकी मुख्यतासे एक दूसरेके साथ सन्निकर्ष कहना चाहिए। किन्तु वह तीर्थङ्कर प्रकृतिके साथ कहना चाहिए। चार मंस्थान, चार संहनन, और उद्योतका भङ्ग ओघके समान है। अर्थात् इन प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ओघके समान कहना चाहिए। इसी प्रकार प्रथमादि छह पृथिवियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि उद्योतके उक्षुष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यङ्गति, पंचेन्द्रिय जाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क,

तिरिक्खवाणु०-अगु०४-तस०४-णिमि०^१ णिय० अणंतगुणहीण० । छसंदा०-छसंध०-दोविहा०-छयुगल० सिया अणंतगुणहीण० । सतमाए णिरयोघ० । णवरि दोसंदा०-दोसंध० उ० व० तिरिक्ख०-तिरिक्खवाणु० णिय० अणंतगुणहीण० ।

१७. तिरिक्खवेसु सत्तणं कम्माणं ओघं । णिरयगदि० उ० व० पचिंदि०-वेडचिव०-वेडचिव०-शंगो०-पसत्थ०४-अगु०३-तस०४-णिमि० णिय० अणलगुणहीण० । हुंड०-अप्पसत्थ०४-णिरयाणु०-उप०-अप्पस०-अथिरादिछ० णिय० । तं हु० छटाणपदिद० । एवं णिरगदिर्भंगो अप्पसत्थाणं ।

१८. तिरिक्खवग० उ० व० षडिंदि०-तिरिक्खवाणु०-थावरादि०४ णिय० । तं हु० छटाणपदिद० । ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०-उप०-अथिरादिपंच०--णिमि० णिय० अणंतगुणहीण० । एवं तिरिक्खवगदिर्भंगो षडिंदि०-तिरिक्खवाणु०-थावरादि०४ ।

१९. मणुसामनदलकै व॒ंशाचिंहि॒ति॒तुविधि॒साम॒त् ज्ञा॒यहराज

अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वीं, अगुरुलघु चतुष्क, त्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुकूल अनुभागको लिये हुए होता है । छह संस्थान, छह संदनन, दो विहायोगति और छह युगलका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुकूल अनुभागको लिये हुए होता है । सातवीं पृथिवीमें सामान्य नारकियोंके समान भज्ज है । इतनी विशेषता है कि दो संस्थान और दो संदननके उक्कुष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यङ्गगति और तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुकूल अनुभागको लिये हुए होता है ।

२०. तिर्यङ्गोमें सात कमोंका भज्ज ओघके समान है । नरकगतिके उक्कुष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पंचेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, त्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुकूल अनुभागका बन्ध करता है । हुण्ड संस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, नरकगत्यानुपूर्वीं, उपघात, अप्रशस्त विहायोगति और अस्थिर आदि छहका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उक्कुष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकूल अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुकूल अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित द्वानिको लिये हुए होता है । इसी प्रकार नरकगतिकी मुख्यतासे कहे गये सञ्जिकर्षके समान अप्रशस्त प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए ।

२१. तिर्यङ्गगतिके उक्कुष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव एवेन्द्रिय जाति, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वीं और स्थावर आदि चारका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उक्कुष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकूल अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुकूल अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित द्वानिको लिये हुए होता है । औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, अस्थिर आदि पाँच और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है । जो अनन्तगुणे हीन अनुकूल अनुभागको लिये हुए होता है । इसी प्रकार तिर्यङ्गगतिकी मुख्यतासे कहे गये सञ्जिकर्षके समान एवेन्द्रिय जाति, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वीं और स्थावर आदि चारकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए ।

२२. मनुष्यगतिके उक्कुष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रियजाति, तैजस शरीर,

२ आ० मतौ अगु० ४ सस० णिमि इति पाठः । २ आ० प्रती तेजाक० पष्टथापसत्थ० इति पाठः ।

अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर--आदे०--णिमि० णिय० अणंतगुणहीण० । ओरालि०-ओरालि०अंगो०-बज्जरि०-मणुसाणु० णि० । तं तु० छटाणपदिदं । निणियुग० सिया० अणंतगुणहीण० । एवं पणुसगदिभंगो ओरालि०-ओरालि०-अंगो०-बज्जरि०-मणुसाणु० ।

२०. देवगदि० उ० ब० पंचिदि०-बेउविव०-तेजा०-क०-समचदु०-बेउविव०-अंगो०-पसत्थ०४-देवाणु०-अगु०३-पसत्थ०-तस०४-थिरादिव०-णिमि० णिय० । तं तु० छटाणपदिदं० । अप्पसत्थ०४-उप० णि० अणंतगुणहीण० । एवं पसत्थाणं देवगदीए सह एककमेककस्स । तं तु० ।

पार्वदर्शक :- श्रूति० चीइदिद्युविव०-चुठाच्चुठा० विरिक्तव०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुण्ड०-ओरालि०-अंगो०-पसत्थापसत्थ०४-तिरिक्तवाणु०-अगु०-उप०-तस०-बादर-अपज्ज०-पते०-अथिरादिपंच०-णिमि० णिय० अणंतगुणहीण० । असंप० णि० । तं तु० छटाण-पदिदं० । एवं असंप० । तीइदि०-चदुरिंदि० ओधं । चदुसंठा०-चदुसंघ०-कार्मण शरीर, समचतुरल्ल संस्थान, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुकृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है । औदारिक शरीर, औदारिक आङ्गो-पाङ्ग, वर्जनाराच संहनन और मनुष्यगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उक्त अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुकृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है । तीन युगलका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुकृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है । इसी प्रकार मनुष्यगतिकी मुख्यतासे कहे गये सञ्चिकर्षके समान औदारिक शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्जनाराच संहनन और मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना चाहिए ।

२०. देवगतिके उक्त अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, वैकियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर. समचतुरल्ल संस्थान, वैकियिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्ण चतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु त्रिक, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, स्थिर आदि वह और निर्माण का नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उक्त अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुकृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है । अप्रशस्त वर्ण चतुष्क और उपवातका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुकृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है । इसी प्रकार प्रशस्त प्रकृतियोंका देवगति के साथ विवक्षित प्रकृतिकी मुख्यतासे परस्पर सञ्चिकर्ष कहना चाहिए । किन्तु विवक्षित प्रकृतिके उक्त अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव शेष प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है जो उसी प्रकार बन्ध करता है जिस प्रकर देवगतिकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष कहा है ।

२१. द्वीन्द्रिय जातिके उक्त अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यक्षगति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यक्षगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, त्रस, बादर, अपर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुकृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है । असम्प्राप्तासूपाटिका संहननका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उक्त अनुभागका बन्ध करता है या अनुकृष्ट अनुभागका बन्ध करता है । यदि अनुकृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिए हुए होता है । इसी प्रकार असम्प्राप्तासूपाटिका संहननकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना चाहिए । द्वीन्द्रियजाति और चतुरिन्द्रियजातिकी

आदाव० ओधं । उज्जोवं पहमपुहविभंगो । एवं पंचिदियतिरिक्तव० ३ ।

२२. तस्मेव अपज्ञतेषु छण्णं कम्पाणं ओधं । मिच्छतं ओधं । एवं सोलसक०-
पंचणोक० । इत्थि० उ० बं० मिच्छत्सोलसकिठुभृष्ट० लुहुभृष्टिय० अणंतगुणहीणं ।
हस्स-रदि-अरदि-सोग० सिया अणंतगुणहीणं । एवं पुरिस० । हस्स० उ० बं०
मिच्छ०-सोलसक०-गवुस०-भय-दु० पिय० अणु० अणंतगुणहीणं । रदि० पिय०
तं तु० छडाणपदिदं० । एवं रदीए ।

२३. तिरिक्तव० उ० बं० एइदि०-हुंड०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्तवाणु०-उप०-
थावरादि०४-अथिरादि०पंच० पिय० । तं तु० छडाणपदिदं० । ओरालि०-तेजा०-
क०-पसत्थ०४-अगु०-पियि० पिय० अणंतगुणहीण० । एवं तिरिक्तवगदिभंगो एइदि०-
हुंड०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्तवाणु०-उप०-थावरादि०४-अथिरादिपंच० ।

२४. मणुसगदि० उ० बं० पंचिदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-समचहु०-ओरालि०-
अंगो०-बज्जरि०--पसत्थ०४-मणुसाणु०--अगु०३-पसत्थवि०--तस०४-यिरादिष्ट०-
मुख्यतासे सन्निकर्ष ओधके समान है । चार संस्थान, चार संहनन और आतपकी मुख्यतासे
सन्निकर्ष ओधके समान है । उद्योतकी मुख्यतासे सन्निकर्ष पहली पृथिवीके समान है । इसी
प्रकार अर्थात् सामान्य तिर्यङ्गोंके समान पञ्चेन्द्रिय तिर्यङ्गत्रिकमें जानना चाहिए ।

२२. तिर्यङ्ग अपर्याप्तकोंमें छह कर्मोंका भज्ज ओधके समान है । मिथ्यात्वका भज्ज ओधके
समान है । इसी प्रकार सोलह कषाय और पाँच नोकवायोंकी मुख्यतासे जानना चाहिए । लीवेदके
उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुसाका नियमसे बन्ध
करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुकृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है । हास्य, रति, आरति और शोकका
कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुभागको लिये हुए होता है । इसी प्रकार पुरुषवेदकी
मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । हास्यके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव मिथ्यात्व,
सोलह कषाय, नपुंसकवेद, भय और जुगुसाका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन
अनुकृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है । रतिका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह इसके उत्कृष्ट
अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुकृष्ट
अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित होनेको लिये हुए होता है । इसी
प्रकार अर्थात् हास्यके समान रतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

२३. तिर्यङ्गगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव एकेन्द्रिय जाति, हुण्ड संस्थान,
अप्रशस्त वर्णं चतुर्षक, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वीं, उपवात, स्थावर आदि चार और अस्थिर आदि पाँचका
नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकृष्ट
अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुकृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित
होनेको लिये हुए होता है । औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, प्रशस्त वर्णं चतुर्षक,
अगुरुलघु और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुकृष्ट अनुभागको लिये
हुए होता है । इसी प्रकार तिर्यङ्गगतिके समान एकेन्द्रिय जाति, हुण्ड संस्थान, अप्रशस्त वर्णं-
चतुर्षक, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वीं, उपवात, स्थावर आदि चार और अस्थिर आदि पाँचकी मुख्यतासे
सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

२४. मनुष्यगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक
शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, सच्चतुरस्त्र संस्थान, औदारिक आङ्गोपञ्च, वर्जनमनारात्र संहनन

१. आ० प्रती सोलसक० भयदु० इति पाठः । २ आ० प्रती० अथिरादिल० इति पाठः ।

णिपि० णि० । तं० तु० अद्वाणपदिदं । अप्सत्थ०४—उप० णि० अणंतगुणहीण० । एवं पसत्थाणं सन्वाणं मणुसगदीए सह एकबेकस्स । तं तु० अद्वाणपदिदं । वीइंदियजादि० जोणिणिभंगो । तीइंदि०-चदुरिंदि० ओघं ।

२५. णगोद० उ० बं० पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-पसत्थापसत्थ०४—अगु०४—अप्सत्थवि०-तस०४-दूभग-दुस्सर-अणादे०-णिपि० णि० अणंतगुणहीण० । तिरिक्खव०-मणुस०-चदुसंध०-दोआणु०-उज्जो०-यिराथिर-सुभासुभ-जस-अजस० सिया अणंतगुणहीण० । एवं सादि० । णवरि तिष्णसंव० सिया० अणंतगुणहीण० । एवं खुज्जसंठा० । णवरि दोसंध० सिया० अणंतगुणहीण० । एवं वामण० । णवरि असंपत्तसे प्लाणिष्ट० अणंतगुणहीण० सुविद्विहागर उत्तराज असंष० वीइंदियभंगो । आदाउज्जो० पंचिंदियतिरिक्खवभंगो ।

प्रशस्त वर्ण चतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुविक, प्रशस्त विहायोगति, ऋसचतुष्क, स्थिर आदि छह और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है । अप्रशस्त वर्ण चतुष्क और उपघातका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है । इसी प्रकार सब प्रशस्त प्रकृतियोंका मनुष्यगतिके साथ परस्पर सञ्जिकर्ष कहना चाहिए । किन्तु उनका परस्पर उत्कृष्ट अनुभाग बन्ध भी होता है और अनुत्कृष्ट अनुभागबन्ध भी होता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागबन्ध होता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है । द्वीनिदियजाति की मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जिस प्रकार तिर्यङ्गयोनिनीके कह आये हैं उसी प्रकार यहाँ भी कहना चाहिए । श्रीनिदियजाति और चतुरिन्द्रियजातिकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष ओघके समान है ।

२६. न्यग्रोधसंस्थानके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीवपञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक-शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिकआङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, ऋसचतुष्क, दुर्भग, दुःस्सर, अनादेय और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है । तिर्यङ्गगति, मनुष्यगति, चार संहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और आयशःकीर्तिका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है । इसी प्रकार अर्थात् न्यग्रोधसंस्थानके समान स्वातिसंस्थानकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि यह तीन संहननोंका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है । इसी प्रकार कुब्जक संस्थानकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि यह दो संहननोंका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है । इसी प्रकार वामन संस्थानकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि यह असम्प्राप्तासृपाटिका संहननका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है । यहाँ संस्थानोंकी मुख्यतासे जिस प्रकार सञ्जिकर्ष कहा है उसी प्रकार संहननोंको मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए । मात्र असम्प्राप्तासृपाटिका संहननकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष द्वीनिदिय जातिकी मुख्यतासे कहे गये सञ्जिकर्षके समान है । आतप और उद्योतकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जिस प्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यङ्गोंके कह आये हैं उसी प्रकार यहाँ भी कहना चाहिए ।

२६. अप्पसत्थ० उ० व० तिरिक्ख०-बीईदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुड०-ओरालि०अंगो०-पुम्पथाप्रस्थ०-निरिक्खाण०-अग०४-तस०-दूध०-अणादे०-णिमि० णि० अणतगुणहीणं । डजो०-धिराधिर-सुभासुभ-जस०-अजस० सिया० अणतगुणहीणं० । हुस्सर० णि० । तं तु छटाणपदिदं० । एवं हुस्सर० । एवं अपज्ञताणं सब्बविगलिदि०-पुढ़वि०-आउ०-वणप्फदि-बादरपत्ते०-णियोद० ।

२७. पणुसेसु स्वविगार्ण ओघं । सेसाणं पंचिदियतिरिक्खभंगो ।

२८. देवेसु सत्तण्णं कम्माणं ओघं । तिरिक्ख० उ० व० एईदि०-असंथ०-अप्पसत्थ०-थावर०-हुस्सर० सिया० । तं तु छटाणप० । पंचिदि०-ओरालि०अंगो०-आदाउजो०-तस० सिया० अणतगुणहीणं । ओरालि०-तेजा०-क०-पस्थ०४-अग०३-बादर-पज्जत-पत्ते०-णिमि० णिय० अणतगुणहीणं० । हुड०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाण०-उप०-अधिरादिपंच० णिय० तं तु छटाणपदिदं । एवं तिरिक्खगदिभंगो

२९. अप्रशस्त विहायोगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यक्खगति, हीन्द्रिय-जाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, औदारिकआङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्ण-चतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यक्खगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क, दुर्भग, अनादेय और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है । उयोत, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्तिका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है । हुःस्वरका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है । इसी प्रकार अर्थात् अप्रशस्त विहायोगतिके समान हुःस्वरकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए । इसी प्रकार अर्थात् पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्ख अपर्याप्तिको समान सब अपर्याप्तिक, सब विकलेन्द्रिय, पृथिवीकायिक, जलकायिक, वनस्पतिकायिक बादर प्रत्येक और निगोद जीवोंके जानना चाहिए ।

३०. मतुष्योंमें छपक प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है और शेष प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रियतिर्यक्खोंके समान है ।

३१. देवोंमें सात कर्मोंका भङ्ग ओघके समान है । तिर्यक्खगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव एकेन्द्रिय जाति, असम्प्राप्तासुपाटिका संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, स्थावर और हुःस्वरका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है । पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिकआङ्गोपाङ्ग, आतप, उयोत और त्रसका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है । औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, प्रशस्त वर्ण चतुष्क, अगुरुलघुश्चिक, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुभागको लिये हुए होता है । हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यक्खगत्यानुपूर्वी, उपघात और अस्थिर आदि पाँचका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है । इसी प्रकार तिर्यक्खगतिके समान हुण्ड संस्थान, अप्रशस्त वर्ण चतुष्क, तिर्यक्खगत्यानुपूर्वी, उपघात और अस्थिर आदि पाँचकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए । किन्तु इनमेंसे किसी एक प्रकृतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव इन्हींमेंसे

हुंड०-अप्पसत्य०४-तिरिक्खाणु०-उप०अथिरादिपंच० । मणुसगदिसंजुलाओ पसत्थाओ
णिरखभंगो । एङ्गदि०-आदाव-थाकरे ओवं । चदूसंठा०-चदूसंघ० ओघं ।

२६. असंप उ० वं० तिरिक्ख०-हुंडसं०-अप्पस०४-तिरिक्खाणु०-उप०-
अप्पस०-अधिरादिष्ठ० णि० । तं तु० । पंचिदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि-
अंगो०-पसत्थ०४-अगु०३-तस०४-णिमि० णि० अण्टगुणहीण' । उज्जो० सिया०
अण्टगुणहीण । एवं अप्पसत्थविहायगदी । दुस्सर०-उज्जोव० पदमपुढविभंगो ।

३०. भद्रणवासिय-वाणवे०-जोदिसि०-सोधम्मीसाणं सत्त्वं ओघं । तिरिक्ख
गदि० उ० वं० एइदि०-हुँड०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-उप०-थावर०-अथिरादिपंच
णियमा । तं तु० । ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थ०४-अगु०३-बादर-पज्जत-पत्तेग०-
णिमि० णि० अण्टतगु० । आदाड० सिया० अण्टतगुणहीण० ।

३१. असंप० उ० ब० तिरिक्ख०-पंचि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंद०-ओरालि०-

शेष प्रकृतियों का नियम से बन्ध करता है भाग्योदयकृष्ट अनुभवकर्म कथा रुपताकृष्ट अनुसृष्ट व्याप्तिगता का बन्ध करता है। यदि अनुकृष्ट अनुभाग का बन्ध करता है तो वह छद्द स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। मनुष्यगति संयुक्त प्रशास्त्र प्रकृतियों का भङ्ग जिस प्रकार नरकगतिमें कहु आये हैं उसी प्रधार यहाँ भी कहना चाहिए। एकेन्द्रिय जाति, आतप और स्थावरकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष ओघके समान हैं। चार संस्थान और चार संहननकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष ओघके समान हैं।

२६. असम्प्राप्तास्तु पादिका संहननके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यङ्गगति, हुंडसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वी, उपवास, अप्रशस्त चिह्नयोगति, और अस्थिर आदि छहका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनु-कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित द्वानिको लिये हुए होता है। पञ्चोन्द्रियजाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कामण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, त्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुकृत्य अनुभागको लिये हुए होता है। उद्योतका कदाचिन् बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। इसी प्रकार अप्रशस्त चिह्नयोगतिकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए। दुःस्वर और उद्योतकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष प्रथम पूर्यिबीके समान जानना चाहिए।

३०. भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी और सौधर्म-ऐशान तकके देवोंमें सात कर्मोंका भंग श्रोषके समान है। तिर्यक्कगति, एकेन्द्रियजाति, हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त बर्णभुषक, तिर्यक्कगतवानु-पूर्वी, उपवात, स्थावर और अस्थिर आदि पाँचका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह ज्ञात अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुकृष्ट अनु-भागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतिरहानिको लिये हुए होता है। औदारिक शरीर, सैजसशरीर, कार्मण शरीर, प्रशस्त बर्णभुषक, अगुस्तुषुक्रिक, बादर, पर्याप्ति, प्रत्येक और निर्माण का नियमसे बन्ध करता है जो नियमसे अनन्तगुण हीन अनुकृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है। आतप और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुण हीन अनुभागको लिये हुए होता है।

३१. असम्प्राप्तासृष्टिका सीहननके उल्लुष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्थजगति, पचेन्द्रियजाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्डसंस्थान, औदारिक

अंगो०-पसत्थापसत्थवण्ण०४-[तिरिक्खाणु०-] अगु०४-तस०४-अथिरादिपंच०-
णिग्नि० णिय० अण्टमुणहीण॑ । उज्जो० सिया० अण्टमुणहीण॑ । अप्पसत्थ०-
दुस्सर० णिय० । तं तु० । एवं अप्पसत्थवि०-दुस्सर० । सेसं देवोघं ।

३२. सणककुमार याव सहस्रार ति विदियसुद्विभंगो । आणद याव णव-
गेवज्ञा ति सो चेव भंगो । णवरि तिरिक्खगदिदुर्ग उज्जोवं वज्ञ । अणुदिस याव सव्वद्व
ति छण्णं कम्माणं ओघं । अप्पञ्चकखाणकोध० उ० व० एकारसकसाय-पुरिस०-
अरदि-सोग-भय-दु० णिय० । तं तु छटाणपदिद० । एवमरणमण्णाण॑ ।
तं तु० ।

३३. हस्स० उ० व० वारसक०-पुरिसवे०-भय-दु० णिय० अण्टमुणहीण॑ ।
रदि० णिय० । तं तु० । एवं रदीए० । मणुसगदि० देवोघं । एवं पसत्थाओ
सव्वाओ ।

आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वी॑, अगुरुलघु चतुष्क,
त्रसचतुष्क, अस्थिर आदि पाँच और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तमुणे
हीन अनुभागको लिये हुए होता है । उथोतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तमुणे हीन
अनुभागको लिये हुए होता है । अप्रशस्त विहायोगति और दुःस्वरका नियमसे बन्ध करता
है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता
है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता
है । इसी प्रकार अर्थात् असम्माप्तासुपाटिका संहननके समान अप्रशस्त विहायोगति और
दुःस्वरकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए । शेष भङ्ग सामान्य देवोंके समान है ।

३२. सनकुमारसे लेकर सहस्रार कल्प तकके देवोंमें दूसरी पृथिवीके समान भङ्ग है ।
आनन्द कल्पसे लेकर नौ वैवेयक तकके देवोंमें वही भङ्ग है । किन्तु इतनी विशेषता है कि तिर्यङ्ग-
गतिद्विक् और उथोतको छोड़कर सञ्जिकर्ष जानना चाहिए । अनुदिशसे लेकर सवर्थसिद्धि तकके
देवोंमें छह कर्मोंका भंग ओघके समान है । अप्रत्याख्यानाधरण कोधके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध
करनेवाला जीव घ्यारह कथाय, पुरुषवेद, अरति, शौक, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्ध करता
है । किन्तु वह उनका उत्कृष्ट अनुभागबन्ध भी करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागबन्ध भी करता
यदि अनुत्कृष्ट अनुभाग बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है इसी
प्रकार इन प्रकृतियोंका परस्पर सञ्जिकर्ष होता है जो उत्कृष्ट अनुभाग बन्धरूप भी होता है । और
अनुत्कृष्ट अनुभागबन्धरूप भी होता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागबन्धरूप होता है तो वह छह स्थान
पतित हानिको लिये हुए होता है ।

३३. हास्यके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव घारह कथाय, पुरुषवेद, भय और
जुगुप्साका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तमुणे हीन अनुभागको लिये हुए होता है । रतिका
नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभाग
का भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह अनन्तमुणे हीन
अनुभागको लिये हुए होता है । इसी प्रकार अर्थात् हास्यके समान रतिकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष
जानना चाहिए । मनुष्यगतिकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष सामान्य देवोंमें जिस प्रकार कह आये हैं उस
प्रकार जानना चाहिए । इसी प्रकार अर्थात् मनुष्यगतिके समान सब प्रशस्त प्रकृतियोंकी मुख्यतासे
सञ्जिकर्ष जानना चाहिए ।

३४. अप्सत्थवणा० उ०^१ व० मणुस०-पंचिदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-
समचदु०-ओरालि०-अंगो०-बज्जरि०-पसत्थ०४-पणुसाणु०-अगु०-पसत्थवि०-तम०४-
यागदशक :— ओवार्ट औ सुविधिसामान जी गडाराज
सुभग-सुस्सर-आदे०-एग्मि० एग्मि० व० अणंतगुणहीणं० । अप्सत्थगंध०३-उप०-
अथिर-अमुभ-अजस० एग्मि० । तं तु छटाणपदिद० । एवमणामणस्स । तं तु० ।
तिथ० सिया० अणंतगुणहीणं० ।

३५. एईदिएमु सत्तरणं कम्माणं पंचिदि०तिरि०अपज्ज०भंगो । पंचिदि० उ०
व० तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु० सिया अणंतगुणहीणं० । मणुसग०-मणुसाणु०-बज्जो०
सिया० । तं तु० । ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०-बज्जरि०-पसत्थ०४-
अगु०३-पसत्थ०-तम०४-थिरादिक्ष०-एग्मि० एग्मि० तं तु० । अप्सत्थ०४-
उप० एग्मि० अणंतगुणहीणं० । एवं पंचिदियभंगो पसत्थाणं सञ्चारण । मणुस०-
मणुसाणु०बज्जरि०सेसाणं पंचिदि०तिरिक्खअपज्जतभंगी । एवं सञ्चएईदियाणं० ।

३६. अप्रशस्त वर्णके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव मनुष्यगति पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्र्यमनाराचसंहनन, प्रशस्त वर्णचतुर्षुक, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुर्षुक, सुभग, सुस्त्रवर, आदेय और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुभागको लिये हुए होता है। अप्रशस्त गन्धआदि तीन, उपधात, अस्थिर, अमुभ और अथशकीर्तिका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। इसी प्रकार इन अशुभ प्रकृतियोंकी मुख्यतासे परस्पर सञ्चिकर्ष जानना चाहिए। किन्तु इनमेंसे किसी एक प्रकृतिके उत्कृष्ट अनुभाग बन्ध करनेवाला जीव उन्हींमेंसे शेष प्रकृतियोंका उत्कृष्ट अनुभाग बन्ध भी करता है और अनुत्कृष्ट अनुभाग बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभाग बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। तीर्थद्वार प्रकृतिका कदाचिन् बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुभागको लिये हुए होता है।

३७. एकेन्द्रियोंमें सात कर्मोंका भज्ज पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्ष अपर्याप्तिकोंके समान हैं। पञ्चेन्द्रिय जातिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यक्षगति और तिर्यक्षगत्यानुपूर्वीका कदाचिन् बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुभागको लिये हुए होता है। मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उद्योतका कदाचिन् बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है। औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्र्यमनाराचसंहनन, प्रशस्त वर्णचतुर्षुक, अगुरुलघु-त्रिक, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुर्षुक, स्थिर आदि छह और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभाग बन्ध भी करता है और अनुत्कृष्ट अनुभाग बन्ध भी करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागबन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है। अप्रशस्त वर्णचतुर्षुक और उपधातका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुभागको लिये हुए होता है। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय जातिके समान सब प्रशस्त प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना चाहिए। मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और वज्र्यमनाराचसंहनन तथा शेष प्रकृतियोंकी मुख्यतासे

तेऽवाउका० एङ्द्रियभंगो० । गवरि तिरिक्खगदि०-तिरिक्खाणु० धुवभंगो० । पसत्थाणं उज्जो० सिया० । तं तु० ।

३६. पंचिदि०-तस०२ ओषधभंगो० । एवं पंचयण०-पंचवचि०-कायजोगि०-कोषादि४-अचक्षु०-भवसि०-सण्णि-आहारग त्ति । ओरालि० मणुसभंगो० ।

३७. ओरालियमि० सत्तण्णं कम्माण्णं अपज्जतभंगो० । तिरिक्ख०-चदुजा०-पंचसंठा०-पंचसंध०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-उप०-आदाउज्जो०-अप्पसत्थ०-भाव-रादि०४-अथिरादि०-पंचिदियतिरिक्खअपज्जतभंगो० । मणुसगदिपंचमं पंचि०-तिरिक्खभंगो० । देवगदि उ० वं० पंचिदि०-वेडविद०-तेजा०-क०-समचदु०-वेडविद० अंगो०-पसत्थ०४-देवाणु०-अगु०३-पसत्थ०-तस०४-थिरादिछ०-णिमि० णिय० । तं तु० । अप्पसत्थ०४-उप० छि० अणंतगुणहीणं० । तित्थ० सिया० । तं तु० । एवमेदाओ० एकमेकस्स तं तु० ।

३८. वेडवियका०-वेडवियमि० देवोदं । गवरि उज्जो० मूलोदं । आहार०-सन्निकर्ष पंचेन्द्रिय तिर्यङ्ग अपर्याप्तिकोै के समान है । इसी प्रकार सब एकेन्द्रियोंके जानना चाहिए । अग्निकायिक और वायुकायिक जीवोंमें एकेन्द्रियोंके समान भज्ज है । इतनी विशेषता है कि इनमें तिर्यङ्गति और तिर्यङ्गत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष धुवमज्जके समान है । प्रशस्त प्रकृतियों और उद्योतका कदाचित् बक्षगत्त्वात् है, उक्तुव्यहा॒ त्तु॒क्षु॒क्षु॒म्भु॒म्भु॒भी॒हृ॒हृ॒करता है और अनुकृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुकृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह वह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है ।

३९. पंचेन्द्रियद्विक और त्रसद्विक जीवोंमें ओषधके समान भज्ज है । इसी प्रकार पाँचों मनोयोगी, पाँचों वन्दनयोगी, काययोगी, क्रोधादि चार काययवाले, अचलुर्दर्शनी, भव्य, संही और आहारक जीवोंके जानना चाहिए । औदारिककाययोगी जीवोंका भज्ज मनुष्योंके समान है ।

४०. औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें सात कर्मोंका भंग अपर्याप्तिकोै के समान है । तिर्यङ्गति, चार जाति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यङ्गत्यानुपूर्वी, उपघात, आतप, उथोत, अप्रशस्त विहायोगति, स्थावर आदि चार और अस्थिर आदि छद्दका भंग पंचेन्द्रिय तिर्यङ्ग अपर्याप्तिकोै के समान है । मनुष्यगतिपञ्चकका भंग पंचेन्द्रिय तिर्यङ्गोंके समान है । देवगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पंचेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्त संस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुत्रिक, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि वह और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागबन्ध भी करता है और अनुकृष्ट अनुभागबन्ध भी करता है । यदि अनुकृष्ट अनुभागबन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है । अप्रशस्त वर्णचतुष्क और उपश्रातका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुभागको लिये हुए होता है । तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागबन्ध भी करता है और अनुकृष्ट अनुभागबन्ध भी करता है । यदि अनुकृष्ट अनुभागबन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है । इसी प्रकार इन प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

४१. वैक्रियिककाययोगी और वैक्रियिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें सामान्य देवोंके समान

१. आ० प्रती थिरादिछ० हति पाठः ।

आहारमि० छर्णं कम्पाणं सव्वद०भंगो॑। क्रोधसंज० उ० वं० तिष्णसंज०-पुरिस०-
अरदि॒-सोग॒-भय०-दु० णिय०। तं तु० ! एवमेकमेकस्स॑। तं तु०।

३६. हस्स॑ उ० वं० चदुसंज०-पुरिस०-भय०-दु० णि० अणंतरुणहीण॑।
रदि॒ णि०। तं तु०। एवं रदीए॑।

४०. देवगदि॒० उ० वं० पंचिदि॒०-वेऽन्वित॒०-तेजा॒०-क०-समचदु॒०-वेऽन्वित॒०-
अंगो॑-प्रसत्थवण्ण॑४-देवाणु॑-अगु॑३-प्रसत्थ॑-तस॑४-पिरादिद्व॑-णिमि॒० णि॒०। तं
तु०। अप्पसत्थवण्णमुख्यार्थप॑४ विविहार्यज्ञंतरुणहीणं॑४। तित्य॑ सिथा॑। तं तु०।
एवं प्रसत्थाओ॑ एकमेकस्स॑। तं तु०।

४१. अप्पसत्थवण्ण॑० उ० वं० देवगदि॒०-पंचिदि॒०-वेऽन्वित॒०-तेजा॒०-क०-

भङ्ग॑ है। इतनी विशेषता है कि उद्योतका भंग मूलोयके समान है। आहारकाययोगी और
भङ्ग॑ है। इतनी विशेषता है कि उद्योतका भंग मूलोयके समान है। क्रोध संज्वलनके
आहारकमित्रकाययोगी जीवोंमें छह कर्मोंका भङ्ग सर्वार्थसिद्धिके समान है। क्रोध संज्वलनके
उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तीन संज्वलन, पुरुषवेद, अरति, शोक, भय और
जुगुप्साका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और
अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह
स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है। इसी प्रकार इन प्रकृतियोंका परस्पर सञ्जिकर्ष जानना
चाहिए। किन्तु इनमेंसे किसी एकके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव शेषके उत्कृष्ट
अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट
अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है।

३६. हास्यके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार संज्वलन, पुरुषवेद, भय और
जुगुप्साका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तरुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है।
अनन्तरुणे नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागबन्ध भी करता है और अनुत्कृष्ट अनु-
रतिका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागबन्ध भी करता है और अनुत्कृष्ट अनु-
भाग बन्ध भी करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागबन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित
हानिको लिये हुए होता है। इसी प्रकार रतिकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए।

४०. देवगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव एवेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर,
तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरल संस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क,
देवगत्यात्मुपूर्वी, अगुरुत्तुत्रिक, प्रशस्त विद्वायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह और निर्माणका
नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभाग
का भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित
हानिको लिये हुए होता है। अप्रशस्त वर्णचतुष्क और उपधातका नियमसे बन्ध करता है जो
अनन्तरुणे हीन अनुभागको लिये हुए होता है। तीर्थद्वार प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है।
किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है।
किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है।
यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है।
इसी प्रकार प्रशस्त प्रकृतियोंका परस्पर सञ्जिकर्ष जानना चाहिए। किन्तु इनमेंसे किसी एकके
उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव इन्हीमेंसे शेषका उत्कृष्ट अनुभागबन्ध भी करता है और
अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध भी करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागबन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित
हानिको लिये हुए होता है।

४१. अप्रशस्त वर्णके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव देवगति, एवेन्द्रिय जाति,

सपचदु० चेडल्वि० अंगो०-पसत्थ०४-देवाणु०-अगु०३-पसत्थ०-तसे०४-सुभग-सुस्सर-आदे०-णिमि० णि० अणंतगुणहीण०। अप्पसत्थमंध०३-उप०-अथिर-अमुभ-अजस० णि०। तं हु०। तित्थ० सिया० अणंतगुणहीण०। एवं अप्पसत्थमंध०३-[उप०-] अथिर-अमुभ-अजस०।

४२. कम्मइ० सत्तण्ण कम्माणं ओघं। तिरिक्खब० उ० व० एईदि०-असंप०-अप्पसत्थवि०-थावर-मुहुम-अपज्ज०-साधार०-दुस्सर० सिया०। तं हु०। पंचि०-ओरालि०-अंगो०-पर०-डस्सा०-आदाउज्जो०-तस०४ सिया० अणंतगुणहीण०। ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थ०४-अगु०-णिमि० णिय० अणंतगु०। हुंड०-अप्पसत्थ०४-तिरि-क्खाणु०-उप०-अथिरादिपंच० णि०। तं हु०। एवं तिरिक्खबगदिभंगो हुंड०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-उप०-अथिरादिपंच०। मणुसग० उ० व० णिरयोघं। एवं ओरालि०-ओरालि०-अंगो०-बज्जरि०-मणुसाणु०। देवगदि०४ ओरालियमिस्स०भंगो।

वैक्षिकिशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरल्ल संस्थान, वैक्षिकिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, आगुरुलघुञ्चिक, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय और निर्मणिका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुकूल अनुभागको लिये हुए होता है। अप्रशस्त गन्ध तीन, उपधात, अस्थिर, अशुभ और अथशःकीर्तिका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकूल अनुभागका गार्भाच्छन्ध करता है। यदि अनुकूल अनुभागका गार्भाच्छन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है। तीर्थक्षुर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुकूल अनुभागको लिये हुए होता है। इसी प्रकार अर्थात् अप्रशस्त वर्णके समान अप्रशस्त गन्ध आदि तीन, उपधात, अस्थिर, अशुभ और अथशःकीर्तिकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना चाहिए।

४२. कार्मणकाययोगी जीवोंमें सात कर्मोंका भज्ज ओघके समान है। तिर्यङ्गगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव एकेन्द्रिय जाति, असम्भासासुपाटिका संदर्भ, अप्रशस्त विहायोगति, स्थावर, सूद्धम, अपर्याप्ति, साधारण और दुःस्वरका कदाचित् बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकूल अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुकूल अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है। पंचेन्द्रिय जाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, परघात, उच्छ्वास, आतप, उद्योत और त्रसचतुष्कका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुकूल अनुभाग रूप होता है। औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, आगुरुलघु और निर्मणिका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुकूल अनुभाग रूप होता है। हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वी, उपधात और अस्थिर आदि पाँचका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकूल अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुकूल अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिरूप होता है। इसी प्रकार तिर्यङ्गगतिके समान हुण्डक संस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वी, उपधात और अस्थिर आदि पाँचकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना चाहिए। मनुष्यगतिके उत्कृष्ट अनुभागबन्धकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष सामान्य नारकियोंके जिसप्रकार कह आये हैं उस प्रकार जानना चाहिए। इसी प्रकार औदारिकशरीर, औदारिकआङ्गोपाङ्ग, षष्ठ्यमनाराच संदर्भ, और मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी

४३. पंचिदि० उ० वं० मणुसग०-देवग०-दोसरी०-दोअंगो०-बडजरि०-दो-
आण०-तित्थय० सिया० । तं तु० । तेजा०-क०-समचदु०-पसत्थ०४-अगु०३-पसत्थ०-
तस०४-थिरादिक्ष-०णिमि० णि० । तं तु० । अप्पसत्थ०४-उप० णिय० अणंतगु० ।
एवं पंचिदियभंगो पसत्थाणं ।

४४. एङ्द्रिदि० उ० वं० तिरिक्खवग०-हुँड०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-उप०-
थावर-अथिरादिपंच० णि० । तं तु० । ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थ०४-अगु०-णिमि०
णि० अणंतगु० । पर०-उस्सा०-आदाउज्जो०-बादर-पज्जत०-पन्ने० सिया० अणंत-
मुख्यहीण० । सुहुम०-अपज्ज०-साधार० सिया० । तं तु० । एवं थावर० ।

४५. सुहुम० उ० वं० तिरिक्ख०-एङ्द्रिदि०-हुँड०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-
उप०-थावर-अपज्ज०-साधार०-अथिरादिपंच० णि० । तं तु० । ओरालि०-तेजा०-क०-
मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना चाहिए । देवगति चतुष्ककी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष औदारिकमिश्रकाययोगी
जीवोंके जिसप्रकार कह आये हैं उसप्रकार जानना चाहिए ।

४६. पञ्चेन्द्रिय जातिके उल्कुष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव मनुष्यगति, देवगति,
दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, बज्रार्दभनाराच संहनन, दो आनुपूर्वी और तीर्थद्वार प्रकृतिका कदाचित्
बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो उल्कुष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुल्कुष्ट अनु-
भागका भी बन्ध करता है । यदि अनुल्कुष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित
द्वानिको लिये हुए होता है । तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्संस्थान, प्रशस्त वर्णचतुष्क,
अगुरुलघुत्रिक, प्रशस्त विद्यायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह और निर्माणका नियमसे बन्ध
करता है । किन्तु वह उल्कुष्ट अनुभाग का भी बन्ध करता है और अनुल्कुष्ट अनुभागका भी बन्ध
करता है । यदि अनुल्कुष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित द्वानिको लिये हुए
होता है । अप्रशस्त वर्णचतुष्क और उपयातका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन
अनुल्कुष्ट अनुभागको लिये हुए होता है । इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय जातिके समान प्रशस्त प्रकृतियों
की मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना चाहिए ।

४७. एकेन्द्रिय जातिके उल्कुष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यङ्गगति, हुण्डसंस्थान,
अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वी, उपघात, स्थावर और अस्थिर आदि पाँचका नियमसे
बन्ध करता है । किन्तु वह उल्कुष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुल्कुष्ट अनुभागका भी
बन्ध करता है । यदि अनुल्कुष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित द्वानिको लिये
हुए होता है । औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु और
निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुल्कुष्ट अनुभागको लिये हुए होता है ।
परघात, उच्छ्वास, आतप, उद्योग, बादर, पर्याप्त और प्रत्येकका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्त-
गुणे हीन अनुल्कुष्ट अनुभागको लिये हुए होता है । सूदम, अपर्याप्त और साधारणका कदाचित्
बन्ध करता है । किन्तु वह उल्कुष्ट अनुभाग बन्ध भी करता है और अनुल्कुष्ट अनुभाग बन्ध भी
करता है । यदि अनुल्कुष्ट अनुभाग बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित द्वानिको लिये हुए
होता है । इसी प्रकार अर्थात् एकेन्द्रिय जातिके समान स्थावर प्रकृतिकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष
जानना चाहिए ।

४८. सूक्ष्म प्रकृतिके उल्कुष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यङ्गगति, एकेन्द्रिय जाति,
हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वी, उपघात, स्थावर, अपर्याप्त, साधारण और

पसत्य०४-अगु०-णियि० णिय० अणंतगुणहीणं । एवं अपज्ञ०-साधार० । सेसं ओघं ।
तिरिक्ष०-मणुस० एइंदि० सुहुम०-अपज्ञत०-साधारणसंजुत्तसंकिलेस्स ऐरइय० पंचि-
दिवसंजुत्तसंकिलेस्स ति ।

४६. इतिथवेदेसु सत्तण्णं कम्माणं ओघं । णिरयग० उ० व०' पंचिदियादि-
पसत्याओ ओघं । हुंड०-अप्पसत्य०४--णिरयाणु०-उप०-अप्पसत्य०-अधिरादिक्ष०
णिय० । ते तु० । एवं णिरयाणु०-अप्पसत्यवि०-दुस्सर० ।

४७. तिरिक्ष० उ० व० एइंदि०-हुंड०-अप्पसत्य०४-तिरिक्षवाणु०-उप०-
थावर०-अधिरादिपञ्च० णिय० । ते तु० । ओरालियादिपगदीओ देवोघं । एवं
एइंदि०-[हुंड०-अप्पसत्य०४-]तिरिक्षवाणु०-[उप०-]थावर०-[अधिरादिपञ्च०] । तिष्ण
जादि० पंचि०तिरिक्षवजोणिणिर्भंगो ।

४८. सेसाणं पगदीणं ओघं । णवरि असंप० उ० व० तिरिक्ष०-ओरालि०-तेजा०-
आस्थर आदि पौचका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है
और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह
छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है । औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर,
प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनु-
त्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है । इसी प्रकार अर्थात् सूक्ष्म प्रकृतिके समान अपर्याप्त और
साधारण प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए । शेष ओघके समान है । तिर्यक्ष और
मनुष्य जीव सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारण संयुक्त सबलेश परिणामोंसे एकेन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट
अनुभागबन्ध करते हैं और पञ्चेन्द्रिय जाति संयुक्त सबलेश परिणामोंसे नरकगतिका उत्कृष्ट अनु-
भागबन्ध करते हैं ।

४९. स्त्रीवेदी जीवोंमें सात कर्मोंका भङ्ग ओघके समान है । नरकगतिके उत्कृष्ट अनुभागका
बन्ध करनेवाले जीवके पञ्चेन्द्रिय जाति आदि प्रशस्त प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है । वह
हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, नरकगत्यानुपूर्वी, उपवात, अप्रशस्त विहायोगति और अस्थिर
आदि छहका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागबन्ध भी करता है और अनुत्कृष्ट
अनुभागबन्ध भी करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागबन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको
लिये हुए होता है । इसी प्रकार अर्थात् नरकगतिके समान नरकगत्यानुपूर्वी, अप्रशस्त विहायो-
गति और हुण्डस्वरकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए ।

५०. तिर्यक्षगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव एकेन्द्रिय जाति, हुण्डसंस्थान,
अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यक्षगत्यानुपूर्वी, उपवात, स्थावर और अस्थिर आदि पौचका नियमसे
बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी
बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये
बन्ध करता है । औदारिक शरीर आदि प्रकृतियोंका सञ्जिकर्ष जिस प्रकार सामान्य देवोंमें कह
हुए होता है । उसी प्रकार यहाँ कहना चाहिए । इसी प्रकार एकेन्द्रिय जाति, हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त
वर्णचतुष्क, तिर्यक्षगत्यानुपूर्वी, उपवात, स्थावर और अस्थिर आदि ५ की मुख्यतासे सञ्जिकर्ष
जानना चाहिए । तीन जातिकी मुख्यता से सञ्जिकर्ष पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्ष योनिनीके विस प्रकार कह
आये हैं उस प्रकार है ।

५१. शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि असम्भासासृपदिका संह-

क०-हुंड०-ओरालि०अंगो०-पसत्थापसत्थ०४-तिरिक्तवाणु०-अगु०-उप०-तस०४-अधि-
रादिपंच-णिभि० णिय० अणंतगु० । वे० सिया० तं तु० । पंचि०-पर०-उस्सा०-उज्जो०-
अप्स०-पञ्जत्तापञ्ज०-दुस्सर० सिया० अणंतगुण० । तिरिक्त-मणुसिणीओ वेईदिय-
संजुनं संकिलेस्सं ति । आदाउज्जो० देवोघं ।

४६. चदुसंठा०-चदुसंध०-अप्सत्थ०-दुस्सर० ओघं । सुहुय० उ० वं०
तिरिक्त०-एईदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-पसत्थापसत्थ०४-तिरिक्तवाणु०-अगु०-
उप०-थावर-अथिरादिपंच०-णिभि० णिय० अणंतगुणहीण० । अपञ्जत्त-साधार० णिय० ।
तं तु० । एवं अपञ्जत्त-साधार० ।

५०. पुरिसेसु ओघं ।

५१. णयुंसगे सत्तण्ण कम्माण्ण ओघं । णिरयगदि० उ० वं० पंचिदियादिपगदीओ
सव्वाओ ओघं । हुंड-अप्सत्थवण्ण०४--णिरयाणु०-उप०-अप्सत्थ०-अथिरादिच्छ०
णिय० । तं तु० । एवं णिरयाणप्र० ।

यम्बद्धीलः—आदाय जी दुखिक्षिण्यागत जी म्हाटाव

ननके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यक्षगति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कर्मण शरीर, हुंड संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यक्षगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, चैसचतुष्क, अस्थिर आदि पाँच और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुकृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है । द्वीन्द्रिय जातिका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो उत्कृष्ट अनुभागबन्ध भी करता है और अनुकृष्ट अनुबन्ध भी करता है । यदि अनुकृष्ट अनुबन्ध करता है तो वह नियमसे छह स्थानपतित हानिरूप होता है । पञ्चेन्द्रिय-जाति, परघात, चच्चास, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, पर्याप्त, अपर्याप्त और दुःखरका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुकृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है । तिर्यक्षयोनिनी और मनुष्यनी संबलेश परिणामयुक्त द्वीन्द्रिय जातिका बन्ध करती है । आतप और उद्योतका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है ।

४८. चार संस्थान, चार संहनन, अप्रशस्त विहायोगति और दुःखरका भङ्ग ओघके समान है । सूक्ष्म प्रकृतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यक्षगति, एकेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कर्मणशरीर, हुण्ड संस्थान, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यक्षगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, स्थावर, अस्थिर आदि पाँच और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुकृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है । अपर्याप्त और साधारण का नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभाग बन्ध भी करता है और अनुकृष्ट अनुभाग बन्ध भी करता है । यदि अनुकृष्ट अनुभागबन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है । इसी प्रकार अपर्याप्त और साधारणकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना चाहिए ।

५०. पुरुषवेदी जीवोंमें ओघके समान भङ्ग है ।

५१. नपुंसकवेदी जीवोंमें सात कर्मोंका भङ्ग ओघके समान है । नरकगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवके पञ्चेन्द्रिय जाति आदि सब प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है । वह हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, नरकगत्यानुपूर्वी, उपघात, अप्रशस्त विहायोगति और अस्थिर आदि छहका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागबन्ध भी करता है और अनुकृष्ट अनुभाग बन्ध भी करता है । यदि अनुकृष्ट अनुभाग बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है । इसी प्रकार नरकगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना चाहिए ।

५२. तिरिक्खगदि० उ० वं० पंचिदियादिपसत्थाओ अणंतगुणहीण० । हुँड०-असंप०-अप्पसत्थ०४—तिरिक्खवाणु०-उप०-अप्पसत्थ०-अथिरादिक्ष० णिय० । तं तु बहुणपदिदं० । एवं असंप०-तिरिक्खवाणु० ।

५३. एईदि० उ० वं० थावर-सुहुम-अपज्जत-साधार० णिय० । तं तु० । सेसं-णिय० अणंतगुणहीण० । एवं एईदियभंगो थावर-सुहुम-अपज्जत-साधार० । सेसं ओघं ।

५४. अवगदवेदे० आभिणि० उ० वं० चदुणा० णि० वं० णि० उक्ससं० । एवं चदुणाणा०-चदुदंसणा०-चदुसंज०-पंचतरा० । कोधादि०४ ओघं ।

५५. मदि०-सुद०-विभंग०-मिच्छादि० ओरालि० उ० वं० तिरिक्खग०-तिरिक्खवाणु० सिया० अणंतगुणहीण० । मणुसगदिदुग-उज्जो० सिया० । तं तु० । पंचिदि०-तेजा०-क०-समचदु०-पसत्थापसत्थ०४—अगु०४—एसत्थ०--तस०४—थिरादिक्ष०-णिमि० णिय० अणंतगु० । ओरालि०अंगो०-वज्जरि० णिय० । तं तु० । एवं ओरालि०अंगो०-

५२. तिर्यङ्गगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति आदि प्रशस्त प्रकृतियोंका अनन्तगुणा हीन अनुकृष्ट अनुभाग बन्ध करता है । हुण्ड संस्थान, असम्प्राप्तास्तु-पाठिका संहनन, अप्रशस्त वर्ण चतुष्क, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वी, उपधात, अप्रशस्त विहायोगति और अस्थिर आदि छहका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुकृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है । इसी प्रकार असम्प्राप्तास्तुपाठिका संहनन और तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए ।

५३. एकेन्द्रिय जातिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव स्थावर, सूदम, अपर्याप्त और साधारणका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुकृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है । शेष प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुभागको लिये हुए होता है । इसी प्रकार एकेन्द्रिय जातिके समान स्थावर, सूदम, अपर्याप्त और साधारणकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए । शेष भज्ज ओवके समान है ।

५४. अपगतवेदी जीवोंमें आभिनिकोधिकज्ञानावरणके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरणका नियमसे बन्ध करता है जो नियमसे उत्कृष्ट अनुभागको लिये हुए होता है । इसी प्रकार चार ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्ञलन और पाँच अन्तरायकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए । कोधादि चार क्षयवाले जीवोंमें ओघके समान भज्ज है ।

५५. मत्यज्ञानी, श्रुतज्ञानी, विभज्ञानी और मिथ्यादृष्टि जीवोंमें औदारिक शरीरके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यङ्गगति और तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वीका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुभागको लिये हुए होता है । मनुष्यगतिद्विक और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो उत्कृष्ट अनुभागबन्ध भी होता है और अनुकृष्ट अनुभागबन्ध भी होता है । यदि अनुकृष्ट अनुभागबन्ध होता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है । पञ्चेन्द्रियजाति, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरल संस्थान, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, ध्रस चतुष्क, स्थिर आदि छह और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुभागको लिये हुए

बज्जरि० | सेसाणं ओघं आहारदुगं तित्थयरं च वज्जं | णवरि देवगदि० उ० ब० जस० णिय० | तं तु० | एवं सञ्चाणं पसत्थाणं ।

५६. आभिणि०-सुद०-ओधि० सत्तणं क० उक्तस० अणुदिसभंगोै॑ । अथ-सत्थवण्ण० उ० ब० मणुसग०-देवग०-ओरालि०-वेऽन्वित०-[ओरालि०अंगो०-वेऽन्वित०-पार्गद्वार्कि०-आचार्यं श्री सुतिविसागरं जी य्हाराज्-अंगो०-] वज्जरि०-दाआणु०-तित्थयै॒ सिया० अणतगु० | पौच्छियादिपसत्थाओ॒ णिय० अणतगु० | अप्यसत्थगंध०३-उप०-अथिर-असुभ-अजस० णिय० | तं तु० | एवं एदाओ॒ एकमेकसस॒ । तं तु० | सेसं ओघं । एवं ओधिदंस॒-सम्मादि०-खद्ग॒-वेदग॒-उवसग॒-सम्मामिच्छादि॒ ।

५७. मणपञ्जव॒ खद्याणं ओघं । सेसाणं आहारका॒भंगो॑ । एवं संजद-सामाइ॒-छोदोव॒ । परिहारे आहारकायजोगिभंगो॑ । णवरि आहारदुगं देवगदिभंगो॑ । णवरि होता है । औदारिक आङ्गोपाङ्ग और वर्जर्वभनाराच संहननका॒ नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागवन्ध भी करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागवन्ध भी करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागवन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है । इसी प्रकार औदारिक आङ्गोपाङ्ग और वर्जर्वभनाराच संहननकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है । किन्तु आहारकद्विक और तीर्थङ्कर प्रकृतियोंको छोड़ करना चाहिए । इतनी विशेषता है कि देवगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव यशःकीर्तिका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु उसका उत्कृष्ट बन्ध भी करता है और अनुत्कृष्ट बन्ध भी करता है । यदि अनुत्कृष्ट बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है । इसी प्रकार सब प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए ।

५८. आभिनिवोधिकज्ञानी॒, श्रुतज्ञानी॒ और अवधिज्ञानी॒ जीवोंमें सात कर्मोंके उत्कृष्ट अनुभागवन्धका॒ सञ्जिकर्ष अनुविशके समान है । अप्रशस्त वर्णके उत्कृष्ट अनुभागका॒ बन्ध करनेवाला जीव भनुष्यगति, देवगति, औदारिक शरीर, वैक्रियिक शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वैक्रियिक, आङ्गोपाङ्ग, वर्जर्वभनाराच संहनन, दो अनुपूर्वी॒ और तीर्थङ्करका॒ कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणे॒ हीन अनुभागको लिये हुए होता है । पञ्चेन्द्रिय जाति आदि प्रशस्त प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे॒ हीन अनुभागको लिये हुए होता है । अप्रशस्त गन्ध आदि तीन, उपवास, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्तिका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है । इसी प्रकार इन प्रकृतियोंका परस्पर सञ्जिकर्ष जानना चाहिए । किन्तु इनमेंसे किसी एकके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव इन्हीमेंसे शेष प्रकृतियोंके उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिको लिये हुए होता है । शेष कथन ओघके समान है । इसी प्रकार अवधिदर्शनी॒, सम्यग्मृष्टि॒, आयिक सम्यग्मृष्टि॒, वेदकसम्यग्मृष्टि॒, उपशमसम्यग्मृष्टि॒ और सम्यग्मिद्धयाद्य॒ जीवोंके जानना चाहिए ।

५९. मनःर्ययकज्ञानी॒ जीवोंमें ज्ञायिक प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग आहारकाययोगी॒ जीवोंके समान है । इसी प्रकार संयत, सामायिकसंयत और छेदोपस्थाना॒ संयत जीवोंके जानना चाहिए । परिहारयिशुद्धिसंयत जीवोंमें आहारकाययोगी॒ जीवोंके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि आहारकद्विकका भङ्ग देवगतिके समान है । इतनी और विशेषता है कि

१. ता० प्रती पसत्थाणं पसत्थाणं । इति पाठः । २. आ० प्रतौ उक्तस॒ श्रगुकस्तभंगो॑ इति पाठः ।

संजदेसु अप्पसत्थाणं तित्थयर्ण वं बंधदि । एवं सब्बाणं । सुहुमसंप० अवगृतवेदभंगो ।
संजदासंजद० परिहारभंगो । णवरि अप्पणो पगदीओ णादब्बाओ । असंजदे मदि० भंगो ।
णवरि तित्थयर्ण० उ० वं० देवगदि०४४ णि० वं० । तं तु० । चक्षुद० तसषज्जन्तभंगो ।

५८. किण्णाष् सत्तणं कम्माणं ओघं । णिरयमदिदंडओ तिरिक्खमदिदंडओ
एङ्गियदंडओ' णबुंसगदंडगभंगो । मणुसगदिदंडओ णिरयोघं । देवगदि० उ० वं०
वेडव्वि०-वेडव्वि०अंगो०-देवाणु० णिय० । तं तु० । तित्थ० सिया० । तं तु० । सेसाणं
पसत्थाणं अप्पसत्थाणं च णिय० अणंतग० । एवं देवगदि०४-तित्थ० । सेसं ओघं ।

५९. णील-काऊणं सत्तणं क० ओघं । णिरय० उ० वं० णिरयाणु० णिय० ।
तं तु० । सेसाओ पगदीओ णिय० अणंतग० । एवं णिरयाणु० । तिरिक्खम० उ०
वं० हुंडसंटाणादि० णिरयोघं । सेसाणं किण्णभंगो । काऊए तित्थ० मणुसगदिभंगो ।

संयत जीवोंमें अप्रशस्त प्रकृतियोंके साथ तीर्थङ्कर प्रकृतिका बन्ध नहीं करता । इसी प्रकार सबके
जानना चाहिए । सूक्ष्मसाम्परायसंयत जीवोंमें अपगतवेदी जीवोंके समान भङ्ग है । संयतासंयत
जीवोंमें परिहारविशुद्धिसंयत जीवोंके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि अपनी अपनी प्रकृ-
तियाँ जाननी चाहिए । असंयत जीवोंमें मत्यज्ञानी जीवोंके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि
तीर्थङ्कर प्रकृतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव देवगतिचतुष्कका नियमसे बन्ध करता
है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है ।
यदि अनुत्कृष्ट अनुभागको बन्ध करता है तो वह उत्कृष्ट स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है ।
यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है तो वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि
उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है तो वह उत्कृष्ट स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है । तीर्थङ्कर
प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है ।
और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह
उत्कृष्ट स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है । शेष प्रशस्त और अप्रशस्त प्रकृतियोंका नियमसे
बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुभागको लिये हुए होता है । इसी प्रकार देवगति चार और
तीर्थङ्कर प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना चाहिए । शेष भङ्ग ओघके समान है ।

६०. नील और कापोतलेश्यावाले जीवोंमें सात कर्मोंका भङ्ग ओघके समान है । नरकगतिके
उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव नरकगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह
उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट
अनुभागका बन्ध करता है तो वह उत्कृष्ट स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है । शेष प्रकृतियोंका
नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुभागको लिये हुए होता है । इसी प्रकार नरक-
गत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना चाहिए । तिर्यङ्गगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करने-
वाले जीवके हुण्डसंस्थान आदिका भङ्ग सामान्य नारकियोंके समान है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग
कृष्ण लेश्याके समान है । कापोत लेश्यामें तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग मनुष्यगतिके समान है ।

१. ता० प्रतौ णिरयगदिदंडओ एङ्गियदंडओ इति पाठः ।

६०. तेज़ए सत्तण्ण कम्माण्ण ओघं । तिरिक्ख० उ० व० एईदि०-हुंदस०-
सोधम्पद्मदंडओ मणुसगदिपंचगस्स ओघं । देवगदिदंडओ परिहार०भंगो । असंय०
उ० व० तिरिक्ख०-पंचिदियादि-सोधम्पद्मदंडओ अप्पसत्थ०-दुस्सर० णि० । तं तु० ।
चदुसंठा०-चदुसंघ० सोधम्पर्भंगो । एवं पम्माए वि । णवरि अप्पसत्थाण० सहस्रार-
भंगो । मुकाए सत्तण्ण कम्माण्ण मणुसगदिपंचगस्स-खूदियाण० ल लोहं । हुंदगारीण०
अप्पसत्थाण० णवगेवज्जभंगो ।

६१. अब्बवसि० सत्तण्ण क० ओघं । दुगदि-चदुजादि-पंचसंठा०-पंचसंघ०-
अप्पसत्थवण्ण०४—दोआणु०-उप०-आदाउज्जोव०-अप्पसत्थ०-थावरादि०४ अथिरादि-
छ० ओघं । मणुसगदिपंचग०-देवगदि०४ तिरिक्खोघं । पंचिदि० उ० व० दुगदि-
दोसरी०-दोअंगो००वज्जरि०-दोआणु०-उज्जो० सिया० । तं तु० । सेसाओ पगदीओ
पसत्थाओ णिय० । तं तु० । अप्पसत्थ०४—उप०-अप्पसत्थाण० णिय० अन्तगुणही० ।

६२. सासणेवण्ण कम्माण्ण ओघं । अण्ताणुव० कोघ० उ० व० पण्णारसक०

६० पीत लेश्यावाले जीवोंमें सात कर्मोंका भङ्ग ओघके समान है । तिर्यङ्गतिके उत्कृष्ट
अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवके एकेन्द्रिय जाति, हुण्डसंस्थान, सौधर्मकल्पसम्बन्धी प्रथम दण्डक
और मनुष्यगतिपञ्चकका भङ्ग ओघके समान है । देवगतिदण्डकका भङ्ग परिहारविशुद्धिसंयत
जीवोंके समान है । असम्माप्ताख्यातिका संहननके उत्कृष्ट अनुभागको बैधनेवाला जीव तिर्यङ्गति,
पञ्चेन्द्रिय जाति आदि सौधर्मदण्डक, अप्रशस्त विहायोगति और दुःस्वरका नियमसे बन्ध करता
है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है ।
यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है ।
चार संस्थान और चार संहननका भङ्ग सौधर्म कल्पके समान है । इसी प्रकार पद्म लेश्यामें भी
जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि अप्रशस्त प्रकृतियोंका भङ्ग सहस्रार कल्पके समान है ।
शुक्ललेश्यामें सात कर्म, मनुष्यगतिपञ्चक और क्षृपक प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है । हुण्डक
संस्थान आदि अप्रशस्त प्रकृतियोंका भङ्ग नौवैवेयकके समान है ।

६१. अभन्धोमें सात कर्मोंका भङ्ग ओघके समान है । दो गति, चार जाति, पाँच संस्थान,
पाँच संहनन, अप्रशस्त वर्ण चतुष्क, दो आनुपूर्वी, उपघात, आतप, उशोत, अप्रशस्त विहायोगति,
स्थावर आदि चार और अस्थिर आदि छहका भङ्ग ओघके समान है । मनुष्यगतिपञ्चक और
देवगतिचतुष्कका भङ्ग सामान्य तिर्यङ्गोंके समान है । पञ्चेन्द्रिय जातिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध
करनेवाला जीव दो गति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, बज्रपंभनाराचसंहनन, दो आनुपूर्वी और
उशोतका कदाचिन् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है
और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह
छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है । शेष प्रशस्त प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है ।
किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है ।
यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है ।
अप्रशस्त वर्ण चार, उपघात और अप्रशस्त विहायोगतिका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणेण
हीन अनुभागको लिये हुए होता है ।

६२. सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंमें छह कर्मोंका भङ्ग ओघके समान है । अन्तानुबन्धी

१. आ० प्रतौ-पंचग० देवगदिभंगो । देवगदि० इति पाठः ।

यार्द्वर्द्वाकः— आचार्य जी सुविदितागत ने इहाज्ञान इत्य०-अरदि-सोग-भय-दु० णिय० । तं तु० । एवमेकस्स । तं तु० ।
पुरिस०-हस्स-रदि ओघं । तिरिक्खग० उ० वं० वामण०-खीलि०-अप्पसत्थ०४-तिरि-
क्खवाण०-उप०-अप्पसत्थ०-अधिरादिव० णिय० । तं तु० । पंचिदियादि० णिय० अणंत-
रु० । उज्जोवं सिया० अणंतरु० । सेसं ओघं । असणणी० तिरिक्खबोधं । णवरि मोह०
मणसअपज्ञतभंगो । अणाह्वार० कम्मइगभंगो ।

એવું ઉક્કસુસબો સણિણયાસો સમત્તો ।

६३. जहण्णए पगदं । दुव्रि०-ओषे० आदि० । ओषे० आभिधिवेधियणाणा-
वरणस्स जहण्णयं अणुभागं बंधेतो चदुणाणाव० णिय० वं० । णिय० जह० । एव-
मण्णमण्णस्स जहण्णा । एवं पञ्चण्णं अंतराइयाणं । णिहाणिहा० जह० अणु० वं०
पञ्चलापञ्चला-थीणगि० णिय० वं० । तं तु० छडाण्णप० । अणांतभागञ्चद्वि०प० । छदंसणा०
क्रोधके उल्कुष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पन्द्रह कवाय, लीबेद, अरति, शोक, भय और
जुगुप्साका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उल्कुष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुल्कुष्ट
अनुभागका भी बन्ध करता है । ॥ ५ ॥ यदि अनुल्कुष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित
हानिको लिये हुए होता है । इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सञ्जिकर्ष जानना चाहिए ।
किन्तु इनमेंसे किसी एक प्रकृतिके उल्कुष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव शेष प्रकृतियों का
उल्कुष्ट अनुभागबन्ध भी करता है और अनुल्कुष्ट अनुभागबन्ध भी करता है । यदि अनुल्कुष्ट अनु-
भागबन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है । पुरुषवेद, हास्य और
रतिका भङ्ग ओषधके समान है । तिर्यक्षगतिके उल्कुष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव वामन
संस्थान, कीलक संहनन, अप्रशास्त वर्णचतुष्क, तिर्यक्षगत्यानुपूर्वी, उपधात, आप्रशास्त विहायोगति
और अस्थिर छादि छहका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उल्कुष्ट अनुभागका भी बन्ध करता
है और अनुल्कुष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुल्कुष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो
वह छह स्थान पतित हानिको लिये हुए होता है । पञ्चेन्द्रिय जाति आदिका नियमसे बन्ध करता
है जो अनन्तगुणे हीन अनुभागको लिये हुए होता है । उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो
अनन्तगुणे हीन अनुभागको लिये हुए होता है । शेष भङ्ग ओषधके समान है । असंक्षी जीवोंमें
अनन्तगुणे हीन अनुभागको लिये हुए होता है । इतनी विशेषता है कि मोहनीय कर्मका भङ्ग मनुष्य अपर्याप्तकोंके
समान है । आनाहारक जीवोंमें कार्मणकाययोगी जीवोंके समान भङ्ग है ।

इस प्रकार उत्कृष्ट सन्निकर्ष समाप्त हुआ ।

६३. जघन्यका प्रकरण है। उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओव और आदेश। ओवकी अपेक्षा आभिनिवेदिक ज्ञानावरणके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरणका नियमसे बन्ध करता है जो नियमसे जघन्य अनुभागको लिये हुए होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका जघन्य अनुभागबन्धके साथ समिक्षण जानना चाहिए। इसी प्रकार पाँच अन्तरायका समिक्षण जानना चाहिए। निद्रानिद्राके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव प्रचला-अन्तरायका समिक्षण जानना चाहिए। प्रचला और स्थानगृहिणीका नियमसे बन्ध करता है जो जघन्य भी होता है और अजघन्य भी होता है। यदि अजघन्य होता है तो छह स्थान पतित वृद्धिको लिये हुए होता है। या तो अनन्तभागवृद्धिरूप होता है या असंख्यातभागवृद्धि आवि पाँच वृद्धिरूप होता है। छह दर्शनावरणका नियमसे बन्ध होता है या असंख्यातभागवृद्धि आवि पाँच वृद्धिरूप होता है।

णिय० अणंतगुणव्यहि० । एवं पचलापचला-थीणगिद्धि० । णिहाए जह० वं० पचला० णिय० । तं तु० छटाण० । चदुदंसणा० णिय० अणंतगुणव्यहि० । एवं पचला० । चकसुदं० ज० वं० तिष्णिदंस० णि० वं० । णि० जहणा० । एवं तिष्णिदंस० । सादा० जह० वं० असादस्त अषं० । एवं असाद० । एवं चदुआउ०-दोगो० ।

६४. मिच्छ० जह० वं० अणंताणु०४ णि० । तं तु० । बारसक०-पुरिस०-हस्स-रदि-भय-हु० णिय० अणंतगुणव्यहि० । एवं अणंताणु०४ । अप्यच्चकखाणकोध० ज० वं० तिष्णिकसा० णिय० । तं तु० । अट्टक०-पंचणोक० णिय० अणंतगुणव्यहि० । एवं तिष्णिक० । पच्चखाणकोध० ज० वं० तिष्णिक० णिय० । तं तु० । चदुसंज०-पंचणोक० णिय० अणंतगुणव्यहि० । एवं तिष्णं क० । कोधसंज० ज० वं० तिष्णिसंज० णिठ०अणितगु० आपार्थीसंजितिष्णागर बठि यद्धाण्णं संज० णिय० अणंतगुणव्यहि० ।

फरता है जो अनन्तगुणवृद्धिको लिये हुए होता है । इसी प्रकार प्रचलाप्रचला और स्त्यान्तगृद्धिकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना चाहिए । निश्चाके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव प्रचलाका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य भी होता है और अजघन्य भी होता है । यदि अजघन्य होता है तो वह वह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । चार दर्शनावरणके नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणवृद्धिको लिये हुए होता है । इसी प्रकार प्रचलाकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना चाहिए । चक्षुदर्शनावरणके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तीन दर्शनावरणका नियमसे बन्ध करता है जो नियमसे जघन्य होता है । इसी प्रकार तीन दर्शनावरणकी मुख्यतासे जानना चाहिए । सातावेदनीयके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव असातावेदनीयका बन्ध नहीं करता । इसी प्रकार असातावेदनीयकी अपेक्षा जानना चाहिए । इसी प्रकार चार आयु और दो गोत्रके सम्बन्धमें जानना चाहिए ।

६५. मिथ्यात्वके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव अनन्तानुबन्धी चारका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह वह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । बारह कषाय, पुरुषवेद, द्वास्य, रति, भय और जुगुणाका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्त-गुणी वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार अनन्तानुबन्धी चारकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना चाहिए । अप्रत्याख्यानावरण क्रोधके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तीन कषायोंका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह वह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । आठ कषाय और पाँच नोकषायका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणवृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार अप्रत्याख्यान मान आदि तीन कषायोंकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना चाहिए । प्रत्याख्यानावरण क्रोधके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव शेष तीन कषायोंका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागबन्ध भी करता है और अजघन्य अनुभागबन्ध भी करता है । यदि अजघन्य अनुभागबन्ध करता है तो वह वह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । चार संज्वलन और पाँच नोकषायका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणवृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार शेष तीन प्रत्याख्यानावरण कषायोंकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना चाहिए । क्रोधसंज्वलनके जघन्य अनुभाग का बन्ध करनेवाला जीव तीन संज्वलनोंका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणवृद्धिरूप होता

१. ता० आ० प्रत्योः छुडाण० । चदुसंज० णिय० अणंतगुणव्यहि० । एवं इति पाठः । २. ता० आ० प्रत्योः तिष्णिसंज० णि० अणंतगु० । माणसंज० ज० वं० तिष्णिसंज० णिय० अणंतगु० । माणसंज० इति पाठः ।

मायसंज० ज० व० लोभसंज० णिय० अणंतगुणव्य० । लोभसंज० ज० व० सेसार्ण
अवंध० । इत्थ० ज० व० पिच्छ०-सोलसक०-भय-दुर्ग० णिय० अणंतगुणव्य० ।
हस्त-रदि०-अरदि०-सोग० सिया अणंतगुणव्य० । एवं णवुस० । पुरिस० ज० व०
चदुसंज० णिय० अणंतगुणव्य० । हस्त० ज० व० चदुसंज०-पुरिस० णिय०
अणंतगुणव्य० । एवं रदि०-भय०-दुर्ग० । अरदि० ज० व० अणंतगुणव्य० । साग० णिय० । तं तु० ।
व० चदुसंज०-पुरिस०-भय०-दु० णिय० अणंतगुणव्य० । साग० णिय० । तं तु० ।
एवं सोग० ।

६५. णिरयगदि० ज० व० पंचिदि०-वेउविव०-तेजा०-क०-वेउविव०-अंगो०--
पसत्थापसत्थवण्ण०४-अगु०४-तस०४-णिमि० णिय० अणंतगुणव्य० । हुँड०--
णिरयाणुप०-अप्यसत्थ०-अथिरादिङ्क० णिय० । तं तु० । एवं णिरयाणु० । तिरिक्ख०-
ज० व० पंचिदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०-अंगो०-वज्जरि०-पसत्था-
ह० । मानसंज्वलनके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव दा संज्वलनोका नियमसे बन्ध करता
है । भानसंज्वलनके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव
है । जो अनन्तगुणवृद्धिरूप होता है । मायासंज्वलनके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव
है । जो अनन्तगुणवृद्धिरूप होता है । लोभसंज्वलनके जघन्य
लोभसंज्वलनका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणवृद्धिरूप होता है । स्त्रीवेदके जघन्य अनुभाग
अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव शेष संज्वलनोका अबन्धक होता है । स्त्रीवेदके जघन्य अनुभाग
का बन्ध करनेवाला जीव मिथ्यात्म, सोलह कथाय, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्ध करता है
जो अनन्तगुणवृद्धिरूप होता है । हास्य, रति, अरति और शोकका कदाचित् बन्ध करता है जो
अनन्तगुणवृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार नपुंलकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।
अनन्तगुणवृद्धिरूप होता है । पुरुषवेदसे जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार संज्वलनके
जघन्य अनन्तगुणवृद्धिरूप होता है । हास्यके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार संज्वलन
और पुरुषवेदका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणवृद्धिरूप होता है । रति, भय और जुगुप्सा
का नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागबन्ध भी करता है और अजघन्य
का नियमसे बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागबन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित
अनुभागबन्ध भी करता है । यदि अजघन्य अनुभागबन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित
अनुभागबन्ध भी करता है । इसी प्रकार रति, भय और जुगुप्साकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।
अरातके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार संज्वलन, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साका
जघन्य अनुभागबन्ध करता है । शोकका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु
नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणवृद्धिरूप होता है । शोकका नियमसे बन्ध करता है । यदि अजघन्य
बहु जघन्य अनुभागबन्ध भी करता है और अजघन्य अनुभागबन्ध भी करता है । यदि अजघन्य
बहु जघन्य अनुभागबन्ध भी करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार शोककी मुख्यतासे
अनुभागबन्ध करता है जो अनन्तगुणवृद्धिरूप होता है । सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

६६. नरकगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, वैकिञ्चिक-
शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वैकिञ्चिक आङ्गोपङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क,
अगुरुलयुचतुष्क, त्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणवृद्धिरूप होता
है । हुण्डसंल्यान, नरकगत्यानुपूर्वी, अप्रशस्त चिह्नयोगति और अस्थिर आदि छहका नियमसे
है । किन्तु वह जघन्य अनुभागबन्ध भी करता है और अजघन्य अनुभागबन्ध भी
बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागबन्ध भी करता है और अजघन्य अनुभागबन्ध भी
करता है । यदि अजघन्य अनुभागबन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है ।
इसी प्रकार नरकगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । तिर्येष्वगतिके जघन्य अनु-
भागका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक्षशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, सम-

पसत्थ०४—अगु०४—पसत्थ०—तस०४—थिरादित्र०—णिमि० णिय० अणंतगुणब्ध० । तिरिक्खाणु० णिं० । तं तु० । उज्जो० सिया० अणंतगुणब्ध० । एवं तिरिक्खाणु० । मणुसगदि० ज० व० पंचिंदि० ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि० अंगो०-पसत्थापसत्थ०४ अगु०-उप०-तस०-बादर०-पन्न०-णिमि० णिय० अणंतगुणब्ध० । छस्तीठ०-छस्तंघ०-दोविहा०-अपज०-थिरादित्रयुग० सिया० । तं तु० छढाणपदिं० । मणुसाणु० णिं० । तं तु० । पर०-उस्ता०-पञ्ज० सिया० अणंतगुणब्ध० । एवं मणुसाणु० । देवमदि०-ज० व० पंचिंदि०—वेउच्चिव०-तेजा०-क०-वेउच्चिव० अंगो०-पसत्थापसत्थ०४—अगु०४—तस०४—णिमि० णिय० अणंतगुणब्ध० । समचदु०--देवाणु०--पसत्थ०—सुभग-सुस्सर-आदे० णिय० । तं तु० । थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० सिया० । तं तु० । एवं देवाणु० ।

बहुरक्षसंस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रप्रभनाराच संहनन, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलधुचतुष्क, प्रशस्त थिरायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणवृद्धिरूप होता है। तिर्यक्खगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागबन्ध भी करता है और अजघन्य अनुभागबन्ध भी करता है। यदि अजघन्य अनुभागबन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार तिर्यक्खगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना चाहिए। मनुष्यगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलधु, उपघात, त्रस, बादर, प्रत्येक और निर्माणका नियम से बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। छह संस्थान, छह संहनन, दो थिरायोगति, अशर्वाप और स्थिर आदि वह युगलका कदाचित् बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। मनुष्यगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। परघात, उच्छ्वास और पर्याप्तका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार मनुष्यगत्यानुपूर्वीको मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना चाहिए। देवगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्षियिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वैक्षियिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलधुचतुष्क, त्रसचतुष्क, और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। समचतुरक्षसंस्थान, वेष्टगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त थिरायोगति, सुभग, सुस्वर और आदेयका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशः-कीर्ति और अयशःकीर्तिका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार देवगत्यानुपूर्वीकी मुख्यता से सञ्चिकर्ष जानना चाहिए।

६६. एहंदि० ज० वै० तिरिक्ख०-ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थापसत्थ०४-
तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-णिमि० णिं० अणंतगुणवभहिय० | हुड०-यावर-दूर्भग-अणादे०
णि० | तं तु० | पर०-उस्सा०-आदाउजो०-बादर-यज्ञत-पत्ते० सिया० अणंतगुणवभ० |
मुहुग-अपज्ञ०-साधार०-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० सिया० | तं तु० | एवं
थवरं | वीहंदि० ज० वै० तिरिक्ख०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०शंगो०-पसत्था-
पसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-तस०-बादर०-पत्ते०-णिमि० णिय० अणंत-
गुणवभहिय० | हुड०-असंप०-दूर्भग०-अणादे० णिं० | तं तु० | पर०-उस्सा०-उज्जो०-
पज्ञ० सिया० अणंतगुण० | अपसत्थ०-अपज्ञ०-थिराथिर०-सुभासुभ-दुस्सर-जस०-
अजस० सिया० | तं तु० | एवं तीहंदि०-चदुरिं० | पंचिंदि० ज० वै० णिय०-
तिरिक्खम०-असंपत्त०-दोआणु० सिया० अणंतगुणवभ० | ओरालि०-वेलचिं०-दोशंगो०-
उज्जो० सिया० | तं तु० | तेजा०-क०-पसत्थ०४-अगु०३-तस०४-णिमि० णिं० |

६७. एकेन्द्रिय जातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यङ्गगति; औदारिक
शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वी,
अगुरुलघु, उपघात और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है।
हुण्डसंस्थान, स्थावर, दुर्भग और अनादेयका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य
अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य
अनुभागका भी बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। परघात, उच्छ्रवास,
अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। यदि अजघन्य
आतप, उद्योत, बादर, पर्याप्त और प्रत्येकका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता
है। सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्तिका
है। इसी प्रकार स्थावर प्रकृतिकी मुख्यतासे सञ्चिकर्प जानना चाहिए। द्वीन्द्रिय
वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार स्थावर प्रकृतिकी मुख्यतासे सञ्चिकर्प जानना चाहिए। द्वीन्द्रिय
जातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यङ्गगति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर,
कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वी,
अगुरुलघु, उपघात, उपस, बादर, प्रत्येक और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा
हुण्डसंस्थान, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, दुर्भग और अनादेयका नियमसे
अधिक होता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी
बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता
बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है।
यदि अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अयशःकीर्ति
होता है। अप्रशस्त विहायोगति, अपर्याप्त, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, दुःस्वर, यशःकीर्ति
होता है। अप्रशस्त विहायोगति, अपर्याप्त, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, दुःस्वर, यशःकीर्ति
होता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अयशःकीर्ति
होता है। यदि अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य
कदाचित् बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य
कदाचित् बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य
अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान

तं तु० । हुँड०-अप्पसत्थ०४—उप०—अप्पसत्थ०—अधिरादिक्ष० णि० अणंतगुणव्य० ।
एवं तस० ।

६७. ओरालि० ज० वं० तिरिक्ख०-हुँड०-अप्पसत्थ०४—तिरिक्खाणु०-अधि-
रादिपंच० णिय० अणंतगुणव्य० । एईदि०-असंपत्त०-अप्पस०-थावर०-दुस्सर०
सिया० अणंतगुणव्य० । पंचि०—ओरालि०अंगो०-आदाउज्जो०-तस० सिया० । तं
तु० । तेजा०-क०-पसत्थ०४—अगु०३—बादर-पज्जत-पत्रो०—णिमि० णि० । तं तु० ।
एवं उज्जो० । वेउचिव० ज० वं० णिरय०—हुँड०—अप्पसत्थ०४—णिरयाणु०—उप०-
अप्पसत्थ०-अधिरादिक्ष० णिय० अणंतगुणव्य० । पंचिदि०-तेजा०-क०-वेउचिव०-
अंगो०-पसत्थ०४—अगु०३—तस०४—णिमि० णि० । तं तु० छट्टाणपदिदं० । एवं
वेउचिव०अंगो० । आहार० ज० वं० देवगदि०—पंचिदि०—वेउचिव०-तेजा०-क०-सम-
चदु०-वेउचिव०अंगो०-पसत्थापसत्थ०४-देवाणु०-अगु०४—पसत्थ०-तस०४-थिरादिक्ष०-

पतित वृद्धिरूप होता है । तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, त्रसचतुष्क
और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है, जो तं तु रूप होता है । हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्ण-
चतुष्क, उपथात, अप्रशस्त विहायोगति और अस्थिर आदि छहका नियमसे बन्ध करता है
जो अनन्तगुणा अधिक होता है । इसी प्रकार त्रसप्रकृतिकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना चाहिए ।

६७. औदारिक शरीरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यक्खगति, हुण्डसंस्थान,
अप्रशस्त वर्ण चतुष्क, तिर्यक्खगत्यानुपूर्वी और अस्थिर आदि पाँचका नियमसे बन्ध करता है जो
अनन्तगुणा अधिक होता है । एकेन्द्रिय जाति, असम्बाप्तासृपाटिका संहनन, अप्रशस्त विहायोगति,
स्थायर और दुःखवरका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । पञ्चेन्द्रियजाति,
औदारिक आङ्गोपाङ्ग, आतप, उद्योत और त्रसका कदाचित् बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य
अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य
अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । तैजसशरीर, कार्मणशरीर,
प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणका नियमसे
बन्ध करता है । जो जघन्य व अजघन्य अनुभाग बन्ध करता है । यदि अजघन्य
अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार
उद्योतकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना चाहिए । वैक्रियिक शरीरके जघन्य अनुभागका बन्ध
करनेवाला जीव नरकगति, हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, नरकगत्यानुपूर्वी, उपथात,
अप्रशस्त विहायोगति और अस्थिर आदि छहका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक
होता है । पञ्चेन्द्रियजाति, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क,
अगुरुलघुत्रिक, त्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका
भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध
करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार वैक्रियिक आङ्गोपाङ्गकी मुख्यता-
से सञ्चिकर्ष जानना चाहिए । आहारकशरीरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव देवगति,
पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुर्ळ संस्थान, वैक्रियिक
आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त

णिमि० णिय० अणंतगुणव्य० । आहार०अंगो० णिं० वं० । तं तु० । तित्यय० सिया० अणंतगुणव्य० । एवं आहारअंगो० । तेजा० जह० बंध० णिरय०-तिरिक्ख०-एइदि०-असंप०-दोआणु०-अप्पसथ०-यावर-दुस्सर० सिया० अणंतगु० । पंचिदि०-दोसरी०-दोअंगो०-आदाउज्जो०-तस० सिया० । तं तु० । कम्पइ०-पसत्थ०४-अगु०३-बादर-पञ्जत-पते०-णिमि० णिय० । तं तु० । हुंड०-अप्पसत्थवण्ण०४-उप०-अथि-गटिपंच० णिं० वं० अणंतगुणव्यहिय० । एवं कम्पइ०-पसत्थ०४-अगु०३-बादर-यागक्षिक० आचार्य श्री सुविधालालगत जी म्हाराज

एज्जत-पते०-णिमि० ।

६८. समचदु० ज० वं० तिरिक्ख०-दोसरी०-दोअंगो०-तिरिक्खाण०-उज्जो०-सिया० अणंतगु० । मणुसग०-देवग०-ब्रह्मसंघ०-दोआणु०-दोचिह्नः--थिरादिब्रह्मयुग० सिया० । तं तु० । पंचिदि०-तेजा०-क०-पसत्थपसत्थ०४-अगु०४-तस०४-णिमि० णिय० अणंतगुणव्य० । एवं समचदुर०भंगो पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदे० । णमोद०

विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । आहारक आङ्गोपाङ्कका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । तीर्थद्वार प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । इसी प्रकार आहारक आङ्गोपाङ्ककी मुख्यतासे सम्भिक्ष जानना चाहिए । तैजसशरीरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव नरकगति, तिर्यक्षगति, एकेन्द्रिय जाति, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, दो आनुपूर्वी, अप्रशस्त विहायोगति, स्थायर और दुःस्वरका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । पञ्चेन्द्रिय जाति, दो शरीर, दो आङ्गो-पाङ्क, आतप, उद्योत और त्रसका कदाचित् बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित वृद्धिरूप होता है । कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्ण चार, अगुरुलघुत्रिक, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माण का नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपघात और अस्थिर आदि पाँचका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । इसी प्रकार कार्मणशरीर, प्रशस्त, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणकी मुख्यतासे सम्भिक्ष जानना चाहिए ।

६९. समचतुरल्लसंस्थानके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यक्षगति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्क, तिर्यक्षगत्यानुपूर्वी और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । मनुष्यगति, देवगति, छह संहनन, दो आनुपूर्वी, दो विहायोगति और स्थिर आदि छह युगलका कदाचित् बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्ण-चतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, त्रसचतुष्क, और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । इसी प्रकार समचतुरल्लसंस्थानके समान प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर और

१. ता० प्रती आहारम० (अं) गो०, आ० प्रती आशारभंगो० इति पाठः । २. आ० प्रती तेजाक० बंध० इति पाठः । ३. ता० आ० प्रत्योः असंपत्तवण्ण० ४ उप० इति पाठः ।

ज० वं० तिरिक्ख०-तिरिक्खाण०-उज्जो० सिया० अणंतगुणव्य०। मणुस०-छस्संघ०-मणु-
साण०-दोविहा०-थिरादिछयुग० सिया०। तं तु०। पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-
यार्गदर्शक :- आवाक्ष औ सुविधिसागर जी यहाराज
ओरालि०-अंगो०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०४-तस०४-गिमि० ण० अणंतगुणव्य०।
एवं तिण्णसंडाण० पंचसंघ०। हुंडस० ज० वं० णिरय०-मणुस०-चदुजादि०-छस्संघ०-
दोभाण०-दोविहा०-थावरादि४-थिरादिछयुग० सिया०। तं तु०। तिरिक्ख०-
पंचिंदि०-दोसरीर-दोअंगो०-तिरिक्खाण०-पर०-उस्सा०-आदाउज्जो०-तस०४ सिया०
अणंतगुणव्य०। तेजा०-क०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०-उप०-गिमि० णिय० अणंत-
गुणव्य०। एवं दूभग-अणादे०।

६६, ओरालि०-अंगो० ज० वं० तिरिक्ख०-हुंड०-असंप०-अप्पसत्थ०४-तिरि-
क्खाण०-उप०-अप्पस०--अधिरादिक्ष० णिय० अणंतगुणव्य०। पंचिंदि०-ओरालि०-
तेजा०-क०-पसत्थ०४-अगु०३-तस०४-गिमि० णिय०। तं तु०। उज्जोवं सिया०।
तं तु०।

आदेयकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए। न्यप्रोधपरिमण्डल संस्थानके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यङ्कगति, तिर्यङ्कगत्यानुपूर्वी और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। मनुष्यगति, छह संहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, दो विहायोगति और स्थिर आदि छह युगलका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, ग्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार तीन संस्थान और पाँच संहननकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए। हुण्डसंस्थानके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव नरकगति, मनुष्यगति, चार आति, छह संहनन, दो आनुपूर्वी, दो विहायोगति, स्थायर आदि चार और स्थिर आदि छह युगलका कदाचित् बन्ध करता है। यदि वह बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। तिर्यङ्कगति, पञ्चेन्द्रियजाति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, तिर्यङ्कगत्यानुपूर्वी, प्रशात, उच्छ्रवास, आतप, उद्योत, और त्रसचतुष्कका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपधात और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार दुर्भग और अनादेयकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए।

६६. औदारिक आङ्गोपाङ्गके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यङ्कगति, हुण्ड-
संस्थान, असम्माप्तासुपाटिका संहनन, आप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यङ्कगत्यानुपूर्वी, उपधात, अप्रशस्त
विहायोगति और अस्थिर आदि छहका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है।
पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक,
ग्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है

७०, असंप० ज० व० तिरिक्ख०-यैचिंदि०-तिरिक्खाणु०-ए०-उस्सा०-उज्जो०-
एज० सिया० अणंतगुणवभ० । मणुसगदि०-तिणिजादि०-ब्रह्मदै०-मणुसाणु०-दोविहा०-
अपज०-धिरादिब्रयुग० सिया० । तं तु० । ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०-अंगो०-
पस्त्थापस्त्थ०-अग०-उप०-तस०-वादर-पते०-णिमि० णिय० अणंतगुणवभ० ।

मार्गदर्शक :- आहारदुगं तित्थय० सिया० अण्टतगुणवभ० | अप्पसत्य-
गंध-रस-पस्स०-उप० णि० | तं तु० | एवं अप्पसत्यगंध-रस-पस्स०-उप० | यथा गदी
तथा आणुपुच्ची ।

७२. आदाव० ज० बं० तिरिक्ख०-एइंदि०-हुंड०-अप्पसत्थवण्ण०४-तिरि-
क्खण्ण०-उप०-थावर०-अधिशादिपंच० णिय० अण्टगुणव्वभ० । ओरालि०-तेजा०-क०-
तो वह जयन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजयन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि
अजयन्य अनुभाग का बन्ध करता है तो वह छह स्थान पांति वृद्धिरूप होता है ।

७०. असमाप्ताखण्डाटिका संहननके जबन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यक्षगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, तिर्यक्षगत्यानुपूर्णी, परघात, उच्छ्रवास, उशोत और पर्याप्तिका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। मनुष्यगति, तीन जाति, छह संस्थान, मनुष्यगत्यानुपूर्णी, दो विहायोगति, अपर्याप्त और स्थिर आदि छह युगलका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो वह जबन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्क, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, त्रस, वादर, प्रत्येक और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है।

७२. अप्रशस्त वर्णके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव देवगति, पञ्चन्द्रिय जाति, वैक्रियिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरलसंस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलबुधिक, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। आहारकद्विक और तीर्थद्वारका कदाचिन् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। अप्रशस्त गन्ध, अप्रशस्त रस, अप्रशस्त वर्ण और उपवातका नियमसे बन्ध करता है जो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान परित बृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार अप्रशस्त गन्ध, रस व स्पर्श और उपवातकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए। गतियोंकी मुख्यतासे जिस प्रकार सञ्जिकर्ष कह आये हैं उसी प्रकार आनुपूर्वियोंकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए।

७२. आतपके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यङ्गगति, एकेन्द्रिय जाति, हुण्डसंस्थान, अप्रशास्त वण्णचतुष्क, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वी, उपवात, स्थावर और अस्थिर आदि पाँचका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगत्या अधिक होता है। औदारिकशरीर, तैजसशरीर,

पसत्थ०४—अगु०३—बादर-पज्जत-पत्ते०-णिमि० णिय० । तं तु० । उज्जोवं ओरालिय-
भंगो० ।

७३. अप्रसत्थवि० ज० ब० णिय०-मणुस०-३जादि०-छसंदा०-छसंथ०-दो-
आणु०-यिरादिक्षयु० सिया० । तं तु० । तिरिक्ख०-पंचिदि०-दोसरी०-दोअंगो०-तिरि-
क्खाणु०-उज्जो० सिया० अण्तगुणव्यभ० । तेजा०-क०-पसत्थापसत्थ०४—अगु०४—
तस०४—णिमि० णिय० अण्तगुणव्यभ० । एवं दुस्सर० ।

७४. सुहूप० ज० ब० तिरिक्ख०—ओरालि०--तेजा०--क०-पसत्थापसत्थ०४—
तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-णिमि० णिय० अण्तगुणव्यभ० । एङ्गदि०-हुँड०-थावर०-दूभ०-
अणादे०-अजस० णिय० । तं तु० । पर०-उस्सा०-पज्जत०-पत्ते० सिया० अण्तगु-
णव्यभ० । अपज्ज०-साधा०-यिराथिर०-सुभासुभ० सिया० । तं तु० । एवं साधार० ।

७५. अपज्ज० ज० ब० तिरिक्ख०-पंचिदि०-ओरालि०-शंगो०-तिरिक्ख०-तस०-

कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुन्निक, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणका नियमसे
बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी
बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता
है । उज्जोवं औरालियां और अण्तगुणव्यभ० जीव स्थान

७६. अप्रशस्त विहायोगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव नरकगति, मनुष्य-
गति, तीन जाति, छह संस्थान, छह संहनन, दो आनुपूर्वी और स्थिर आदि वह युगलका
कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और
अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह
स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । तिर्यङ्गगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, तिर्यङ्ग-
गत्यानुपूर्वी और ज्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । तैजसशरीर,
कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रसवतुष्क और
निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । इसी प्रकार दुःस्वरकी
मुख्यतासे सत्रिकर्ष जानना चाहिए ।

७७. सूहमप्रकृतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यङ्गगति, औदारिकशरीर,
तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु,
उपघात और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । एकेन्द्रियजाति,
हुँडसंस्थान, स्थावर, दुर्भग, अनादेव और अयशःकीर्तिका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह
जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि
अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । परघात, उच्छ्वास,
पर्याप्त और प्रत्येकका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । अपर्याप्त,
साधारण, स्थिर, अस्थिर, शुभ और अनुभवका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो
वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि
अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार
साधारण प्रकृतिकी मुख्यतासे जानना चाहिए ।

७८. अपर्याप्त प्रकृतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यङ्गगति, पञ्चेन्द्रिय-

वादर-पते० सिया० अणंतगुणव्य० । मणुस०-चदुजादि०-असंप०-मणुसाणु०-थावर०-
सुहृष्म०-साधार० सिया० । तं तु० । ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थापसत्थ०४—अणु०-
उप०-णिपि० णिय० अणंतगुणव्य० । हुंड०-अथिरादिपंच णि० । तं तु० ।

७६. थिर०ज० वं० तिरिकख०-पंचिंदि०-दोमरी०-दोआंगो०-तिरिकखाणु०-आदा-
उज्जो०-तस०४-तिथ० सिया० अणंतगुणव्य० । मणुसग०-देवग०-चदुजादि०-क्षसंठा०-
क्षसंघ०-दोआणु०-दोविहा०-थावर०-सुहृष्म०-साधार०-सुभादिपंचयुग०सिया० । तं तु० ।
तेजा०-कम्म०-पसत्थापसत्थ०४—पज्ज०-णिपि० णिय० अणंतगुणव्य० । वादर-पतोय०
सिया० अणंतगुणव्य० । एवं सुभ०-जसगि० । णवरि जस०-सुहृष्म-साधारणं वज्जं ।

७७. अथिर० ज० बं० पिरय-देवगदि०-मणुसगदि०-चदुजादि०-क्षसंठा०-क्षसंघ०-
तिणिणाणु०-दोविहा०-थावरादि४—सुभादिपंचयुग० सिया० । तं तु० । तिरिकख०-
जाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, तिर्यङ्गत्यानुपूर्वी, त्रस, वादर और प्रत्येकका कदाचित् बन्ध करता
है जो अनन्तगुण। अधिक होता है। मनुष्यगति, चार जाति, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन,
मनुष्यगत्यानुपूर्वी, स्थावर, सूक्ष्म और साधारणका फदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है
तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि
अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। औदारिकशरीर,
तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात और
निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुण। अधिक होता है। हुण्डसंस्थान, और अस्थिर
आदि पौचका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और
अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह
स्थान पतित वृद्धिरूप होता है।

७८. स्थिर प्रकृतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यङ्गति, पञ्चेन्द्रियजाति,
दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, तिर्यङ्गत्यानुपूर्वी, आतप, उद्योत, त्रसचतुष्क और तीर्थङ्कर प्रकृतिका
कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुण। अधिक होता है। मनुष्यगति, देवगति, चार जाति, छह
संस्थान, छह संहनन, दो आनुपूर्वी, दो विहायोगति, स्थावर, सूक्ष्म, साधारण और सुभादि
पंच युगलोंका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध
करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता
है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क,
अप्रशस्त वर्णचतुष्क, पर्याप्त और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुण। अधिक होता
है। वादर और प्रत्येकका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुण। अधिक होता है। इसी
प्रकार सुभ और यशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकषे जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि
यशःकीर्तिके भज्जमें स्थावर, सूक्ष्म और साधारणको छोड़ देना चाहिए।

७९. अस्थिर प्रकृतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव नरकगति, देवगति,
मनुष्यगति, चार जाति, छह संस्थान, छह संहनन, तीन आनुपूर्वी, दो विहायोगति, स्थावर
आदि चार और सुभादि पौच युगलका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य
अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य
अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। तिर्यङ्गति, पञ्चेन्द्रिय-

पंचिदि०-दोसरीर-दोअंगो०-तिरिक्ताणु०- पर०-उसा०-आदायुज्ञो०-तस०४-तिथ०-
सिया० अण्टगुणव्य०। तेजा०-क०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०-उप०-णिमि० णिय०-अण्ट-
गुणव्य०। एवं असुभ-अजस०।

७८. तिथ्य० ज० ब० देवगदि-पंचिदि०-वेउव्य०-तेजा०-क०--समचदु०-
वेउव्य०-अंगो०-पसत्थापसत्थ०४-देवाणु०-अगु०४-पसत्थवि०-तस०४-अधिर-असुभ-
सुभग-सुस्सर-आदे०-अजस०-णिमि० णिय० अण्टगुणव्यहियं बंधदि।

७९. णिरणसु आभिणिवोधि० ज० अणु० व० चदुगणा० णिय०। तं तु०।
एवमण्णमण्णस्स। एवं पंचतराइ०। णिदाणिदाए० ज० ब० पचलापचला-थीणगि०
णि०। तं तु०। छदंसणा० णि० अण्टगुणव्य०। एवं पचलापचला-थीणगि०। णिदा०
ज० ब० पंचदंस० णि०। तं तु०। एवमण्णमण्णस्स। तं तु०। वेदणीय-आउग-गोद० ओघं।

जाति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, तिर्यक्कगत्यानुपूर्वी, परवात, उच्चवास, आतप, उद्योत, त्रस-
चतुष्क और तीर्थकुरका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। तैजसशरीर,
कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपवात और निर्माणका
नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार अशुभ और अयशाकीर्तिकी
मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना चाहिए।

८०. तीर्थकुर प्रकृतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव देवगति, पञ्चनिद्रिय जाति,
वैक्तिकिशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरल्लसंस्थान, वैक्तिकिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त
वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विद्यायोगति, त्रस-
चतुष्क, अस्थिर, अशुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, अयशाकीर्ति और निर्माणका नियमसे बन्ध
होता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है।

८१. नारकियोंमें आभिनिवोधिक ज्ञानावरणके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव
चार ज्ञानावरणका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और
अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह
स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सञ्चिकर्ष जानना चाहिए।
इसी प्रकार पाँच अन्तरायका परस्पर सञ्चिकर्ष जानना चाहिए। निद्रानिद्राके जघन्य अनुभागका
बन्ध करनेवाला जीव प्रचलाप्रचला और स्त्यानागृद्धिका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह
जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि वह
अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। छह दर्शनावरणका
नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार प्रचलाप्रचला और स्त्यान-
गृद्धिकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना चाहिए। निद्राके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच
दर्शनावरणका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और
अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह
स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार इन सबका परस्पर सञ्चिकर्ष जानना चाहिए। किन्तु
इनमेंसे किसी एकके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव शेषका नियमसे बन्ध करता है जो
जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य
अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। वेदनीय, आयु

८०. मिच्छ० ज० व० अणंताणु०४ णि० व० | त० तु० | वारसक०-पंच-
णोक० णि० अणंतगुणवभिय० | एवं अणंताणु०४ | अपच्चकवा०कोध० ज० व०
एकारसक०-पंचणोक० णि० | त० तु० | एवमण्णमण्णस्स | त० तु० | इत्थ० ज०
व० मिच्छ०-सोलसक०-भय-दु० णिय० अणंतगुणवभिय० | हस्स-रदि-अरदि-सोग०
सिया० अणंतगुणवभिय० | एवं णवुंस० | अरदि० ज० व० वारसक०-पुरिस०-भय-दु०-
णिय० अणंतगुणवभिय० | सोग० णिय० ! त० तु० | एवं सोग० |

८१. तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु० ओवं | मणुसग०-मणुसाणु० ओवं | णवरि अप-
ज्ञत्वं वज॑ | पंचिदि० ज० व० तिरिक्ख०-हुंद०-असंप०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-
उप०-अप्पसत्थवि०-अथिरादिछ० णिय० अणंतगुणवभिय० | ओरालि०-तेजा०-क०-
ओरालि०अंगो०-पसत्थ०४-अगु०३-तस०४-णिमि० णिय० | त० तु० | उज्जो०
और गोव्र कर्मका भङ्ग स्मृष्टिकृत समान हृष्टवाय और सुविदिसागर जी यहाराज

८०. मिश्यात्वके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव अनन्तानुवन्धी घारका नियमसे
बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध
करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है।
वारह कथाय और पाँच नोकषायका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है।
इसी प्रकार अनन्तानुवन्धी घारकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए। अप्रत्याख्यानावरण क्रोधके
जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव घ्यारह कथाय और पाँच नोकषायका नियमसे बन्ध करता
है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता
है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी
प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सञ्जिकर्ष जानना चाहिए। किन्तु इनमेंसे किसी एकके जघन्य
अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव शेषका नियमसे बन्ध करता है जो जघन्य अनुभागका भी बन्ध
करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है
तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। स्त्रीवेदके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव
मिश्यात्व, सोलह कथाय, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता
है। हास्य, रति, अरति और शोकका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है।
इसी प्रकार नपुंसक वेदकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए। अरतिके जघन्य अनुभागका बन्ध
करनेवाला जीव वारह कथाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्त-
गुणा अधिक होता है। शोकका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध
करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है
तो वह छह स्थानपतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार शोककी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए।

८२. तिर्यङ्गगति और तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वीका भङ्ग ओघके समान है। तथा मनुष्यगति और
मनुष्यगत्यानुपूर्वीका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि अपर्याप्तको छोड़कर सञ्जिकर्ष
कहना चाहिए। पञ्चनिदिय जातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यङ्गगति, हुप्त
संस्थान, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वी, उपवात, अप्रशस्त
विहायोगति और अस्थिर आदि छहका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है।
औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु-
त्रिक, व्रसचतुष्क, और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी

सिया० । तं तु० । एवं एदाओ एकमेकस्स । तं तु० । छसर्टा०-छसंच०-दोविहा०-
छयुगल०-नित्यय० ओघं । अप्पसत्यवण्ण० ज० च० मणुस०-पंचिदि०-तिणिसरीर-
समचदु०-ओरालि०अंगो०---बज्जरि०---पसत्थव०४-मणुसाणु०-अगु०३---पसत्थ०-
तस०४-थिरादिल०-णिमि० णिय० अणंतगुणव्य० । अप्पसत्थगंध०३-उ५० णिय० ।
तं तु० । एवं एदाओ एकमेकस्स । तं तु० । छमु उवरिमामु तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु०
मणुसगदिभंगो । संसं णिरयोधं ।

८२. सत्तमाए तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु० ओघं । मणुसग० ज० च० पंचिदि०-
ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०अंगो०-बज्जरि०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०४-
पसत्थ०-तस०४-अथिर-अमुभ-मुभग--मुस्सर-आदे०-अजस०-णिमि० णि० अणंत-
गुणव्य० । मणुसाणु० णि० । तं तु० । एवं मणुसाणु० । पंचिदियदंडओ णिरयोधं ।

बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभाग का बन्ध
करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । उत्तोतका कदाचित् बन्ध करता है । यदि
बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता
है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध होता है । इसी
प्रकार इन प्रकृतियोंका परस्पर सम्बन्धित जानना चाहिए । किन्तु इनमेंसे किसी एक प्रकृतिका बन्ध
करनेवाला जीव शेषके जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध
करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित वृद्धिरूप होता है ।
छह संस्थान, छह संहनन, दो विहायोगति, छह युगल और तीर्थकर प्रकृतिका भङ्ग ओघके समान
है । अप्रशस्त वर्णके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रियजाति, तीन
शरीर, समचतुरल संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्जनाराच संहनन, प्रशस्त वर्णचतुर्ष,
मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुविक, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुर्ष, स्थिर आदि छह और
निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । अप्रशस्त गन्धत्रिक और
उपघातका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य
अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान
पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार इन प्रकृतियोंका परस्पर सम्बन्धित जानना चाहिए । किन्तु
इनमें से किसी एकका बन्ध करनेवाला जीव शेषका उसी प्रकार बन्ध करता है जिस प्रकार अप्र-
शस्त वर्णकी मुख्यतासे कह आये हैं । उपरकी छह प्रथिवियोंमें तिर्थञ्चगति और तिर्थञ्चगत्यानु-
पूर्वीका भङ्ग मनुष्यगतिके समान जानना चाहिए । शेष भङ्ग सामान्य नारकियोंके समान है ।

८२. सातवीं प्रथिवीमें तिर्थञ्चगति और तिर्थञ्चगत्यानुपूर्वीका भङ्ग ओघके समान है ।
मनुष्यगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस-
शरीर, कार्मणशरीर, समुचतुरल संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्जनाराच संहनन, प्रशस्त
वर्णचतुर्ष, अप्रशस्त वर्णचतुर्ष, अगुरुलघुचतुर्ष, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुर्ष, अस्थिर,
अशुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, अवशःकीर्ति और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा
अधिक होता है । मनुष्यगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु जघन्य अनुभागका भी
बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध
करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे
सम्बन्धित जानना चाहिए । पञ्चेन्द्रियजाति दण्डकका भङ्ग सामान्य नारकियोंके समान है ।

८३. सप्तवदु० ज० वं० तिरिक्ख०-पंचि०-ओरालि०-तेजा०-क०--ओरालि०-अंगो०--प्रसत्यापसत्थ०४--तिरिक्खाणु०--अगु०४--तस०४--णिपि० णिय० अण्ट-गुणव्य० । छसंघ०-दोविहा०-थिरादिष्युग० सिया० । तं तु० । उज्जो० सिथा० अणतगुणव्य० । एवं पंचसंठा०-छसंघ०-दोविहा०-मजिभक्षाणि युगलाणि । थिर० ज० वं० तिरिक्ख०-गणुस०--दोआणु०--उज्जो० सिया० अण्टगुणव्य० । पंचिदियर्द्दो णिय० अण्टगुणव्य० । छसंठा०-छसंघ०-दोविहा०-युभगादिपंचयुग० सिया० । तं तु० । एवं अथिर-सुभासभ-जस०-अजस० । सेसाणि णियोघं ।

पार्वतीक :— अन्नावत् श्री द्युविहारीसागर जी छाटाव

८४. तिरिक्खेसु छण्णि कम्माणि णियोघभंगो । मोहणीयं ओघो । गवरि पञ्चक्खाण०कोध० ज० वं० सत्तक०-पंचणोक० णिय० । तं तु० । एवमण्णमण्णस्त । तं तु० । अरदि० ज० वं० अट्टक०-पुरिस०-भय०-दु० णिय० अण्टगुणव्य० । सोग० णिं० । तं तु० । एवं सोग० ।

८५. समचतुरसंस्थानके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यङ्गगति, पञ्चेन्द्रिय-जाति, औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यङ्गत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, त्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । छह संहनन, दो विहायोगति और स्थिर आदि छह युगलका कदाचित् बन्ध करता है । किन्तु यह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । इसीप्रकार पाँच संस्थान, छह संहनन, दो विहायोगति और मध्यके तीन युगलोंकी मुख्यतासे सन्त्रिकर्ष जानना चाहिए । स्थिर प्रकृतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यङ्गगति, मनुष्यगति, दो आनुपूर्वी और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । पञ्चेन्द्रियजातिदण्डकका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । छह संस्थान, छह संहनन, दो विहायोगति और सुभग आदि पाँच युगलका कदाचित् बन्ध करता है । किन्तु यह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्त्रिकर्ष जानना चाहिए । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य नारकियोंके समान है ।

८६. तिर्यङ्गोंमें छह कर्मोंका भङ्ग सामान्य नारकियोंके समान है । मोहनीय कर्मका भङ्ग शोघके समान है । इतनी विशेषता है कि प्रत्याख्यानावरण क्रोधके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव सात कषाय और पाँच नोकषायका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु यह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार इन प्रकृतियोंका परस्पर सन्त्रिकर्ष जानना चाहिए । किन्तु इनमेंसे किसी एकके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव शेष प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है । जो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । अरसिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव आठ कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । शोकका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु यह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनु-

८५. चतुर्ग०-चतुर्जादि-ब्रह्मसंठा०-ब्रह्मसंय०-चतुर्आणु०-दोविहा०-थावरादि०४-
थिरादिब्रह्म० औघं । पंचिंदि० ज० व० णिरय०--हुँड०-अप्पसत्थ०४-णिरयाणु०-
उप०-अप्पसत्थ०-अथिरादिब्रह्म० णिय० अणंतगुणव्य० । वेडिव०-तेजा०-क०-वेडिव०
अंगो०-पसत्थ०४-जगु०३-तस०४-णिमि० णिय० । तं हु० । एवमेदाओ एकमेकस्स ।
तं हु० ।

८६. ओरालि० ज० व० तिरिक्ख०-एइदि०-तेजा०-क०-हुँड०-पसत्थापसत्थ०४-
तिरिक्खाणु०-जगु०-उप०-थावरादि०४-अथिरादिपंच-णिमि० णिय० अणंतगुणव्य० ।
ओरालि०अंगो० ज० व० तिरिक्ख०-वेइदि०-ओरालि०-तेजा०-हुँड०-असंप०-
पसत्थापसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-जगु०-उप०-तस०-वादर-अपज्ञा०-पत्ते०-अथिरादिपंच-
णिमि० णिय० अणंतगुणव्य० ।

८७. आदाव० ज० व० तिरिक्ख०-एइदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुँड०-पसत्था-
पसत्थवण्ण०४-तिरिक्खाणु०-जगु०४-थावर-वादर-पज्ञा-पत्ते०-अथिरादिपंच-णिमि०
णिय० अणंतगु० । एवं उज्जो० । अप्पसत्थ०४-उप० औघं । एवं पंचिंदियतिरिक्ख०३ ।

भागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार शोककी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए ।

८८. चार गति, चार जाति, छह संस्थान, छह संहनन, चार आनुपूर्वी, दो विहायोगति, स्थावर आदि चार और स्थिर आदि छह युगलका भङ्ग औघके समान है । पञ्चेन्द्रिय जातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव नरकगति, हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, नरक-गत्यानुपूर्वी, उपधात, अप्रशस्त विहायोगति और अस्थिर आदि छहका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । वैक्रियिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुव्य॑क, प्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार इनका परस्पर सञ्जिकर्ष जानना चाहिए । किन्तु वह उसी प्रकार जानना चाहिए जिस प्रकार पञ्चेन्द्रिय जातिकी मुख्यतासे कहा है ।

८९. औदारिकशरीरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यङ्गगति, एकेन्द्रियजाति, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपधात, स्थावर आदि चार, अस्थिर आदि पाँच और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्ड-संस्थान, असम्प्रसास्तपाटिका संहनन, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपधात, त्रस, वादर, अपर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है ।

९०. आतपके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यङ्गगति, एकेन्द्रिय जाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, स्थावर, वादर, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । इसी प्रकार उद्योतकी

णवरि [तिरिक्खबा॒णु० परियत्तमाणिया॒मु का॒दच्च०]

द८. पंचिदि०तिरिक्खब०अपज्ज० पंचण्ण कम्माण्ण णिरयभंगो । णिदाणिहा॒ए०
ज० व० अद्वदं० णि० । तं तु० । एवमण्णमण्णस्स । तं तु० ।

द९, मिच्छ० ज० व० सोलसक०-पंचणोक० णिय० । तं तु० । एवमेदाजो०
एकमेकस्स । तं तु० । सोसं णिरयभंगो ।

१०, तिरिक्खब० ज० व० पंचजादि०-छस्संडाण-छस्संय०--दोविहा०-तस०-थाव-
रादिदसयुग० सिया० । क्लार्कुच्छार्ण ओरालिठ०-शिल्पांडिङ्गप्रस्त्वीप्रस्त्वी०-अगु०-
उप०-णिमि० अण्टगुणवभ० । ओरालि०अंगो०-पर०-उस्सा०-आदाउज्जो० सिया०
अण्टगुणवभ० । तिरिक्खबा॒णु० णिय० । तं तु० । एवं तिरिक्खबा॒णु० ।

मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए। अप्रशास्त वर्णचतुष्क और उपचातकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष औपके समान जानना चाहिए। इसी प्रकार अर्थात् सामान्य तिर्यक्षके समान पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्ष-
त्रिकके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें तिर्यक्षगति और तिर्यक्षगत्यासुपूर्वीकी परिणामा परिवर्तमान प्रकृतियोंमें करनी चाहिए।

द१. पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्ष अपर्याप्तियोंमें पाँच कम्मोंका भङ्ग नारकियोंके समान है। निद्रानिद्राके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव आठ दर्शनावरणका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार इन सबका परस्पर सञ्जिकर्ष जानना चाहिए जो उसी प्रकार होता है जैसा निद्रानिद्राकी मुख्यतासे कहा है।

द२. सिद्धात्वके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव सोलह कषाय और पाँच नोक-
धायका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सञ्जिकर्ष जानना चाहिए। किन्तु इनमेंसे किसी एकके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव शेषका नियमसे बन्ध करता है जो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य नारकियोंके समान है।

द३. तिर्यक्षगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच जाति, छह संस्थान, छह संहनन, दो विद्यायोगति, प्रस और स्थावर आदि दस युगलका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशास्त वर्णचतुष्क, अप्रशास्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। औदारिक आङ्गोपाङ्ग, परघात, उच्छ्रवास, आतप और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। तिर्यक्षगत्यासुपूर्वीका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार तिर्यक्षगत्यासुपूर्वीकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए।

६१. मणुस ० ज० व० पंचिदि०-मणुसाणु०-तस-वादर-एते० णिय० । तं तु० । सेसं तिरिक्खगदिभंगो । एवं मणुसाणु० ।

६२. एईदि० ज० व० तिरिक्ख०-हुंड०-तिरिक्खाणु०-थावर-दूभ०-अणादे० णियथा० । तं तु० । ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०-उप०-णिमि० णिय० अणंतगुणब्ध० । पर०-उस्सा०-आदाउज्जो० सिया० अणंतगुणब्ध० । वादर-सुहुम-पञ्चत०-अपञ्जल्लविश्वसन्धश्चमथिलिङ्गाखुमठ रुद्रिक्खब्लृतं तु० । एवं थावर० ।

६३. बैईदि० ज० व० तिरिक्ख०-हुंड०-असंप०-तिरिक्खाणु०-तस-वादर-एते०-दूभ०-अणादे० णिय० । तं तु० । ओरालि०--तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-पसत्था-पसत्थ०४-अगु०-उप०-णिमि० णिय० अणंतगुणब्ध० । पर०-उस्सा०-उज्जो० सिया० अणंतगुणब्ध० । अप्पस०-पञ्जचापञ्ज०-थिराथिर०-सुभासुभ०-दूभग०-दुस्सर०-जस०-अजस० सिया० । तं तु० । एवं तीईदि०-चदुरिंदि० ।

६४. मनुष्यगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, मनुष्यगत्यानु-पूर्वी, त्रस, वावर और प्रत्येकका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग तिर्यङ्गगतिके समान जानना चाहिए। इसी प्रकार मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए।

६५. एकेन्द्रिय जातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यङ्गगति, हुण्ड संस्थान, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वी, स्थावर, दुर्भग और अनादेयका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपधात और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। परघात, उच्छ्वास, आतप और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। वादर, सूहम, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण और स्थिर आदि तीन युगलका कराचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार स्थावर प्रकृतिकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए।

६६. हीन्द्रिय जातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यङ्गगति, हुण्डसंस्थान, असम्प्राप्तासृपादिकासंहनन, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वी, त्रस, वावर, प्रत्येक, दुर्भग और अनादेयका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोमेङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपधात और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। परघात, उच्छ्वास और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। अप्रशस्त विहायोगति, पर्याप्त, अपर्याप्त, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, दुर्भग, दुःस्वर, यशःकीर्ति और अयशःकीर्तिका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध

६४. पंचिदि० ज० व० तिरिक्ख०--मणुसग०--छसंठा०-छसंघ०-दोआणु०-
दोविहा०-पञ्चतापज्ज०-थिरादिक्ष० सिया० । तं तु० । ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०-
अंगो०-पसत्थापसत्थवण्ण०४-अगु०-उप०-णिमि० णिय० अणंतगुणब्ध० । पर०-
उस्सा०-आदाउज्जो० सिया० अणंतगुणब्ध० ।

६५. एऽप्नेव्वलिं०आत्मव्य कंव तुष्टिष्ठात्मस्तुष्टिंकुञ्ज०-तिरिक्खाणु०-उप०-अप्प-
सत्थ०४-थावरादि०४-अधिरादिपंच० णिय० अणंतगुणब्ध० । तेजा०-क०-पसत्थ०४-
अगु०-णिमि० णि० । तं तु० । एवमेदाओ एकमेकस्स । तं तु० ।

६६. समचदु० ज० व० तिरिक्ख०--मणुस०--छसंघ०-दोआणु०-दोविहा०-
थिरादिक्षयुग० सिया० । तं तु० । पंचिदि०-तस०४ णियमा० । तं तु० । ओरालि०-
करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार
श्रीन्द्रिय और चतुरन्द्रियजातिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

६७. पञ्चेन्द्रियजातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यक्खगति, मनुष्यगति,
छह संस्थान, छह संहनन, दो आनुपूर्वी, दो विहायोगति, पर्याप्ति, अपर्याप्ति और स्थिर आदि
छहका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है
और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह
छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । औदारिकशारीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिक
आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपधात और निर्माणका नियमसे
बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । परवात, उच्चवास, आतप और उथोतका
कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है ।

६८. औदारिकशरीरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यक्खगति, एकेन्द्रिय
जाति, हुण्ड संस्थान, तिर्यक्खगत्यानुपूर्वी, उपधात, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, स्थावर आदि घार और
अस्थिर आदि पाँचका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । तैजसशरीर,
कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह
जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि
अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार
इन तैजसशरीर आदि सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए । किन्तु इनमेंसे किसी
एकके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव शेषका नियमसे बन्ध करता है जो जघन्य अनुभाग
का भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका
बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है ।

६९. समचतुरस्त्रसंस्थानके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यक्खगति, मनुष्य-
गति, छह संहनन, दो आनुपूर्वी, दो विहायोगति और स्थिर आदि छह युगलका कदाचित् बन्ध
करता है । यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका
भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप
होता है । पञ्चेन्द्रियजाति और व्रसचतुष्कका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य
अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य
अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । औदारिकशरीर, तैजस-

तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०४-णिमि०णि० अणंतगुणब्भ० ।
उज्जो० सिया० अणंतगुणब्भ० । एवं समचदुरभंगो-चदुसंडा०-पंचसंघ०-पसत्थ०-सुभग-
सुस्वर-आदे० ।

६७, हुंड० ज० वं० तिरिक्ख०-मणुस०-पंचजादि-क्षसंघ०-दोआणु०-दोचिहा०-
तस०-थावरादिदसयुगल० सिया० । तं तु० । ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थापसत्थ०४-
अगु०-उप०-णिमि०णि० अणंतगुणब्भ० । ओरालि०अंगो०-पर०-उस्सा०-आदाउज्जो०-
सिया० अणंतगुणब्भ० । एवं हुंड०भंगो अथिरादिपंच० । ओरालि०अंगो० तिरिक्खोघं ।

६८, असंपत्त० ज० वं० दोगदि--चदुजादि-क्षसंडाण--दोआणु०--दोचिहा०-
पञ्चतापज्जत्त०-थिरादिक्षयुग० सिया० । तं तु० । सेसं हुंड०भंगो । अप्पसत्थ०४-
उप० णिरयभंगो० ।

६९, पर० ज० वं० एइदि०-ओरालि०--तेजा०-क०-हुंड०-पसत्थापसत्थ०४-
तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-थावर०-सुहुम०-पञ्चत०-साधार-दूधग०-अणादे०--अजस०-
शरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु-
चतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । उद्योतका
कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । इसी प्रकार समचतुरस्त्रसंस्थानके
समान चार संस्थान, पाँच संहस्र, प्रशस्त विद्यायोगति, सुभग, सुस्वर और आदेयकी मुख्यतासे
सञ्चिकर्ष जानना चाहिए ।

६७. हुण्डकसंस्थानके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यक्षगति, मनुष्यगति,
पाँच जाति, छह संहस्र, दो आनुपूर्वी, दो विद्यायोगति और प्रस-स्थावर आदि दस युगलका
कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और
अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह अहस्थान
पतित वृद्धिरूप होता है । औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त
वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपवात और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक
होता है । औदारिक आङ्गोपाङ्ग, परवात, उच्छ्रवास, आतप और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता
है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । इसी प्रकार हुण्डसंस्थानके समान अस्थिर आदि पाँचकी
मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना चाहिए । औदारिक आङ्गोपाङ्गकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष सामान्य
तिर्यक्षोंके समान है ।

६८. असम्भासासूपाटिका संहस्रनके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव दो गति,
चार जाति, छह संस्थान, दो आनुपूर्वी, दो विद्यायोगति, पर्याप्त, अपर्याप्त और स्थिर आदि छह
युगलका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है
और अजघन्य अनुभाग का भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह
छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । शेष प्रकृतियोंका भल्ल हुण्ड संस्थानके समान है । अप्रशस्त
वर्णचतुष्क और उपवातका भल्ल नारकियोंके समान है ।

६९. परधात्तके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव एकेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर,
तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यक्षगत्यालु-
पूर्वी, अगुरुलघु, उपवात, स्थावर, सूहम, पर्याप्त, साधारण, दुभंग, अनादेय, अवशकीर्ति और

णिमि० णि० अणंतगुणव्य० | उस्सा० णि० | तं तु० | थिराथिर-सुभासुभ० सिया० अणंतगुणव्य० | एवं उस्सासं० |

१००. आदाव० ज० व० तिरिक्ख०-एङ्गदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंडसं०-पसत्थापसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-थावर०-वादर०-पज्जत०-पत्ते०-दूभग-अणादे०-णिमि० णि० अणंतगुणव्य० | थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० सिया० अणंतगु० | एवं उज्जो० |

१०१. पसत्थवि० ज० घ० दोगदि०-चदुजादि०-छस्संठा० छस्संघ०-दोआणु०-थिरादिछयुग० सिया० | तं तु० | ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-पसत्था-पसत्थ०४-अगु०-णिमि० णि० अणंतगुणव्य० | उज्जो० सिया० अणंतगुणव्य० | तस०४ सिया० | तं तु० | एवं दुस्सर० | एवं चेव तस० | यत्रि पज्जतापज्जत० सिया० | तं तु० |

निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। उच्छ्वासका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। स्थिर, अस्थिर, शुभ और अशुभका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार उद्योतकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए।

१००. आतपके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यक्षगति, एकेन्द्रियजाति, औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्ड संस्थान, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यक्षगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, स्थावर, वादर, पर्याप्त, प्रलेक, दुर्मग, अतादेय और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्तिका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार उद्योतकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए।

१०२. प्रशस्त विहायोगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव दो गति, चार जाति, छह संस्थान, छह संहनन, दो आनुपूर्वी और स्थिर आदि छह युगलका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। त्रसचतुष्कका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार दुःखर प्रकृतिकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार प्रस प्रकृतिकी मुख्यतासे भी सञ्जिकर्ष जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि यह पर्याप्त और अपर्याप्तका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित वृद्धिरूप होता है।

१०२. बादर० ज० ब० दोगदि-पंचजादि-द्वसंता०--छसंघ०--दोआण०--दोविहा०--तस-थावर-पज्जतापज्जत-पत्ते०-साधार०-थिरादिक्षयुग० सिया० । तं तु० । ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्यापसत्य०४-अगु०-उप०-णिमि० णिय० अणतगुणव्य० । ओरालि०-संगो०-पूर्वाधारा०-साधार०-सुभासुभा० सिया० अणतगुणव्य० । एवं पज्जत-पत्ते० । णवरि पदिपक्खवा ण बंधदि० ।

१०३. सुहुम० ज० ब० तिरिक्ख०-एङ्गदि०-हुड०-तिरिक्खवाण०-थावर०-दुर्भग-अणादे०-अजस० णिय० । तं तु० । ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्यापसत्य०४-अगु०-उप०-णिमि० णिय० अजह० अणतगुणव्य० । पज्जतापज्जत-पत्तेय-साधार०-थिराथिर-सुभासुभ० सिया० । तं तु० । एवं साधार० ।

१०४. अपज्जा० ज० ब० दोगदि-पंचजादि-असंप०-दोआण०-तस०-थावर-बादर-सुहुम-पत्तेय-साधार० सिया० । तं तु० । ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्यापसत्य०४-

१०२. बादर प्रकृतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव दो गति, पौच जाति, छह संस्थान, छह संहनन, दो आनुपूर्वी, दो विहायोगति, त्रस, स्थावर, पर्याप्ति, अपर्याप्ति, प्रत्येक, साधारण और स्थिर आदि छह युगलका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपधात और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । औदारिक आङ्गोपाङ्ग, परधात, उच्छ्वास, आतप और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । इसी प्रकार पर्याप्ति और प्रत्येककी मुख्यतासे भी सन्त्रिक्ष जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि यह प्रतिपक्ष प्रकृतियोंका बन्ध नहीं करता ।

१०३. सूदमके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यङ्गगति, एकेन्द्रिय जाति, हुण्डसंस्थान, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वी, स्थावर, दुर्भग, अनादेय और अयशःश्रीर्तिका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपधात और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । पर्याप्ति, अपर्याप्ति, प्रत्येक, साधारण, स्थिर, शुभ और अशुभका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार साधारणकी मुख्यतासे सन्त्रिक्ष जानना चाहिए ।

१०४. अपर्याप्तिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव दो गति, पौच जाति, असम्प्राप्तासु-पाटिका संहनन, दो आनुपूर्वी, त्रस, स्थावर, बादर, सूदम, प्रत्येक और साधारणका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क,

अगु०-उप०-णियि० णि० अणंतगुणवभ० । हुङ०-अयिरादिपंच णिय० । तं तु० ।
ओरालि०अंगो० सिया० अणंतगुणवभ० ।

१०५. स्थिर० ज० व० दोगदि-पंचजादि-क्षसंठा०-क्षसंय०-दोआणु०-दोविहा०-
तस-थावर-बावर-सुहुय-परोय-साधारण-सुभगादिपंचयुग० सिया० । तं तु० । ओरालि०-
तेजा०-क०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०४-णियि० णि० अणंतगुणवभ० । ओरालि०अंगो०-
आदाउज्जो० सिया० अणंतगुणवभ० । पज्जत० णि० । तं तु० । एवं सुभ-ज्ञस० ।
णवरि जस० सुहुय-साधारण-वज्जा० । सुहुय-सञ्चञ्चयपञ्चतथाण० सञ्चविगलिदि०-पुढ०-
आड०-वणरफटिपत्रे-वणरफटि-णियोदाण० च । तेउ-बाऊण० पि तं चेव । णवरि
तिरिक्खव०-तिरिक्खवाण०-णीचा० धुर्वं कादच्च० । मणुस०-मणुसाण०-उष्णा० वज्जा० ।
णवरि अण्णसत्थ०४-उप० णिय० । तं तु० । सञ्चवएहंदियाण० पि तं चेव । णवरि
तिरिक्खवगदि०३ सेड०भंगो० । अण्णसत्थवण० ज० व० तिरिक्खव०-तिरिक्खवाण०

अगुरुलघु, उपचात और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है ।
हुण्ड संस्थान और अस्थिर आदि पाँचका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका
भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध
करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । औदारिक आङ्गोपाङ्गका कदाचित् बन्ध करता
है जो अनन्तगुणा अधिक होता है ।

१०६. स्थिर प्रकृतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव दो गति, पाँच जाति, छह
संस्थान, छह संहनन, दो आनुपूर्वी, दो विहायोगति, प्रस, स्थावर, बावर, सूक्ष्म, प्रत्येक, साधा-
रण और शुभ आदि पाँच युगलका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो वह जघन्य
अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य
अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । औदारिक शारीर, तैजस-
शारीर, कार्मणशारीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क और निर्माणका
नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । औदारिक आङ्गोपाङ्ग, आतप और
उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । पर्याप्तका नियमसे बन्ध करता
है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है ।
यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार
शुभ और यशःकीर्तिकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि यशःकीर्तिका
मूल्य और साधारणको छोड़कर सञ्जिकर्ष कहना चाहिए । इसी प्रकार अर्थात् तिर्यङ्ग अपर्याप्तकों
के समान सब अपर्याप्तक, सब विकलेन्द्रिय, पृथिवीकायिक, जलकायिक, वनस्पतिकायिक
प्रत्येक शारीर, वनस्पतिकायिक और निरोद जीवोंके जानना चाहिए । तेजस्कायिक और वायु-
कायिक जीवोंके भी यही सञ्जिकर्ष है । इतनी विशेषता है कि इनमें तिर्यङ्गगति, तिर्यङ्गत्यानुपूर्वी
और नीचगोत्रको ध्वन करना चाहिए । तथा मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रको छोड़-
कर सञ्जिकर्ष कहना चाहिए । इतनी और विशेषता है कि अप्रशस्त वर्ण चतुष्क और उपचातका
विशेषसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनु-
भागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित
वृद्धिरूप होता है । सब एकेन्द्रियोंके भी यही सञ्जिकर्ष है । इतनी विशेषता है कि इनमें तिर्यङ्गगति-
क्रिका भङ्ग अग्निकायिक जीवोंके समान है । तथा अप्रशस्त वर्णके जघन्य अनुभागका बन्ध

१. ता० प्रतौ तिरिक्ख०३ इति पाठः ।

सिया० | तं तु० | मणुस०-मणुसाणु०-उज्जोव० सिया० अणंतगुणव्यम० | पंचिदियादि-
धुवियाओ पिय० अणंतगुणव्यम० | अप्ससत्थगंथ०३-उप० पिय० | तं तु० |

१०६. मणुस०३ खवियाणं आहारदुगं तिस्यय० ओषं । सेसं पंचिदियतिरिक्ख-
भंगो ।

१०७. देवेसु सत्तणं कम्माणं पिरयभंगो । तिरिक्ख० ज० बं० एङ्दिप०-
द्वसंठा०-छसंघ०-दोविशा०-थावर०--थिरादिछ्युग० सिया० | तं तु० | पंचिदिप०-
यान्देशाक् :— इत्याद्य श्री लक्ष्मीलालगत चृष्ट यहांतर्व
आोरालि०अंगो०-आदाउज्जा०-तंस० सिया० अणंतगुणव्यम० | ओरालि०-तेजा०-क०-
पसत्थापसत्थ०४—अगु०४—बादर-पज्जत्त-पत्ते०-णिमि० णि० अणंतगुणव्यम० | तिरि-
क्खाणु० पिय० | तं तु० | एवं तिरिक्खाणु० | मणुसगदि० तिरिक्खभंगो । णवरि
एङ्दियं आदाउज्जोवं थावरं च वज्ज । एवं मणुसाणु० ।

१०८. एङ्दिप० ज० बं० तिरिक्ख०-हुंड०-तिरिक्खाणु०-थावर-दूभग-अणादे०
पिय० | तं तु० | ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थापसत्थ०४—अगु०४—बादर-पज्जत्त०-
करनेषाला जीव तिर्यङ्गगति और तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वीका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता
है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभाग का भी बन्ध करता है । यदि
अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । मनुष्यगति,
मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है ।
पञ्चेन्द्रियजाति आदि ध्रुव प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है ।
अप्रशस्त गन्ध आदि तीन और उपघातका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका
भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका
बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है ।

१०६. मनुष्यत्रिकमें क्षणक प्रकृतियां, आहारकृति और तीर्थद्वार प्रकृतिका भङ्ग ओषके
समान है । तथा शेष प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यङ्गोंके समान है ।

१०७. देवोंमें सात कर्मांका भङ्ग नारकियोंके समान है । तिर्यङ्गगतिके जघन्य अनुभागका
बन्ध करनेषाला जीव एकेन्द्रिय जाति, छह संस्थान, छह संहनन, दो विद्यायोगति, स्थावर और
स्थिर आदि छह युगलका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी
बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध
करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग,
आतप, उद्योत और त्रसका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । औदारिक
शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क,
वादर, पर्याप्ति, प्रत्येक और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है ।
तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है
और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह
छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना
चाहिए । मनुष्यगतिका भङ्ग तिर्यङ्गगतिके समान है । इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय जाति,
आतप, उद्योत और स्थावरको छोड़कर वह सञ्चिकर्ष कहना चाहिए । इसी प्रकार मनुष्यगत्यानुपूर्वी
की मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना चाहिए ।

१०८. एकेन्द्रिय जातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेषाला जीव तिर्यङ्गगति, हुण्ड-
संस्थान, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वी, स्थावर, दुर्भग और अन्देशका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु

णिमि० णिय० अणंतगुणवभ० । आदाउज्जो० सिया० अणंतगुणवभ० । थिराथिर-सुभा-
मुभ-जस०-अजस० सिया० । तं तु० । एवं थावर० ।

१०९. पंचिदि० ज० व० तिरिक्ख०-हुँड०-असंप०-अप्पसत्थ०४-तिरि-
क्खाणु०-उप०-अप्पसत्थ०-अथिरादिष्ठ० णिय० अणंतगुणवभ० । ओरालि०-
तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-पसत्थ०४-अगु०३-तस०४-णिमि० णि० । तं तु० ।
उज्जोव० सिया० । तं तु० । एवं ओरालि०अंगो०-तस० ।

११०. ओरालि० ज० व० तिरिक्ख०-हुँड०-अप्पसत्थवण्ण०४-तिरिक्खाणु०-
उप०-अथिरादिपंच णि० अणंतगुणवभ० । इंदि०-असंप०-अप्पसत्थ०-थावर०-दुससर०
सिया० अणंतगुणवभ० । ओरालि०अंगो०-आदाउज्जो०-तस० सिया० । तं तु० । तेजा०-
क०-सुरस्त्थ०४-अगु०३-उससा०४-थावर०-जिहव०-पिमि० णि० । तं तु० । एवं

वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्तवर्ण चतुष्क, अप्रशस्तवर्ण चतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, बादर, पर्याप्त और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । आतप और उद्घोतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशः-कीति और अवशःकीर्तिका कदाचित् बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार स्थावर प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

१०८. पञ्चेन्द्रिय जातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यङ्गगति, हुण्ड संस्थान, असम्प्राप्तासृपादिका संहनन, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वी, उपवात, अप्रशस्त विहायोगति और अस्थिर आदि छहका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु-त्रिक, त्रस चतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है जो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । उद्घोतका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार औदारिक आङ्गोपाङ्ग और त्रस प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

११०. औदारिकशरीरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यङ्गगति, हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वी, उपवात और अस्थिर आदि पाँचका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । एकेन्द्रिय जाति, असम्प्राप्तासृपादिका संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, स्थावर और दुःस्वरका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । औदारिक आङ्गोपाङ्ग, आतप, उद्घोत और त्रसका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । तैजसशरीर, कार्मण-शरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, परवात, उच्छ्रवास, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभाग

तेजा०-क०-पसत्थ०-अगु०-उज्ज०-बादर-पञ्जत-पत्त०-णिमिण ति । आदार्व एवं चेव । णवरि एईदि०-यावर० णिय० अणंतगुणव्य० । चदुसंठा०-चदुसंघ०-दोविहा०-सुभग-दोसर०-अणादे० पढमपुडविभंगो ।

१११. हुंड० ज० बं० दोगदि-एईदि०-छसंघ०-दोआणु०-दोविहा०-यावर-थिरादिव्युग० सिया० । तं तु० । पंचिंदि०-ओरालि०अंगो०-आदाउज्जो०-तस० सिया० अणंतगुणव्य० । ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थापसत्थ०-अगु०-बादर-पञ्जत-पत्त०-णिमि० णि० अणंतगु० । एवं हुंडभंगो दूभग-अणादे० । अप्सत्थ०-उष० णिरयभंगो ।

११२. थिर० ज० बं० दोगदि-एईदि०-छसंठा०-छसंघ०-दोआणु०-दोविहा०-यावर०-सुभादिर्च्युग० सिया० । तं तु० । पंचि०-ओरालि०अंगो०-आदाउज्जो०-तस०-तित्थ० सिया० अणंतगुणव्य० । ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थापसत्थ०-अगु०-बादर०-पञ्जत-पत्त०-णिमि० णि० अणंतगु० । एवं अथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० । तित्थ० णिरयभंगो ।

का भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, उद्योत, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणकी मुख्यतासे सभिकर्ष जानना चाहिए । आतपकी मुख्यतासे भी सभिकर्ष इसी प्रकार जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रियजाति और स्थावरका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । चार संस्थान, चार संहनन, दो विहायोगति, सुभग, दो स्वर और अनादेशका भङ्ग पहली पृथिवीके समान है ।

११३. हुण्डसंस्थानके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला । जीव दो गति, एकेन्द्रिय जाति, छह संहनन, दो आतुपूर्वी, दो विहायोगति, स्थावर और स्थिर आदि वह युगलका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, आतप, उद्योत और प्रसका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मण शरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । इसी प्रकार हुण्ड संस्थानके समान हुर्भंग, अनादेश की मुख्यतासे सभिकर्ष जानना चाहिए । अप्रशस्त वर्णचतुष्क और उपघातकी मुख्यतासे सभिकर्ष नारकियोंके समान है ।

११४. स्थिर प्रकृतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला । जीव दो गति, एकेन्द्रिय जाति, छह संस्थान, छह संहनन, दो आतुपूर्वी, दो विहायोगति, स्थावर और शुभग दो युगलका कदाचित् बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, आतप, उद्योत, प्रस और तीर्थकुरका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । इसी प्रकार अस्थिर, हुण्ड, अगुरु, यशस्वीति और अयस्मीतिकी मुख्यतासे सभिकर्ष जानना चाहिए । तीर्थकुर

११३. घबण०—वाणवेत्तर—जोदिसि०—सोधम्मीसार्ण सत्तण्ण कम्माणं देवोघं ।
तिरिक्लग० ज० व० दोजादि०—छसंवाण—छसंघ०—दोविहा०—तस॒—थावर—थिरादि०—
छयुग० सिया० । तं हु० । ओरालि०—तेजा०—क०—पसत्थापसत्थ०४—बादर—पज्जत-
पत्ते०—णिमि० णि० अणतग० । ओरालि०—अंगो०—आदाउज्जो० सिया० अणतग० ।
खिस्क्खाणु० णिय० । तं हु० । एवं तिरिक्लगाणु० ।

११४. मणुसग० ज० व० तिरिक्लगदिभंगो । णवरि पंचि०—मणुसाणु०—तस॒—
णि० । तं हु० । एवं मणुसाणु० । एङ्दि०—थावर० देवोघं ।

११५. पंचिदि० ज० व० दोगदि०—छसंवाण—छसंघ०—दोआण०—दोविहा०—
थिरादिछयुग० सिया० । तं हु० । ओरालि०—तेजा०—क०—ओरालि०—अंगो०—पसत्था-
पसत्थ०४—अगु०४—बादर—पज्जत—पत्ते०—कृष्णिष्ठि० णि० आस्थांसाणु० भाव० उज्जो० तिरिक्लग
प्रकृतिका भङ्ग नारकियोंके समान है ।

११६. भवनवासी, छ्यन्तर, ज्योतिषी और सौधर्म ऐशान कल्पके देवोंमें सात कर्मोंका
भङ्ग सामान्य देवोंके समान है । तिर्यक्कगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव दो जाति,
छह संस्थान, छह संहनन, दो विहायोगति, प्रस, स्थावर और स्थिर आदि छह युगलका कदाचित्
बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी
बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता
है । औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, बादर,
पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है ।
औदारिक आङ्गोपाङ्ग, आतप और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता
है । तिर्यक्कगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता
है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो
वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार तिर्यक्कगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष
जानना चाहिए ।

११८. मनुष्यगति के जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवका भङ्ग तिर्यक्कगतिके समान
है । इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय जाति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और त्रसका नियमसे बन्ध होता है ।
किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है ।
यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार
मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यता सञ्चिकर्ष जानना चाहिए । एकेन्द्रिय जाति और स्थावर प्रकृतिकी
मुख्यतासे सञ्चिकर्ष सामान्य देवों के समान है ।

११५. पञ्चेन्द्रिय जातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव दो गति, छह संस्थान,
छह संहनन, दो आनुपूर्वी, दो विहायोगति और स्थिर आदि छह युगलका कदाचित् बन्ध करता
है । यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका
भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप
होता है । औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क,
अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणका नियमसे बन्ध करता
है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक

अणंतगुणव्य० । तस० णि० । तं तु० । एवं पंचिदिय० भूम्गो चदुसंडा०-चदुसंघ०-
दोविहा०-तस-सुभग-दोसर०-आदे० ।

११६. हुँड० ज० वं० दोगदि-दोजादि-क्षसंघ०-दोआणु० दोविहा०-तस-थावर-
थिरादिव्युग० सिया० । तं तु० । सेसं तिरिक्खगदिभंगो । एवं हुँड० भूम्गो दूभग-
अणादे० । एवं चेक्षणिक्षकिर-सुभगव्य-असुक्षमाल्लस्त्र का षड्हिन्दि तिथ्य० सिया०
अणंतगुणव्य० ।

११७. ओरालि० ज० वं० तिरिक्ख०-एङ्द्रिदि०-हुँड०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-
उप०-थावर-अथिरादिपंच० णि० अणंतगुणव्य० । तेजा०-क०-पसत्थ०४-अगु०३-
बादर-पञ्चत-पत्ते०-णिमि० णिय० । तं तु० । आदाउज्जो० सिया० । तं तु० । एवं
एदाओ एकमेकस्स । तं तु० ।

११८. ओरालि० अंगो० ज० वं० तिरिक्ख०-पंचिदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-
हुँडसंडा०-असंप०-पसत्थापसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-अप्पसत्थ०---तस०४-
होता है । ब्रह्मका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और
अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान
पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय जातिके समान चार संस्थान, चार संहनन,
दो विहायोगति, ब्रह्म, सुभग, दो स्वर और आदेयकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

११९. हुण्ड संस्थानके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव दो गति, दो जाति, छह
संहनन, दो आनुपूर्वी, दो विहायोगति, ब्रह्म, स्थावर और स्थिर आदि छह युगलका कदाचित्
बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य
अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित
वृद्धिरूप होता है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग तिर्यङ्गगतिके समान है । इस प्रकार हुण्ड संस्थानके समान
दुर्भाग और अनादेय की भुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । तथा इसी प्रकार स्थिर, अस्थिर,
शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्तिकी भुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । इतनी विशेषता
है कि तीर्थकूर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है ।

१२०. औदारिक शरीरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यङ्गगति, एकेन्द्रिय-
जाति, हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वी, उपवात, स्थावर और अस्थिर
आदि पाँचका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । तैजसशरीर,
कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणका नियमसे
बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभाग का
भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप
होता है । आतप और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनु-
भागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभाग
का बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार इन प्रकृतियों का
परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए किन्तु वह उसी प्रकारका होता है ।

१२१. औदारिक आङ्गोपाङ्गके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यङ्गगति, पञ्च-
न्द्रिय जाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, असम्प्राप्तासुपादिका संहनन,
प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायो-

अथिरादिक्ष०-णिमि० णिय० अणंतगुणव्य० | उज्जो० सिया० अणंतगुणव्य० ।

११६. सणककुमार याव सहस्रार ति पदमषुट्विभंगो । आणद याव णव-
गेवज्ञा ति सत्तण्णं कम्पाणं देवोघं । मणुस० ज० बं० पंचिदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-
ओरालि०-अंगो०--पसत्थ०४-मणुसाणु०-अगु०३-तस४-णिमि० णि० । तं तु० ।
हुँ०-असं०-अप्पसत्थ०४-उप०-अप्पसत्थवि०-अथिरादिक्ष० णि० अणंतगुणव्य० ।
एवं मणुसगदिभंगो पंचिदियादि तं तु० पदिदाणं सञ्चारणं ।

१२०. समचदु० ज० बं० मणुस०-पंचिदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०-
अंगो०-पसत्थापसत्थ०४-मणुसाणु०-अगु०४-तस०४-णिमि० अणंतगुणव्य० । छसंघ०-
दोविहा०-थिरादिक्षयुग० सिया० । तं तु० । एवं पंचसंठा०-छसंघ०-दोविहा०-थिरादि-
क्षयुग० । णवरि तिणियुग०-तित्थय० सिया० अणंतगुणव्य० । अप्पसत्थ०४-उप०-
तित्थयरं च देवोघं ।

१२१. अणुदिस याव सञ्चदु ति सत्तण्णं कम्पाणं आणदभंगो । णवरि थीण-
भिक्षिक्ष०-मिच्छेष्ट-अणंतीणु०४-इत्थ०च्छीकुसरुच्छीचा० वज । मणुस० ज० बं०

गति, प्रसच्चतुष्क, अस्थिर आदि वह और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा
अधिक होता है । उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है ।

११६. सानकुमार कल्पसे लेकर सहस्रार कल्प तकके देवोंमें प्रथम पुथिवीके समान भङ्ग
है । आनत कल्पसे लेकर नी ग्रैवेयक तकके देवोंमें सात कर्मोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है ।
मनुष्यगतिके जबन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिकशरीर, तैजस-
शरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुत्रिक,
प्रसच्चतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता
है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो
वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । हुण्डसंस्थान, अस्त्राप्तासूपाटिका संहनन, अप्रशस्त
वर्णचतुष्क, उपघात, अप्रशस्त विहायोगति और अस्थिर आदि छहका नियमसे बन्ध करता है जो
अनन्तगुणा अधिक होता है । इसी प्रकार मनुष्यगतिके समान पञ्चेन्द्रिय जाति आदि 'तं तु'
पतित सब प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष कहना चाहिए ।

१२०. समचतुरस्त्र संस्थानके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव मनुष्यगति, पञ्चे-
न्द्रिय जाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क,
अप्रशस्त वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क और निर्माणका नियमसे
बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । छह संहनन, दो विहायोगति और स्थिर आदि
छह युगलका कदाचित् बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और
अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह
स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार पाँच संस्थान, छह संहनन, दो विहायोगति और
स्थिर आदि छह युगलकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि तीन
युगल और तीर्थकुर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । अप्रशस्त-
वर्णचतुष्क, उपघात और तीर्थकुर प्रकृतिकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष सामान्य देवोंके इन प्रकृतियोंकी
मुख्यतासे जैसा कह आये हैं वैसा है ।

१२१. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें सात कर्मोंका भङ्ग आनत कल्पके समान
है । इतनी विशेषता है कि स्त्यानगुणित्रिक, मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार, स्त्रीवेद, तपुंसकवेद

आणदंभंगो । णवरि अप्पसत्थ०४—उप०—अधिर०—असुभ०—अजस० णिय० अणैत-
गुणबभ० । समचहु०-वज्जरि०-पसत्थिं०-सुभग-सुस्सर०-आदे० णिं० । तं तु० ।
तित्थ० सिया० । तं तु० । एवं तं तु० पदिदाओ एकमेकस्स । तं तु० । अप्पसत्थ०४—
उप० देवोघं ।

१२२. थिर० ज० वं० सुभासुभ-जस०-अजस० सिया० । तं तु० । सित्थय०
सिया० अणंतगुणबभ० । एवं तिणियुग० ।

१२३. पंचिंदि०—सस०२—पदप्रण०—पंचवचि०—कायजोगि०—ओरालियका०—
कोधादि०४—चवखु०—अचकखु०—भवसि०—मिछ्छादि०—मदि०—सुद०—विभंग०—असंजद०—
सणिण-असणिण-आहारग ति ओघभंगो । णवरि किंचि विसेसो णादच्चो । ओरालिय-
का० मणुसोघं । णवरि तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु० तिरिक्खोघं । कोधे कोधसंज० ज०
वं० तिणं संज० णिं० जहणा । माणे माणसंज० ज० वं० दोसंज० णिं० जहणा ।

और नीचगोत्रको छोड़कर समिक्षिकों कहने चाहिए। किन्तु यीकात्मक जीवन्य अनुभागका बन्ध करने
वाले देवका भङ्ग आमत कल्पके समान है। इतनी विशेषता है कि अप्रशस्त वर्ण चतुष्क, उपषात,
अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्तिका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है।
समच्छुरज्ञ संस्यान, वर्जपीभनाराच संहनम, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर और आदेवका
नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका
भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप
होता है। तीर्थक्षुर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो वह जघन्य अनुभाग
का भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका
बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार 'तं तु' पतित जितनी प्रकृ-
तियाँ हैं उनकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए। किन्तु इनमेंसे किसी एकके जघन्य अनुभागका
बन्ध करनेवाला जीव शेषका यथासम्भव बन्ध करता है। जो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता
है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो
वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। अप्रशस्त वर्ण चतुष्क और उपषात प्रकृतिकी मुख्यतासे
सञ्जिकर्ष जैसा इनकी मुख्यतासे सामान्य देवोंके कह आये हैं उसी प्रकार यहाँ जानना चाहिए।

१२४. स्थिर प्रकृतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति
और अयशःकीर्तिका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध
करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है
तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। तीर्थक्षुर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्त-
गुणा अधिक होता है। इसी प्रकार तीन युगलोंकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए।

१२५. पञ्चेन्द्रियद्विक, त्रसद्विक, पाँचों मनोयोगी, पाँचों वचनयोगी, काययोगी, औदा-
रिककाययोगी, कोधादि चार कषायवाले, चक्षुदर्शनी, अचक्षुदर्शनी, भव्य, मिथ्याहृषि, मत्यक्षानी,
श्रुत्क्षानी, विभक्षक्षानी, असंयत, संदी, असंदी और आदारक जीवोंके ओषके समान भङ्ग है।
इतनी विशेषता है कि कुछ विशेषता जाननी चाहिए। औदारिककाययोगी जीवोंमें सामान्य मनुष्यों
के समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि यहाँ तिर्थक्षगति और तिर्थक्षगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे
सञ्जिकर्ष जिस प्रकार सामान्य तिर्थक्षोंमें इन प्रकृतियोंकी मुख्यतासे कहा है उस प्रकार ज्ञानना
चाहिए। कोधक्षयमें कोध संबद्धज्ञनके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तीन संबद्धज्ञोंका

मायाए मायसंजो जो बं० लोभसंजो णि० जहणा० सेसाणं मोहविसेसो पादव्वो ।

१२४. ओरालियपिस्से सत्तण्णं कम्माणं देवोयं । तिरिक्खव०--तिरिक्खाणु० ओयं । यणुस०-पंचजादि-ब्रह्मसंठाण-ब्रह्मसंघ०-मणुसाणु०-दोविहा०-तस-थावरादि०४-सुभग-दूधग-सुस्सर-दुस्सर-आदे०-अणादे० पंचिदि०तिरि०अपज्ज०भंगो । देवग० जो बं० पंचिदि०तेजा०-क०-समचदु०-पसत्थपसत्थ०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-अथिर-अमुभ-सुभग-सुस्सर-आदे०-अजस०-णिमि० णिय० अणतगुणव्वभ० । वेऽव्विं०-वेऽव्विं० अंगो०--देवाणु० णि० । तं तु० । तित्थ० सिया० । तं तु० । एवं चदुपगदीओ० । ओरालिय-तेजङ्गादीओ० ओरालि०अंगो०-पर०-उस्सा०-आदाउज्जो० पंचिदि०तिरि०-अपज्जत्तभंगो ।

१२५. अप्पसत्थवण्ण० जं० बं० देवगदि०पसत्थपगदीणि० णिय० अणतगुणव्वभ० । अप्पसत्थगंध०३-उप० णि० । तं तु० । तित्थ० सिया० अणतगुणव्वभ० । विरादि-नियमसे जघन्य अनुभागबन्ध करता है । मानकषायमें मानसंज्ञलतका जघन्य अनुभागबन्ध करने-वाला जीव हो संज्ञलनोंका नियमसे जघन्य अनुभागबन्ध करता है । सायक्षायमें माया संज्ञलत-का जघन्य अनुभागबन्ध करने-वाला जीव लोभ संज्ञलतका नियमसे जघन्य अनुभागबन्ध करता है । शेष प्रकृतियोंका मोहके समान विशेष जानना चाहिए ।

१२६. औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें सात कर्मोंका भज्ज सामान्य देवोंके समान है । तिर्यङ्गगति और तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वीका भज्ज औषधके समान है । मनुष्यगति, पौच जाति, छह संस्थान, छह संहसन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, हो विहायोगति, त्रस-स्थावर आदि चार युगल, सुभग, दुर्भग, सुस्वर, दुःस्वर, आदेय और अनादेयकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जिस प्रकार इन प्रकृतियोंकी मुख्यतासे पञ्चेन्द्रिय तिर्यङ्ग अपर्याप्तिकोंके कह आये हैं उस प्रकार जानना चाहिए । देवगति के जघन्य अनुभागका बन्ध करने-वाला जीव पञ्चेन्द्रियजाति, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतु-रससंस्थान, प्रशस्त चर्णचतुष्क, अप्रशस्त चर्णचतुष्क, अगुरुलघुन्तुष्क, प्रशस्त विद्वयोगति, रससंस्थान, प्रशस्त चर्णचतुष्क, अप्रशस्त चर्णचतुष्क, अयशाकीर्ति और निर्माणका नियमसे बन्ध त्रसचतुष्क, अस्थिर, अमुभ, सुभग, सुख्वर, आदेय, अयशाकीर्ति और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । वैक्षिकशरीर, वैक्षिक आङ्गोपाङ्ग और देवगत्यानु-करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य पूर्वीका नियमसे बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । और वैक्षिकशरीर आदि चार प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना चाहिए । औदारिकशरीर और तैजसशरीर आदि तथा औदारिक आङ्गोपाङ्ग, परवात, उच्छ्वास, आतप और उच्छीतका भज्ज पञ्चेन्द्रिय तिर्यङ्ग अपर्याप्तिकोंके समान है ।

१२७. अप्रशस्त चर्णके जघन्य अनुभागका बन्ध करने-वाला जीव देवगति आदि प्रशस्त प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । अप्रशस्त गन्ध आदि तीन और उपघातका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक स्थान पतित वृद्धिरूप होता है ।

तिणिणयुग० पंचिदि०तिरि०अपज्जतभंगो । णवरि तिरिक्ख०--देवगदि-बेउच्चि०-
आरालि०-बेउच्चि०अंगो०-दाआणु०-पर०-उस्सा०-आदाउज्जो०-तित्थ० सिया० अणंत-
गुणब्भ० ।

१२६. बेउच्चियकायजोगीसु सत्पणं कम्पाणं देवभंगो । तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु०
 णिरयोघं । यणुस०-मणुसाणु० देवोघभंगो । एइदि०-थावर० देवोघभंगो । णवरि
 तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु० णिय० अणंतगुणब्भ० । पंचिदि०-ओरालि०अंगो०-तस०
 णिरयोघं । ओरालि० ज० ब० तिरिक्ख०-हुँड०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-उप०-
 अथिरादिपंच० णि० अणंतगुणब्भ० । एइदि०-असंप०-अप्पसत्थ०-थावर-दुस्सर०-
 सिया० अणंतगुणब्भ० । पंचिदि०-ओरालि०अंगो०-आदाउज्जो०-तस० सिया० ।
 तं तु० । तेजा-क०-न्यसत्थ०४-अगु०३-बादर-पज्जत-पते०-णिमि० णि० । तं तु० ।
 एवं तेजइगादीणं एकमेकस्स । तं तु० । सेसाणं देवोघं । एवं बेउच्चियमि० ।

१२७. आहार०-आहारमि० सत्पणं कम्पाणं अणुदिसभंगो । णवरि अटक०
 होता है । स्थिर आदि तीन युगलोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यङ्ग अपर्याप्तिकोंके समान है । इतनी
 विशेषता है कि यह तिर्यङ्गगति, देवभूति, वैक्रियिक शारीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वैक्रियिक
 आङ्गोपाङ्ग, दो अनुपूर्वी, परघात, उच्छ्वास, आतप, उद्योत और तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध
 करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है ।

१२८. वैक्रियिककाययोगी जीवोंमें सात कर्मोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है । तिर्यङ्ग-
 गति और तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वीका भङ्ग सामान्य नारकियोंके समान है । मनुष्यगति और मनुष्य-
 गत्यानुपूर्वीका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है । एकेन्द्रियजाति और स्थावरका भङ्ग
 सामान्य देवोंके समान है । इतनी विशेषता है कि यह तिर्यङ्गगति और तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वीका
 नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग
 और त्रसका भङ्ग सामान्य नारकियोंके समान है । औदारिक शारीरके जघन्य अनुभागका बन्ध
 करनेवाला जीव तिर्यङ्गगति, हुँड संस्थान, अप्रशस्त वर्ण चतुष्क, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वी, उपघात
 और अस्थिर आदि पाँचका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । एकेन्द्रिय
 जाति, असम्प्राप्तासृपाटिका संदर्भ, अप्रशस्त विहायोगति, स्थावर और दुःस्वरका कदाचित्
 बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, आतप,
 उद्योत और त्रसका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी
 बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध
 करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । तैवसशारीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्ण
 चतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्मणिका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु
 वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि
 अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार
 तैवसशारीर आदि प्रकृतियोंकी मुख्यतासे परस्पर सञ्जिकर्त्ता जानना चाहिए । किन्तु इनमेंसे किसी
 एकके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव शेषका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य
 अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य
 अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग
 सामान्य देवोंके समान है । इसी प्रकार वैक्रियिकमिश्रकाययोगी जीवोंके जानना चाहिए ।

१२९. आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें सात कर्मोंका भङ्ग अनुदिशके

बज । देवगदि० जं० बं० पंचिं०-वेउच्चिं०-तेजा०-क०-समचह०-वेउच्चिं०अंगो०-
पसत्थ०४-देवाणु०-अगु०३-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्मर-आदे०-णिमि० णि० ।
तं तु० । अप्पसत्थ०४-उप०-अथिर-असुभ-अजस० सिय० अणंतगुणव्य० । तित्थ०
सिया० । तं तु० । एवं देवगदिआदीओ तप्याओगाओ तित्थयरं च एकमेकस्त । तं तु० ।
अप्पसत्थ०४-उप० ओघं ।

१२८. थिर० ज० बं० देवगदिसंजुत्ताणं पसत्थापसत्थाणं पगदीणं णिय० अणंत-
गुणव्य० । सुभासुभ-जस०-अजस० सिया० । तं तु० । तित्थ० सिया० अणंतगुणव्य० ।
एवं अथिर-सुभ-असुभ-जस०-अजस० ।

१२९. कम्मइ० सत्तण्णं कम्माणं देवोयभंगो । तिरिक्ख०-मणुसग०-चतुजादि-
छसंठा०-छसंघ०-दोआण०-दोविहा०-थावरादि४-थिरादिछयुग० ओघं । देवगदिष्ठ
ओरालियमिस्स०भंगो । पंचिंदि० ज० बं० तिरि०—हुंड०-असंप०-अप्पसत्थ०४-
समान है । इतनी विशेषता है कि आठ कषायोंको छोड़कर सञ्जिकर्ष कहना चाहिए । देवगसिके
जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रियजाति, वैक्रियिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर,
समचतुरलसंस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुत्रिक, प्रशस्त
विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्मर, आदेय और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु
वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि
अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । अप्रशस्त वर्ण
चतुष्क, उपघात, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्तिका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा
अधिक होता है । तीर्थकुर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो जघन्य
अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनु-
भागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार तत्प्रायोग्य
देवगति आदि और तीर्थकुर प्रकृतिकी मुख्यतासे परस्पर सञ्जिकर्ष जानना चाहिए । किन्तु इनमेंसे
किसी एकके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव शेषका यथासम्बन्ध बन्ध करता है । जो
जघन्य अनुभागबन्ध भी करता है और अजघन्य अनुबन्ध भी करता है । यदि अजघन्य अनुभागका
बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । अप्रशस्त वर्णचतुष्क और उपघातका
भङ्ग ओघके समान है ।

१२८. स्थिर प्रकृतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव देवगति संयुक्त प्रशस्त
और अप्रशस्त प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । शुभ, अशुभ,
यशःकीर्ति और अयशःकीर्तिका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो जघन्य
अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य
अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । तीर्थकुर प्रकृतिका
कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । इसी प्रकार अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशः-
कीर्ति और अयशःकीर्तिकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए ।

१२९. कार्मणकाययोगी जीवोंमें सात कर्मोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है । तिर्थकुरगति,
मनुष्यगति, चार जाति, छह संस्थान, छह संहनन, दो आनुपूर्वी, दो विहायोगति, स्थावर आदि
चार और स्थिर आदि छह युगलका भङ्ग ओघके समान है । देवगति चतुष्कका भङ्ग औदारिक-
सिशकाययोगी जीवोंके समान है । पञ्चेन्द्रिय लातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव

६० गार्हिकीक :- आचार्य अमृतुप्रसादभगवंगद्विमोज

तिरिक्खाणु०-उप०-अप्पस्त्थ०-अथिरादिष्ट०-णिमि० णि० अणंतगुणवभ० । ओरालि-यादि० णि० । तं तु० । उज्जो० सिया० । तं तु० । एवं ओरालि०अंगो॑-तस० ।

१३०. ओरालि० ज० ब० तिरिक्ख०-हुंड०-अप्पस्त्थ०४-तिरिक्खाणु०-उप०-अथिरादिष्ट० णिय० अणंतगुणवभ० । एङ्डि०-अप्पस्त्थ०-थावरै०-दुस्सर० सिया० अणंतगुणवभ० । पंचिदि०-ओरालि०अंगो०-आदाउज्जो०-तस०४ सिया० । तं तु० । तेजा०-क०-पस्त्थ०४-अगु०३-णिमि० णि० । तं तु० । एवमेदाओ एक-मेकस्स । तं तु० ।

१३१. तित्थ० ज० ब० मणुसगदिष्ट० सिया० अणंतगुणवभ० । देवगदि०४ सिया० । तं तु० । पंचिदियादि० णि० अणंतगुणवभ० ।

तिर्यङ्गगति, हुण्डसंस्थान, असम्भासासुपाटिका संहसन, अप्रशस्त वर्ण चतुष्क, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वी, उपधात, अप्रशस्त विहायोगति, अस्थिर आदि छह और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । औदारिक शरीर आदिका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार औदारिक आङ्गोपाङ्ग और त्रस प्रकृतिकी मुख्यता से सम्भिकर्ष जानना चाहिए ।

१३०. औदारिकशरीरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यङ्गगति, हुण्ड संस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वी, उपधात और अस्थिर आदि पांचका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । एकेन्द्रियजाति, अप्रशस्त विहायोगति, स्थावर और दुःस्वरका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, आतप, उद्योत और त्रस चतुष्कका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । तैजसशरीर, कार्मणशरीर, ग्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सम्भिकर्ष जानना चाहिए । किन्तु इन्हींमेंसे किसी एकके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव शेष प्रकृतियोंका नियमके बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है ।

१३१. तीर्थङ्कर प्रकृतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव मनुष्यगति० पञ्चकका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । देवगतिचतुष्कका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । पञ्चेन्द्रियजाति आदिका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है ।

१. आ० प्रतौ ओरालि०भंगो० इति पाठः । २. ता० प्रतौ अप्पस्त्थ०अत्पस्त्थ० (१) याघर इति पाठः ।

१३२. इतिथे० सत्तण्णं कम्माणं ओघं । णवरि कोधसंज० ज० वं० तिष्ण-
संज०-पुरिस० णिय० वं० णियमा जहण्णा । चदुगदि-चदुजादि-द्वसंठाण-द्वसंघ०-
चदुआण०-दोविहा०-थावरादि०४-थिरादिव्युम० पंचिदि०तिरि० भंगो ।

१३३. पंचि० ज० वं० णिरयगदि-हुँड०-अप्पसत्थ०४-णिरयाण०-उप०-अप्प-
सत्थवि०-अथिरादिव्य० णि० अणंतगुणव्य० । वेउच्चिव०-तेजा०-क०-वेउच्चिव०अंगो०-
पसत्थ०४-अगु०३-तस०४-णिमि० णि० । तं तु० । एवं [वेउच्चिव०-] वेउच्चिव०-
अंगो०-तस० । ओरालि०-आदाउज्जो० सोषप्पम्पभंगो ।

एगदलिक : -१ श्वसुःखीशालिङ्गमेष्टज्ञवैर्ष्णविश्ववत्त०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुँड०-असंप०-
पसत्थापसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-तस०-बादर०-पत्ते०-अथिरादिपूर्वच०-
णिमि० णि० अणंतगुणव्य० । वेइंदि०-पंचिदि०-पर०-उस्ता०-उज्जो०-अप्पसत्थ०-
पज्जापज्ज०-दुस्सर० सिया० अणंतगुणव्य० ।

१३४. तेजा०-कम्मइ० ओघं । णवरि [ओरालियअंगो०-] असंपत्ते वज्ज ।

१३५. छीबेदी जीवोंमें सात कर्मोंका भङ्ग ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि कोध
संबलनके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तीस संबलन और पुरुषवेदका नियमसे बन्ध
करता है जो नियमसे जघन्य होता है । चार गति, चार जाति, छह संस्थान, छह संहनन, चार
आनुपूर्वीं, दो विहायोगति, स्थावर आदि चार और स्थिर आदि छह युगलका भङ्ग पञ्चन्द्रिय
तिर्यक्कोंके समान है ।

१३६. पञ्चन्द्रिय जातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव नरकगति, हुण्डसंस्थान,
अप्रशस्त वर्णचतुष्क, नरकगत्यानुपूर्वीं, उपधात, अप्रशस्त विहायोगति और अस्थिर आदि
छहका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । वैक्रियिकशरीर, तैजसशरीर,
कार्मणशरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, त्रसचतुष्क और निर्माणका
नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य
अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह
स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकआङ्गोपाङ्ग और त्रसकी
मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए । औदारिकशरीर, आत्म और उद्योतका भंग सौघर्म-
फल्पके समान है ।

१३७. औदारिक आङ्गोपाङ्गके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यक्कगति,
औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, अस्म्प्रापासृपाटिका संहनन, प्रशस्त-
वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यक्कगत्यानुपूर्वीं, अगुरुलघु, उपधात, त्रस, बादर, प्रत्येक,
अस्थिर आदि पौच्च और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है ।
द्वीन्द्रिय जाति, पञ्चन्द्रिय जाति, परधात, उच्छ्वास, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, पर्याप्त,
अपर्याप्त और दुःस्वरका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है ।

१३८. तैजसशरीर और कार्मणशरीरका भङ्ग ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि
औदारिकआङ्गोपांग और अस्म्प्रापासृपाटिका संहननको छोड़कर सञ्जिकर्ष कहना चाहिए ।

१. ता० प्रतौ कोधसंज० पुरिस० णिय० बंध० णियमो० (मा०) जहण्णा हति पाठः । २. ता०
आ० प्रत्यो०-ज्ञादि चदुसंठाण ओरालि० अंगो० छुस्तंव० हति पाठः । ३. ता० आ० प्रत्यो० तस०४
हति पाठः ।

पंचिदि०-ओरालि०-वेउच्चि०-वेउच्चि०अंगो०-आदाउज्जो०-[तस०] सिया०। तं तु०।
एइंदि०-थावर० सिया० अणंतगुणब्ध०। कम्मइगादि० णिमि० णि०। तं तु०।
एवं तेजइगादि० अण्णयण्णस्स। तं तु०। आहारदुग-अप्पसत्थ०४-उप०-तित्यय०
ओघभंगो०।

१३६. पुरिसेसु सत्तण्ण कम्माण्ण इत्थिभंगो। सेसं ओघं। णवरि तिरिक्खगदिदु०
परियत्तमाणिगा कादब्बा।

१३७. णवुसमे सत्तण्ण कम्माण्ण इत्थिभंगो। चहुगदि-चहुजादि-क्षसंठा०-
क्षसंय०-चहुआणु०-दोविल्लव्वशकरादिव्वधुम्यिशक्तिव्वलुष्माण्णेयंगं खंचिचि० ज० वं०
दोगदि-असंप०-दोआणु० सिया० अणंतगुणब्ध०। दोसरीर-दोअंगो०-उज्जो० सिया०।
तं तु०। तेजा०-क०—पसत्थ०४-अगु०३—तस०४ [—णिमि०] णि०। तं तु०।

पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिकशरीर, वैक्षियिकशरीर, वैक्षियिकआङ्गोपाङ्ग, आतप, उद्योत और
प्रसका कदाचित् बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य
अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान
पतित वृद्धिरूप होता है। एकेन्द्रियजाति और स्थावरका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा
अधिक होता है। कार्मणशरीर आदि और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य
अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य
अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार तैजसशरीर
आदिका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु इनमेंसे किसी एकके जघन्य अनुभागका बन्ध
करनेवाला जीव शेषका नियमसे बन्ध करता है जो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और
अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह
स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। आहारिकडिक, अप्रशस्त वर्णचतुर्ष, उपवात और तीर्थकूर
प्रकृतिका भण्ड ओघके समान है।

१३८. पुरुषवेदी जीवोमें सात कर्मोंका भंग खीवेदी जीवोंके समान है। शेष भंग
ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि तिर्यङ्गगतिद्विककी परिवर्त्तमान प्रकृतियोंमें
परिगणना करनी चाहिए।

१३९. नपुंसकवेदी जीवोमें सात कर्मोंका भङ्ग स्त्रीवेदी जीवोंके समान है। चार गति, चार
जाति, छह संस्थान, छह संहनन, चार आनुपूर्वीं, दो विहायोगति, स्थावर आदि चार और स्थिर आदि
छह युगलका भङ्ग ओघके समान है। पञ्चेन्द्रिय जातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव
दो गति, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन और दो आनुपूर्वीका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा
अधिक होता है। दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता
है तो वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है।
यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। तैजसशरीर,
कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुर्ष, अगुरुलघुत्रिक, ग्रस चतुर्ष और निर्माणका नियमसे बन्ध करता
है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध
करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है।

१. ता० आ० प्रत्योः सिया० तं तु० अणंतगुणब्ध० इति पाठः।

[हुंड०] अप्पसत्थवण्ण०४—उप० [-अप्पसत्थ०-] अथिरादिव० णि० अण्ट-
गुणव्वम० । एवं तेजङ्गादि० । एवं ओरालिगादीणे पि सिया० । तं तु० । ओरालि०
ओरालि०अंगो० सिया० । संसं मणुसभंगो । [णवरि आदवं तिरिक्खोघं] ।

१३८. अवगदवे० पंचणा०-चदुदंसणा०-पंचतरा० णि० वं० णि० जहणा० ।
चहुसंज० ओघं ।

१३९. आभि०-सुद०-ओधि० सत्तणं कम्पणं ओघं । मणुसग० ज० वं०
पंचिदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०अंगो०-बज्जरि०-पसत्थ०४—मणु-
साणु०-अगु०३—पसत्थ०-तस०४—सुभग-सुस्सर-आदे०-णिमि० णि० । तं तु० ।
अप्पसत्थ०४—उप०-अथिर-असुभ-अजस० णिय० अण्टगुणव्वम० । एवं मणुसगदि-
चहुक० ।

१४०. देवगदि ज० वं० मणुसभंगो । णवरि तित्थ० सिया० । तं तु० । एवं
देवगदिचहुकस्स वि ।

हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपवात, अप्रशस्त विहायोगति और अस्थिर आदि छहका
नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । इसी प्रकार नियमसे तं तु पतित तैजस-
शरीर आदिकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना चाहिए । तथा इसी प्रकार सिया तं तु पतित औदारिक-
शरीर आदिकी मुख्यतासे भी सञ्चिकर्ष जानना चाहिए । किन्तु इन्हीमेंसे किसी एकके जघन्य अनुभाग
का बन्ध करनेवाला जीव शेषका कदाचित् बन्ध करता है । जो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है
और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह
छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । किन्तु इतनी विशेषता है कि औदारिकशरीरके जघन्य अनुभाग-
का बन्ध करनेवाला जीव औदारिकआङ्गोपाङ्गका कदाचित् बन्ध करता है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग
मनुष्योंके समान है । किन्तु आतपका भङ्ग सामान्य तिर्थङ्कोंके समान है ।

१३८. अपगतवेदी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायका
नियमसे बन्ध करता है जो नियमसे बन्ध होता है । तात्पर्य यह है कि इन चौदह प्रकृतियोंमेंसे
किंसी एकके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव शेषका नियमसे जघन्य अनुभागबन्ध करता
है । चार संज्यलनका भङ्ग ओघके समान है ।

१३९. आभिनिवोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और आवधिज्ञानी जीवोंमें सात कर्मोंका भङ्ग ओघके
समान है । मनुष्यगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिक
शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरल संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्षभनाराच संहनन,
प्रशस्त वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुस्तुत्युत्रिक, प्रशस्त विहायोगति, ब्रसचतुष्क, सुभग,
सुस्वर, आदेय और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध
करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है
तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपवात, अस्थिर, अगुम और
अयशःकीर्तिका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । इसी प्रकार मनुष्य-
गत्यानुपूर्वी आदि चारकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना चाहिए ।

१४०. देवगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवका भङ्ग मनुष्यके समान है ।
इतनी विशेषता है कि तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो वह
जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अज-
घन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार देवगत्यानु-

१४१. पंचिदि० ज० वं० दोगदि०-दोसरीर०-दोअंगो०-वज्जरि०-दोआणु०-तित्थ० सिया० । तं तु० । तेजा०-क०-समचदु०-पसत्थवण्ण०४-अगु०३-पसत्थवि०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदे०-णिमि० णि० । तं तु० । अप्पसत्थ०४-उप०-अथिर-असुभ-अजस० णि० अणंतगुणव्य० । एवं पंचिदिष्य० भंगो तेजइगादीणं पसत्थाण॑ ।

१४२. तित्थ० ज० वं० देवगदि० णि० । तं तु० । आहारदुग्ं-अप्पसत्थ०४-उप० ओघं ।

१४३. थिर० ज० वं० दोगदि०-दोसरीर० सिया० अणंतगुणव्य० । पंचिदि०-यादि० णि० अणंतगुणव्य० । दोयुग० सिया० । तं तु० । तित्थ० सिया० अणंत-गुणव्य० । एवं तिणियुग० । एवं ओधिद०-सम्मादि०-खइगस० । णवरि स्वइगे मणुसगदिपंचग० जह० तित्थ० सिया० । तं तु० ।

मणिल्लक्ष्मीं चतुष्ककीं सुरुलक्ष्मीं स्त्रेस्त्रिकक्षेज्ञानना चाहिए।

१४१. पञ्चेन्द्रिय जातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव दो गति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वर्षभनारात्य संहनन, दो आनुपूर्वी और तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्संस्थान, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुनिक, प्रशस्त विहायोगति, व्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय और निर्मणका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपघात, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्तिका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्त-गुणा अधिक होता है । इसी प्रकार पञ्चेन्द्रियजातिके समान तैजसशरीर आदि प्रशस्त प्रकृतियोंकी सुख्यतासे सन्निकर्पे जानना चाहिए ।

१४२. तीर्थङ्कर प्रकृतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव देवगतिका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । आहारकद्विक, अप्रशस्त वर्णचतुष्क और उपघातका भंग ओघके समान है ।

१४३. स्थिर प्रकृतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव दो गति और दो शरीरका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । पञ्चेन्द्रिय जाति आदिका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । दो युगलका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । इसी प्रकार तीन युगलोंका भङ्ग है । इसी प्रकार अर्थात् आभिनिवोधिकहानी आदि जीवोंके समान अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि और क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि क्षायिकसम्य-गद्धि जीवोंमें मनुष्यगति पञ्चकके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और

१. ता० प्रतौ तेजइगादीणं पसं (स) त्थाण॑ । तित्थ०, आ० प्रतौ तेजइगादीणं तित्थ० इति पाठः ।
२. ता० प्रतौ णि० । तित्थ आहारदुग्ं० (गं), आ० प्रतौ णि० तं तु० आहारदुग्ं इति पाठः ।

१४४. मणपञ्जवे सत्तण्णं कम्माणं ओधिभंगो०। णवरि अहुकसार्थं वज्जं। णाम० ओधिभंगो०। णवरि मणुसगदिपंचगं वज्जं। तित्थ० ओधं। एवं संजद-सामाइ०-
केदो०-परिहार०-संजदासंजद०। सुहुमसंप० अवगदवेदर्भंगो०।

१४५. मात्रिशुश्राप॒ सूज्ज्ञान्तं क्रम्माप्तं शिष्यभंगो॒॥४॥ सेसं णवुंसगभंगो०। नील-
काऊणं सत्तण्णं कम्माणं णिरयभंगो०। णिरयगदि० ज० ओधं०। पंचिदि० ज० वं०
तिरिक्त०-हुंड० णि० अणंतगु०। ओरालि० णि०। तं तु० [सेसं] णिरयदंडओ
भाणिदव्वजो॑। वेडन्वि० ज० वं० णिरयगदिअहावीसं अणंतगुणव्वभ०। वेडन्वि०-
अंगो० णि०। तं तु०। एवं वेडन्विय०अंगो०। सेसं किण्णभंगो०। काऊ० तित्थ०
णिरयभंगो०।

१४६. तेऽष्टसत्तण्णं कम्माणं देवगदिभंगो०। णवरि कोधसंज० ज० वं० तित्थि-
संज०-पंचणोक० णि०। तं तु०। दोगदि-दोजादि-द्वसंठा०-द्वसंध०-दोआणु०-
अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह
स्थान पतित वृद्धिरूप होता है।

१४७. मनःपर्यव्वानी जीवोंमें सात कर्मोंका भङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है। इतनी
विशेषता है कि आठ कथायोंको छोड़कर यह सञ्चिकर्ष कहना चाहिए। नामकर्मका भङ्ग अवधिज्ञानी
जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यगतिपञ्चको छोड़कर यह सञ्चिकर्ष कहना चाहिए।
तीर्थङ्कर प्रकृतियोंका भङ्ग ओधके समान है। इसी प्रकार संयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहार-
णिशुद्धिसंयत और संयासंयत जीवोंके जानना चाहिए। सूज्जमसाम्परायसंयत जीवोंमें अपगतवेदी
जीवोंके समान भङ्ग है।

१४८. कृष्ण लेश्यामें सात कर्मोंका भंग नारकियोंके समान है। शेष भङ्ग नपुंसकोंके समान
है। नील और कापोत लेश्यामें सात कर्मोंका भङ्ग नारकियोंके समान है। नरकगतिके जघन्य
अनुभागके बन्धक जीवोंका भङ्ग ओधके समान है। पञ्चन्द्रिय जातिके जघन्य अनुभागका बन्ध
करनेवाला जीव तिर्यक्षगति और हुण्डसंस्थानका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक
होता है। औदारिकशरीरका नियमसे बन्ध करता है जो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है
और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह
छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। शेष प्रकृतियोंका भंग नरकदण्डके समान कहना
चाहिए। वैक्रियिकशरीरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव नरकगति आदि अहाइस
प्रकृतियोंका बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। वैक्रियिक आङ्गोपाङ्गका नियमसे
बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका
भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित वृद्धिरूप
होता है। इसी प्रकार वैक्रियिक आङ्गोपाङ्गका भी भङ्ग जानना चाहिए। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग
कृष्णलेश्याके समान है। कापोतलेश्यामें तीर्थङ्कर प्रकृतियोंका भङ्ग नारकियोंके समान है।

१४९. पीत लेश्यामें सात कर्मोंका भंग देवगतिके समान है। इतनी विशेषता है कि
क्रोध संज्वलनके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तीन संज्वलन और पाँच नोकषायका
नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनु-
भागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित
वृद्धिरूप होता है। दो गति, दो जाति, छह संस्थान, छह संहनन, दो आनुपूर्वी, दो विद्वायोगति,

१. आ० प्रती भाणिदव्वाश्रो इति पाठः ।

[दोविहा०] तस-थावर-तिणिणयुग० सोधम्मभंगो । देवगदि० ज० व० पंचिदियादि० णि० अणंतगुणवभ० । वेउच्चिव०-वेउच्चिव०अंगो०-देवाणु० णि० । तं तु० । एवं वेउच्चिव०-वेउच्चिव०अंगो०-देवाणु० । ओरालि०-तेजा०-क०--पसत्थ०४-अमु०३-[आदाउज्जो-बादर-पञ्जात-पत्ते०-] णिमि०-[तिथ०] सोधम्मभंगो' । यिरादितिणिणयुगलाण० [ज० व०] दोगदि० सिया० । तं तु० । देवगदि०४ सिया० अणंतगुणवभ० । सेसं सोधम्मभंगो । [आहारदु०--अप्पसत्थवण्ण४-उप० मणुसभंगो ।] एवं पम्माए॒ वि॑ । णवरि पंचिदि०-ओरालि०अंगो०-तस० सच्चाणं संकिलेसपगदीणं सहस्रार-भंगो । तिथ० देवभंगो ।

१४७. सुकाए सत्तण्णं क० ओघं । देवगदि०४-आहारदुमं पम्माए॒ भंगो । सेसाणमाणदभंगो । अप्पसत्थ०४-उप० ओघं । अबभव० मदि०भंगो । णवरि अप्पसत्थ-वण्णकुलक्क०- वैक्षिकिस्त्रियकुमितिरिपरमणुकि लियाऽ । तं तु० । दोगदि०दोसरीर-दोअंगो०-

प्रस, स्थावर और तीन युगलका भंग सौधर्म कल्पके समान है । देवगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति आदिका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । वैक्षिक शरीर, वैक्षिक आङ्गोपाङ्ग और देवगत्यालुपूर्वीका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार वैक्षिक शरीर, वैक्षिक आङ्गोपाङ्ग और देवगत्यालुपूर्वीका भङ्ग जानना चाहिए । औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुविक, आतप, उद्योत, बादर, पर्याप्त प्रत्येक, निर्माण और तीर्थद्वारका भङ्ग सौधर्म कल्पके समान है । स्थिर आदि तीन युगलके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव दो गतिका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । देवगति चतुष्कका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है । इसका शेष भङ्ग सौधर्म कल्पके समान है । आहारकृदिक, अप्रशस्त वर्णचतुष्क और उपघातका भङ्ग मनुष्योंके समान है । इसी प्रकार पद्मलेश्यामों भी जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, त्रस और सर्व संकिलष्ट परिणामोंसे बँधनेवाली सब प्रकृतियोंका भङ्ग सदस्तार कल्पके समान है । तथा तीर्थद्वार प्रकृतिका भङ्ग देवोंके समान है ।

१४८. शुक्लोश्यामें सात कर्मोंका भङ्ग ओघके समान है । देवगति चार और आहारकृदिकका भङ्ग पद्मलेश्याके समान है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग आनतकल्पके समान है । अप्रशस्त वर्णचतुष्क और उपघातका भङ्ग ओघके समान है । अभव्योंमें सब प्रकृतियोंका भङ्ग भयज्ञानियोंके समान है । इतनी विशेषता है कि अप्रशस्त वर्णके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यक्षगति और तिर्यक्षगत्यालुपूर्वीका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । दो गति, दो शरीर, दो

१. ता० आ० प्रत्योः णिमि० णि० तं तु० सोधम्मभंगो हति पाठः । २. ता० आ० प्रत्योः ओघं । यामगदि देवगदि० हति पाठः ।

वज्जरि०-दोआणु०- जो० सिया० अणंतगुणवभ० । पञ्चिदि०-तेजा०-क०-समचदु०-
पसत्थव०४-अगु०३-पसत्थवि०-तस०४-थिरादिल्ल०-णिमि० णि० अणंतगुणवभ० ।
अप्यसत्थगंध०३-उप० णि० । तं तु० ।

१४८. वेदग०-उचसम० जाधिदंसणिभंगो । अप्यसत्थ०४-उप० ओषं । सासा०
मदि०भंगो । मिळ्लत्तं वज्ज । तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु० ओषं । दोगदि-पंचसंठा०-पंच-
संघ०-दोआणु०-दोविहा०-थिरादिल्लयुग० ओषं । यवरि पज्जतसंजुत्तं कादव्वं । पञ्चिदि०
ज० वं० तिरिक्खगदिआदि० णि० अणंतगुणवभ० । जोरालिगादिसब्बसंकिलिद्वाणं
णि० । तं तु० । उज्जो० सिया० । तं तु० । पार्यदर्शकः भूच्छार्यः श्री लक्ष्मिलालाल्लट जी पञ्चदुल्ज-
विद्य० ज० वं० पञ्चिदियादि० णि० अणंतगुणवभ० । तिप्पिणयुगल० सिया० । तं तु० ।

आंगोपांग, वर्णभनाराचसंहनन, दो आनुपूर्वी और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्त-
गुणा अधिक होता है। पञ्चेन्द्रियजाति, तैजसशरीर, कार्यएशरीर, समचतुरल्लसंस्थान, प्रशस्त
वर्णचतुर्क, अगुरुलघुत्रिक, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुर्क, स्थिर आदि छह और निर्माणका
नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। अप्रशस्त गन्ध आदि तीन और उप-
वातका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य
अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान
पतित वृद्धिरूप होता है।

१४९. वेदकसम्यग्दृष्टि और उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंमें अवधिदर्शनी जीवोंके समान भज्ज है।
भाव अप्रशस्त वर्णचतुर्क और उपवातका भज्ज ओषके समान है। सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंमें
मत्यज्ञानी जीवोंके समान भज्ज है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वको छोड़कर सन्निकर्ष कहना
चाहिए। तिर्यङ्गगति और तिर्यङ्गत्यानुपूर्वीका भंग ओषके समान है। दो गति, पाँच संस्थान,
पाँच संहनन, दो आनुपूर्वी, दो विहायोगति और स्थिर आदि छह युगलका भंग ओषके समान
है। इतनी विशेषता है कि पर्याप्त प्रकृतिको संयुक्त करके कहना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय जातिके
जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यङ्गगति आदिका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्त-
गुणा अधिक होता है। औदारिक आदि सर्व संक्लिष्ट परिणामोंसे बन्धको प्राप्त होनेवाली
प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और
अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह
स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो वह
जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य
अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार मनुष्यगति और
मनुष्यगत्यानुपूर्वीका भंग है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य
अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभाग बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित
वृद्धिरूप होता है। वैक्रियिक शरीरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति आदि
का नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा अधिक होता है। तीन युगलका कदाचित् बन्ध करता है।
यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध
करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है।

१. ता० आ० प्रत्योः ओषं अवभव० मदिभंगो । मिळ्लत्तं हति पाठः । २. ता० प्रतौ जादि०
हति पाठः ।

किंचित् विसेसो जाणिदव्वो । एवं वेदव्विद्विंश्चांगोऽपि । [सम्पादिते । वेदग्रन्थं भंगो । विसेसो जाणिदव्वो ।] मिच्छ्रदिवी० मदि० भंगो । अणाहार० कम्पद्विग्रन्थं भंगो ।

एवं जहण्णसण्णियासो समत्तो ।

एवं सत्याणसण्णियासो समत्तो ।

१४६. परस्थाणसण्णिगासे दुवि०—जह० उक० | उकससए पगदं । हुवि०-ओघे० आदे० | ओघे० आभि० उक० अणुभाग^१ बंधतो चदुणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ्र०-सोलसक०-पंचणोक०-हुँड०-अप्पसत्थ०४-उप०-अथिरादिपंच-णीचा०-पंचत० णिय० बंध० । ते तु० अठाणपदिदं बंधदि । अणंतभागहीणं वा०५ । णिरय०-तिरिक्ष्य०-एईदि०-असंप०-दोआणु०-अप्पसत्थ०-थावर-उस्सर० सिया० । ते तु० । पंचिंदि०-दोसरीर-दोअंगो०-आदाउज्जो०-तस० सिया० अणंतगुणहीण० । तेजा०-क०-पसत्थ०४-अग्न०-पर०-उस्सा०--वादर-पञ्जत-पत्ते०-णिमि० णि० अणंतगुणहीण० । पात्त्वंशुभिषित्तभंगो०-उक्तुष्टामहम्बद्दलग्नाम्बलादा०-मिच्छ्र०-सोलसक०-पंचणोक०-हुँड०-अप्पसत्थ०४-उप०-अथिरादिपंच०-णीचा०-पंचतरा० ।

जो कुछ विशेषता है वह जान लेनी चाहिए। इसी प्रकार वैकिञ्चिक आंगोपांग की मुख्यतासे सन्तुष्टि है। सम्यग्मित्याद्विष्टि जीवोंमें वेदकसम्यग्मित्यिं जीवोंके समान भङ्ग है। किन्तु कुछ विशेषता जाननी चाहिए। मित्याद्विष्टि जीवोंका भंग भत्यज्ञानी जीवोंके समान है। अनाहारक जीवोंका भंग कार्मणकाययोगी जीवोंके समान है। इस प्रकार जघन्य सन्त्रिकर्ष समाप्त हुआ।

इस प्रकार स्वस्थान सन्त्रिकर्ष समाप्त हुआ।

१४६. परस्थान सन्त्रिकर्षकी अपेक्षा निर्वेश दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। उसकी अपेक्षा निर्वेश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघकी अपेक्षा आभिनिव्वोधिक ज्ञानावरणके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातवेदनीय, मित्यात्म, सोलह कषाय, पाँच नोकपाय, हुण्ड स्वस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपवास, अस्थिर आदि पाँच, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानि रूप बाँधता है। अर्थात् या अनन्तभागहीन बाँधता है, या असंख्यात्मागहीन, संख्यात्मागहीन, संख्यातगुणहीन, असंख्यातगुणहीन या अनन्तगुणहीन बाँधता है। नरकगति, तिर्यक्षगति, एकेन्द्रियजाति, असम्प्राप्तसूपादिका संहनन, दो आनुपूर्वी, अप्रशस्त विहायोगति, स्थावर और दुःस्वरका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानि रूप होता है। पञ्चेन्द्रियजाति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, आतप, उथोत और त्रसका कदाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा हीन होता है। तेजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, परवात, उच्छ्रवास, वादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा हीन होता है। इसी प्रकार आभिनिव्वोधिकज्ञानावरणके समान चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातवेदनीय, मित्यात्म, सोलह कषाय, पाँच नोकपाय, हुण्ड

१५०. सातावेदनीयं उक० अणुभागं वंधतो पंचणा०-चतुर्दंस०-पंचत० णि० अणंतगुणहीणं वं० । जसगि०-उच्चा० णि० उकस्स० । एवं जस०-उच्चा० ।

१५१. इत्थिवे० उक० वं० पंचणा०-णवदंस०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-अरदि-सोग-भय-दु०-तिरिकत्व०-पंचिदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-पस-त्थापसत्थ०४ - तिरिकत्वाणु० - अगु०४ - अप्पसत्थ० - तस०४ - अथिरादिद्व० - णिमि०-णीचा०-पंचत० णि० वं० अणंतगुणही० । तिणिसंठा०-तिणिसंघ०-उज्जो० सिया० अणंतगुणही० । एवं पुरिस० । नवरि दोगदि-पंचसंठा०-पंचसंघ०-दोआणु०-उज्जो० सिया० अणंत०हीण० ।

१५२. हस्स० उक० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दु०-पंचिदि०-तेजा०-क०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०-उप०-अथिरादिपंच०-णिमि०-णीचा०-पंचत० णि० अणंतगु०हीण० । इत्थि०-णवुंस०-दोगदि-पंचजादि-पंचसंठा०-ओरालि० अंगो०-पंचसंघ-दोआणु०-पर०-उस्सा०--आदाउज्जो०-अप्पसत्थ०--तस-थावर-बादर-सुहुम-पज्जतापज्ज०-पते०--साधार०-दुस्सर० सिया० अणंतगु०ही० । रदि० णि० । संस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपघात, अस्थिर आदि पाँच, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका भङ्ग जानना चाहिए ।

१५०. सातावेदनीयके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा हीन होता है । यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका नियमसे बन्ध करता है जो नियमसे उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है । इसी प्रकार यशःकीर्ति और उच्चगोत्रकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना चाहिए ।

१५१. स्त्रीवेदके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यङ्गगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आंगोपांग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यङ्गत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, अस्थिर आदि छह, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणा हीन होता है । तीन संस्थान, तीन संहनन और उद्योतका कहाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा हीन होता है । इसी प्रकार पुरुषवेदकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि दो गति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, दो आनुपूर्वी और उद्योतका कहाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा हीन होता है ।

१५२. हास्यके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रियजाति, तैजसशरीर, कार्मण-शरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, अस्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुकृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, दो गति, पाँच जाति, पाँच संस्थान, औदारिक आंगोपांग, पाँच संहनन, दो आनुपूर्वी, परघात, उच्छवास, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस, स्थावर, घावर, सूहम, पर्याप्ति, अपर्याप्ति, ग्रस्येक, साधारण और दुःखरका कहाचित् बन्ध करता है जो अनन्तगुणा हीन होता है । रतिका नियमसे बन्ध करता है जो उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुकृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो

ते तु० । एवं रदीए० ।

१५३. पूर्णस्थिर्यु० उठङ्कार्य की लाविधिसामग्र जी यहाराज
पंचणोक०-पिरथगदि-अटावीस०-णीचा०-पंचत० णि० अणंत०हीण० ।

१५४. तिरिक्खायु० उ० व० पंचणा०-णवदंसणा०-पिच्छ०--सोलसक०-भय-
हु०-तिरिक्ख०-पंचिदि०-ओरालि०-तेजा०-क०- समचहु०-ओरालि०अंगो०- वजरि०-
पसत्थापसत्थ०४-तिरिक्खाणु० -- अगु०प०-पसत्थवि०- तस४- सुभग--सुस्सर--आदे०-
णिमि०-णीचा०-पंचत० णि० अणंत०ही० । सादासाद०-इथि०-पुरिस०-हस्स-रदि-
अरदि-सांग-उज्जो०-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० सिया० अणंतगुणही० । एवं
मणुसायु० । णवरि उच्चा० णि० अणंतमु० ।

१५५. देवायु० उ० व० पंचणा०-बद्धसणा०-सादा०-बदुसंज०-पुरिस०-हस्स-
रदि-भय-हु०-देवगदिसत्तद्वावीसं-उच्चा०-पंचत० णि० अणंतगुणहीण० । आहारहु०-
तिथय० सिया० अणंतगुणहीण० ।

१५६. पिरथगदि० उ० व० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-पिच्छ०-सोलसक०-
वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है। इसी प्रकार रतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना
चाहिए।

१५७. नरकायुके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नी दर्शनावरण,
असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कथाय, पाँच नोकपाय, नरकगति आदि अटाईस प्रकृतियाँ,
नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागका
बन्ध करता है।

१५८. तिर्यक्खायुके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नी दर्शना-
वरण, मिथ्यात्व, सोलह कथाय, भय, जुगुप्सा, तिर्यक्खगति, पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिकशरीर,
तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरलसंस्थान, औदारिक आंगोपांग, वर्जनाराचसंहनन,
प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यक्खगत्यासुपूर्वी, अगुस्ताघुचतुष्क, प्रशस्त
विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आवेय, निमणि, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका
नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। सातावेदनीय, असातावेदनीय,
स्त्रीवेद, पुरुषवेद, हास्य, रति, अरति, शोक, उद्योत, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति
और अयशःकीर्तिका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। इसी
प्रकार मनुष्यायुकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि उच्चगोत्रका
नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है।

१५९. देवायुके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण,
सातावेदनीय, चार संज्वलन, पुरुषवेद, हास्य, रति, भय, जुगुप्सा, देवगति आदि सत्ताईस या
अटाईस प्रकृतियाँ, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्त-
गुणा हीन होता है। आहारकट्टिक और तीर्थक्षरका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्त-
गुणा हीन होता है।

१५६. नरकगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नी दर्शना-

१. सा० आ० प्रत्योः मणुसायु० इति पाठः ।

पंचणोक०-णीचा०-पंचत० णि० । तं तु० ब्रह्मणपदिद० । णामपसत्थाणं पिय० अणंत-
गुणहीणं । णामअप्पसत्थाणं णाणावरणभंगो । एवं पिरयाणु० । एवं तिरिक्ख०-
तिरिक्खाणु० । णाम० सत्थाणभंगो ।

१५७. मणुस०-मणुसाणु० उ० व० पंचणा०--ब्रदंसणा०-सादावे०-बारसक०-
पंचणोक०-उच्चा०-पंचत० णि० अणंतगुणहीण० । णाम० सत्थाणभंगो० । एवं मणुस-
गदिपंचगस्स ।

१५८. देवगदि० उ० व० पंचणा०-चदुदंसणा०--सादा०-चदुसंज०-पंचणोक०-
उच्चा०-पंचत० णि० अणंतगुणहीण० । णाम० सत्थाणभंगो । एवं देवगदिसंजुत्ताणं
पसत्थाणं णामाणं ।

१५९. वेई०-तेईदि०-चदुरि० उ० व० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-
सोलसक०-पंचणोक०-णीचा०-पंचतै० णिय० अणंत०ही० । णाम० सत्थाणभंगो ।
णगोद० उ० व० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-चदुणोक०-
णीचा०-पंचतै० णि० अणंत०ही० । इत्थ०-णवुस० सिया० अणंत०ही० । णाम०

वरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, पाँच नोकषाय, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका
नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनु-
भागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित
हानिरूप होता है। नामकर्मकी प्रशस्त प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्त-
गुणा हीन होता है। नामकर्मकी अप्रशस्त प्रकृतियोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। इसी प्रकार
नरकगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार तिथेज्ञगति और तिर्थञ्च-
गत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए। किन्तु यहां नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग
स्वस्थान सञ्जिकर्षके समान है।

१५७. मनुष्यगति और मनुष्यगत्यानुपूर्वीके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच
ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, सातावेदनीय, चारह कपाय, पाँच नोकषाय, उच्चगोत्र और पाँच
अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। नामकर्मकी प्रकृतियों
का भंग स्वस्थान सञ्जिकर्षके समान है। इसी प्रकार मनुष्यगतिपञ्चकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष
जानना चाहिए।

१५८. देवगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शना-
वरण, सातावेदनीय, चार संज्वलन, पाँच नोकषाय, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध
करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है। नामकर्मका भंग स्वस्थान सञ्जिकर्षके समान
है। इसी प्रकार देवगतिसंयुक्त ग्रशस्त नामकर्मकी प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए।

१५९. द्वीन्द्रियजाति, ब्रीन्द्रियजाति और चतुरिन्द्रिय जातिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध
करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय,
पाँच नोकषाय, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा
हीन होता है। नामकर्मका भंग स्वस्थान सञ्जिकर्षके समान है। न्यग्रोधसंस्थानके उत्कृष्ट अनु-
भागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह
कपाय, चार नोकषाय, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट

महार्षे अणुभागवंशाद्विधारे

सत्याणभंगो । एवं सादि० । एव खुजो०-वामण० । णवरि णवुंस० णियमा अणंत०ही० ।
चदुसंघ० चदुसंदृष्टिभंगो । असंप० णाणावरणभंगो हेता उवरि । णाम० सत्थाणभंगो ।
एवं एडंदि०-थावर० ।

१६०. आदाव० उ० व०' पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-
भय-दु०-णीचा०-पंचंत० णि० अणंतगुणही० । सादासाद०-चदुणोक० सिया० अणंत०-
ही० । णाम० सत्थाणभंगो ।

१६१. उज्जो० उ० व० पंचणा०-णवदंसणा०--सादावे०-मिच्छ०--सोलसक०-
उरिस०-हस्स-रदि-भय-दु०-णीचा०-पंचंत० णिय० अणंत०ही० । णाम० सत्थाणभंगो ।

१६२. अप्यसत्थवि०-दुस्सर० उ० व० हेता उवरि णियमदिभंगो । णाम०
सत्थाणभंगो ।

१६३. सुहुम०-अपज्ञन-साधार० उ० व० पंचणा०--णवदंसणा०-असादौ०-
अनन्तगुणा हीन होता है । श्रीवेद और नपुंसकवेदका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुकूष
अनन्तगुणा हीन होता है । नामकर्मका भंग स्वस्थान सञ्जिकर्षके समान है । इसी प्रकार स्वाति-
संस्थानकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए । तथा इसी प्रकार कुब्जक और वामन संस्थानकी
मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि यह नपुंसकवेदका नियमसे बन्ध
करता है जो अनुकूष अनन्तगुणा हीन होता है । चार संहननका भंग चार संस्थानके समान है :
असम्प्राप्तासृपाटिका संहननका भंग नामकर्मसे पहलेकी और आगेकी प्रकृतियोंकी अपेक्षा हाना-
स्प्राप्तासृपाटिका संहननके समान एकेन्द्रिय जाति और स्थावर प्रकृतिकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष

१६४. आतप प्रकृतिके उकूष अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच हानावरण, नौ
दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, भय, जुगुप्सा, नीचगोत्र और पाँच अन्त-
वेदनीय और चार नोकषायका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुकूष अनन्तगुणा हीन होता है । सातावेदनीय, असाता-
नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सञ्जिकर्षके समान है ।

१६५. उद्योतके उकूष अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच हानावरण, नौ दर्शनावरण,
सातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पुरुषवेद, हास्य, रति, भय, जुगुप्सा, नीचगोत्र और पाँच
स्वस्थान सञ्जिकर्षके समान हैं । नामकर्मका भङ्ग

१६६. अप्रशस्त विद्यायोगति और दुःस्वरके उकूष अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवके
नामकर्मसे पूर्वीकी और आगेकी प्रकृतियोंका भङ्ग नरकगतिके समान है । नामकर्मका भंग

१६७. सुहुम, अपर्याप्त और साधारणके उकूष अनुभागका बन्ध करनेवाला, जीव पाँच

१. आ० प्रतौ एईदि० आदाव यावर उ० व० इति पाठः । २. ता० प्रतौ पंचणा० असाद०
इति पाठः ।

मिच्छ०--सोलसक०--पंचणोक०--णीचा०--पंचत० णिय० अणंत०ही० । णाम० सत्याणभंगो ।

१६४. णिरएसु आभिणिवो० उ० व० चदुणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-तिरिक्ष्व०--हुँड०-असंय०--अप्पसत्थ०४-तिरिक्ष्वाणु०-उषधा०-अप्पसत्थवि०-अधिरादिव्व०-णीचा०-पंचत० णिं० । तं तु० । पंचिदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरांलि०अंगो०-पसत्थ०४-अगु०३-तस०४-णिमि० णिं० अणंत०ही० । उज्जो० सिया० अणंत०ही० । एवं णाणावरणादि० तं तु० पदिदाओ ताओ अण-मण्णस्स । तं तु० ।

१६५. सादा० उ० व० पंचणा०-चदंसणा०-वारसक०-पंचणोक०-अप्पसत्थ०४-उप०-पंचत० णिं० अणंत०ही० । मणुस०-पंचिदि०-तिणिणसरीर-समच्छु०-ओरालि०-अंगो०-वज्जरि०-पसत्थ०४-मणुसाणु०-अगु०३-पसत्थवि०-तस०४-थिरादिव्व०-णिमि०-उच्चा० णिं० । तं तु० । तित्थ० सिया० । तं तु० । एवं सादभंगो तं तु० पदिदाण० ।

ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पांच नोकषाय, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुकृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । नाम-कर्मका भंग स्वस्थान सञ्जिकयके समान है ।

१६६. नारकिशोमें आभिनिवोधिक ज्ञानावरणके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, तिर्यङ्गगति, हुण्ड संस्थान, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वी, उपघात, अप्रशस्त विहायोगति, अस्थिर आदि छह, नीचगोत्र और पांच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुकृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है । पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आंगोपांग, प्रशस्त वर्ण चतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, त्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनुकृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुकृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । इसी प्रकार तं तु पतित ज्ञानावरणादि जितनी प्रकृतियाँ हैं उनका परस्पर सञ्जिकर्ष जानता चाहिए । किन्तु आभिनिवोधिक ज्ञानावरण को मुख्य करके जिस प्रकार सञ्जिकर्ष कहा है उसी प्रकार तं तु पतित शेष सब प्रकृतियोंकी मुख्यतासे कहना चाहिए ।

१६७. सातावेदनीयके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पांच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, बारह कषाय, पाँच नोकषाय, अप्रशस्त वर्ण चतुष्क, उपघात और पांच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुकृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रियजाति, तीन शरीर, समचतुरल्ल संस्थान, औदारिक आंगोपांग, वर्जीभन्नाराच संहनन, प्रशस्त वर्ण चतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुत्रिक, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह, निर्माण और उच्चगोत्रका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुकृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है । तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि

१६६. सेसं ओघं । णवरि तिरिक्खवायु० उ० व० मिच्छ० णि० अणंतग०ही० । एवं धुवियाणं० । सादासाद० सिया० अणंतही० । एवं परिषत्माणियाओ सब्बाओ सादभंगो पूर्णुसाड० उ० व० पूर्णिण०-छद्दसणा०-चैरसक०-पुरिस०-भय-दु०-मणुस०-पंचिदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०अंगो०-वज्जरि०-पसत्थापसत्थ०४-मणुसाणु०--अगु०४-पसत्थ०--तस०४-सुभग-सुस्सर-आदे०-णिमि०-उच्चा०-पंचत० णि० अणंतही० । सादासाद०-चदुणोक०-यिरादितिष्णयुग०-तित्थ० सिया० अणंतही० । चदुसंठा०-चदुसंघ०-उज्जो० ओघं० । एवं व्यु पुढवीसु । णवरि उज्जो० तिरिक्खवायुभंगो । सत्तमाए पुरिस०-हस्स-रदि-[चदु-] संडा०-पंचसंघ० उ० व० तिरिक्खवगदी धुवं कादव्यं । सेसं णिरयोघं ।

१६७. तिरिक्खवेसु आभिणिबोधि० उ० व० चदुणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-णिरयग०-हुंड०--अप्पसत्थ०४-णिरयाणु०-उप०-अप्पसत्थ०-अयिरादिक्ष०-णीचा०-पंचत० णि० । तं तु० । पंचिदि०-तिष्णसरीर-बेउच्चि०-अनुकृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है । इसी प्रकार तं तु पतित जितनी प्रकृतियाँ हैं उनका सातावेदनीयके समान भंग जानना चाहिए ।

१६८. शेष प्रकृतियोंका भंग ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि तिर्यङ्गायुके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव मिथ्यात्वका नियमसे बन्ध करता है जो अनुकृष्ट अनन्तगुण हीन होता है । इसी प्रकार ध्रुव बन्धवाली प्रकृतियों का जानना चाहिए । सातावेदनीय और असातावेदनीयका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुकृष्ट अनन्तगुण हीन होता है । परिवर्तमान जितनी प्रकृतियाँ हैं उनका इसी प्रकार सातावेदनीयके समान भंग है । मनुष्यायुके उत्कृष्ट अनुभाग का बन्ध करनेवाला जीव पांच झानावरण, छह दर्शनावरण, थारह कषाय, पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा, मनुष्यगति, पञ्चन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्त संस्थान, औदारिक आंगोपांग, वज्रपंभनारात्र संहनन, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, सुसंग, सुस्वर, आदेय, निर्माण, उत्त्वगोत्र और पांच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुकृष्ट अनन्तगुण हीन होता है । सातावेदनीय, असातावेदनीय, चार नोकषाय, स्थिर आदि तीन युगल और तीर्थद्वार प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुकृष्ट अनन्तगुण हीन होता है । चार संख्यान, चार संहनन और उद्योतका भंग ओघके समान है । इसी प्रकार प्रारम्भकी छह पुथियियोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि उद्योतका भंग तिर्यङ्गायुके समान है । सातवीं पुथियीमें पुरुषवेद, हास्य, रति, चार संस्थान और पांच संहननके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यङ्गगतिका ध्रुव बन्ध करता है अर्थात् नियमसे बन्ध करता है । शेष सब प्रलकण सामान्य नारकियोंके समान है ।

१६९. तिर्यङ्गोंमें आभिनिश्चोधिक झानावरणके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार झानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पांच नोकषाय, नरकगति, हुण्ड संस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, नरकगत्यानुपूर्वी, उपधात, अप्रशस्त विहायोगति, अस्थिर आदि छह, नीचगोत्र और पांच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुकृष्ट अनु-

१. आ० प्रतौ तेजाक० ओरालि० अंगो० इति पाठः । २. ता० ग्रतौ तिष्णयुग० सिया० इति पाठः ।

अंगो०-पसत्थ०४-अगु०३-तस४-णिमि० णि० अणंत०ही० । एत्थ एदाओ तं तु पदिदाओ अणमण्णस्स आभिणि०भंगो ।

१६८. साद० उ० वं० पंचणा०-क्वर्दसणा०-अड्क०-पंचणोक०-अप्पसत्थ०४-उप०--पंचंत० णि० अणंतगुणही० । देवगदिसत्तावीस-उच्चा० णि० । तं तु० । एदाओ सादभंगो । चदुणोक०-चदुआयु० और्धे ।

१६९. तिरिक्तवग० उ० वं० पंचणा०-णवर्दसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलस-क०-पंचणोक०-णीचा०-पंचंत० णि० अणंत०ही० । णाम० सत्थाणभंगो । एवं चदुजादि-असंप०-तिरिक्तवाणु०-थावरादि४० ।

१७०, मणुसग० उ० वं० पंचणा०-णवर्दसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-पुरिस०-भय-दु०-उच्चा०-पंचत० णि० अणंतगु०ही० । सादासाद०-चदुणोक० सिया० अणंत०-ही० । णाम० सत्थाणभंगो । एवं प्रणासगदिपंच० । चदुसंता०-चदुसंघ०-आदाव० और्धे० । उज्जो० पद्मशुद्धविभंगो । अथवा वादर-तेज०-वाल० उक्ससयं करेदि । सब्ब-भागका बन्ध करता है तो वह वह स्थान पतित हानिरूप होता है । पञ्चन्द्रिय जाति, तीन शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्क, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुस्तुत्युत्रिक, त्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनुकृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । यहाँ ये तं तु पतित जितनी प्रकृतियाँ हैं उनका परस्पर आभिन्निवैधिक ज्ञानावरणके समान भज्ज हैं ।

१६८, सातावेदनीयके उक्तकृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, वह दर्शनावरण, आठ कषाय, पाँच नोकषाय, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपघात और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुकृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । देवगति आदि सत्ताइस प्रकृतियाँ और उच्चगोत्रका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उक्तकृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुकृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह वह स्थान पतित हानिरूप होता है । यहाँ देवगति आदि प्रकृतियोंका भंग सातावेदनीयके समान है । चार नोकषाय और चार आयुका भंग और्धके समान है ।

१६९. तिर्यक्षगतिके उक्तकृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शना-वरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुकृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । नामकर्मका भंग स्वस्थान सञ्जिकर्षके समान है । इसी प्रकार चार जाति, असम्प्राप्तासृपाटिकासंहनन, तिर्यक्षगत्यासुपूर्वी और स्थावर आदि चारकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए ।

१७०. मनुष्यगतिके उक्तकृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पुरुषवेद, भय, जुगुप्ता, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुकृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । सातावेदनीय, असातावेदनीय और चार नोकषायका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुकृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । नामकर्मका भंग स्वस्थान सञ्जिकर्षके समान है । इसी प्रकार मनुष्यगति पञ्चककी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए । चार संस्थान, चार संहनन और आतपका भंग और्धके समान है । उद्योतका भंग घहली पूर्थिवीके समान है । अथवा वादर अविनकायिक और वादर वायुकायिक जीव उक्तकृष्ट करते हैं ।

विशुद्धा मूलोधो । एवं पंचिदियतिरिक्तं ३ ।

१७१. पंचिदियतिरिक्तं अपज्ञतगेसु आभिणिवो ० उ० वं० चदुणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-तिरिक्तं०-एइंदि०-हुँड०-अप्पसत्थ०४-तिरि-क्त्वाणु०-उप०-थावरादि४-अथिरादिपंच०-णीचा०-पंचंत० णि० । तं तु० । ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थ०४-अगु०-णिमि० णि० अणंत०ही० । एवमेदाओ अण्णोण्णस्स तं तु० ।

१७२. सादा० उ० वं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-अप्पसत्थ०४-उप०-पंचंत० णि० अणंतगुणही० । मणुसग०-पंचिदियतिरिक्तं-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि० अंगो०-वज्जरि०-पसत्थ०४-मणुसाणु०-अगु०३-पसत्थवि०-तस०५-गणितस्त्रिय०-त्विष्णि०-उच्चावधिक्षिण्यते जो तुङ्गावान्द्वमेदाओ एकमेकस्स । तं तु० ।

१७३. इत्थि० उ० वं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दु०-पंचिदियतिरिक्तं-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि० अंगो०-पसत्थापसत्थ०४-अप्पसत्थ०-

यदि सर्वे विशुद्ध तिर्यक्ष करते हैं तो मूलोधके समान भंग है । इसी प्रकार अर्थात् सामान्य तिर्यक्षोंके समान पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्षत्रिकोंके जानना चाहिए ।

१७१. पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्ष अपर्याप्तिकोंमें आभिनिवोधिक ज्ञानावरणके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, तिर्यक्षगति, एकेन्द्रियजाति, हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यक्षगत्यानुपूर्वी, उपधात, स्थावर आदि चार, अस्थिर आदि पाँच, नीच गोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुकृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है । औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनुकृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । यहां तं तु पतित जितनी प्रकृतियां हैं उनकी अपेक्षा परस्पर इसी प्रकार सञ्चिकर्ष जानना चाहिए ।

१७२. सातावेदनीयके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपधात और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुकृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णमनारात्म संहनन, प्रशस्त वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुत्रिक, प्रशस्त विहायोगति, असचतुष्क, स्थिर आदि छह, निर्माण और उच्चगोत्रका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुकृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है । यहां तं तु पतित जितनी प्रकृतियां हैं उनकी अपेक्षा परस्पर जैसा सातावेदनीयकी अपेक्षा सञ्चिकर्ष कहा है इसी प्रकार सञ्चिकर्ष जानना चाहिए ।

१७३. स्त्रीवेदके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति,

तस ०४—दूभग—दुस्सर—अणादे०—णिमि०—णीचा०—पंचत० णिथ० अणंतगुणहीण० । सादासाद०—चदुणोक०—दोगदि—तिष्णसंटा०—तिष्णसंघ०—दोआणु०—उज्जो०—थिरादि—तिष्णयुग० सिया० अणंतगुणहीण० । एवं पुरिस० । णवरि पंचसंटा०—पंचसंघ० ।

१७४. हस्स० उ० वं० पंचणा०—णवदंसणा०—असादा०—मिच्छ०—सोलसक०—णवुंस०—भय-दु०—तिरिक्ख०—एईदि०—ओरालि०—तेजा०—क०—हुँड०—पसत्थापसत्थ०४—तिरिक्खवाणु०—अगु०—उप०—थावरादि०४—थिरादिपंच०—णिमि०—णीचा०—पंचत० णि० अणंतगुणहीण० । रदी णि० । तं तु० । एवं रदीए० । दोआडे० णिरयर्थंगो ।

१७५. वेह०—तेह०—चदुरिं० उ० वं० पंचणा०—णवदंसणा०—मिच्छ०—सोलसक०—णवुंस०—भय-दु०—णीचा०—पंचत० णि० अणंतगुणहीण० । सादासाद०—चदुणोक० सिया० अणंतगुणहीण० । णाम० सत्थाणभंगो ।

१७६. चदुसंवा० उ० वं० पंचणा०—णवदंसणा०—असादा०—मिच्छ०—सोलसक०—भय-दु०—णीचा०—पंचत० णि० अणंतगुणहीण० । दोवेद०—चदुणोक० सिया० अणंत-
ध्रसचतुष्क, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुकूष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । सातावेदनीय, असातावेदनीय, चार नोकषाय, दो गति, तीन संस्थान, तीन संदृग्दान, दो आनुपूर्वी, उद्योत और स्थिर आदि तीन युगलका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुकूष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । इसी प्रकार पुरुषवेदकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष कहना चाहिए । इतनी विशेषता है कि यहां तीन संस्थान और तीन संदृग्दानके स्थानमें पाँच संस्थान और पाँच संदृग्दान कहने चाहिए ।

१७७. हास्य प्रकृतिके उल्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच हानावरण, जौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, भय, जुगुप्सा, तिर्यक्कगति, एकेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, हुण्ड संस्थान, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यक्कगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उषधात, स्थावर आदि चार, स्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुकूष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । रतिङ्गा नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उल्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकूष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुकूष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है । इसी प्रकार रति की मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए । दो आयुर्ओंकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष नारकियोंके समान है ।

१७८. द्वीन्द्रियजाति, त्रीन्द्रियजाति और चतुरन्द्रियजातिके उल्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच हानावरण, जौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, भय, जुगुप्सा, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुकूष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । सातावेदनीय, असातावेदनीय और चार नोकषायका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुकूष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सञ्जिकर्षके समान है ।

१७९. चार संस्थानके उल्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच हानावरण, जौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसकवेद, भय, जुगुप्सा, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुकूष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । दो वेद और

गुणहीणं । णाम० सत्थाणभंगो । णवरि पण्मोद०-सादि० उक्ससं बंधंतो दोवेद० सिया० अणंतगुणहीणं । खुज्ज०-वामण० णवुंस० णि० अणंतगुणहीणं । एवं चहु-
संघ० । असंपत्त० वेदैदिपभंगो । आकाशं आँ सुविधासाग्रं जो घटाज

१७७. अप्पसत्थ०-दुस्सर० उ० व० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-
णवुंस०-भय-दु०-णीचा०-पंचंत० णि० अणंतगुणहीणं । सादासाद०-चदुणोक०-
सिया० अणंतगुणहीणं । णाम० सत्थाणभंगो । आदाउज्जो० पंचिदियतिरिक्तभंगो ।
एवं सब्दअपज्ञत-सब्दविगलिदियाणं पुढ०-आउ०--वणपूर्फदिपत्तेय-णियोदाणं च ।
तेउ०-वाऊणं पि तं चेव । णवरि मणुसायु०-मणुस०-मणुसाणु०-उच्चा० वज्ज० ।

१७८. मणुसेसु खविमाणं ओघं । सेसं पंचिदियतिरिक्तभंगो । एवं मणुसपज्ञत-
मणुसिणीमु ।

१७९. देवेसु आभिण्वो० उ० व० चदुणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-
सोलसक०-पंचणोक०--तिरिक्त०-हुंड०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्त्वाणु०--उप०-अथिरादि-
चार नोकषायका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुकृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । नामकर्मका
भज्ज स्वस्थान सञ्चिकर्षके समान है । इतनी विशेषता है कि न्यमोधपरिमण्डल संस्थान और
खाति संस्थानके उक्तृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव दो वेदका कदाचित् बन्ध करता है जो
अनुकृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । तथा कुदशक संस्थान और वामन संस्थानके उक्तृष्ट अनुभाग
का बन्ध करनेवाला जीव नपुंसकवेदका नियमसे बन्ध करता है जो अनुकृष्ट अनन्तगुणा हीन होता
है । इसी प्रकार चार संहननोंकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना चाहिए । आसम्प्राप्तासूपाटिकासंहननकी
मुख्यतासे सञ्चिकर्ष द्वीन्द्रियजातिके समान है ।

१८०. अप्रशस्त विहायोगति और दुःस्वरके उक्तृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच
ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, भय, जुगुप्सा, नीचगोत्र और
पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुकृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । सातावेदनीय,
असातावेदनीय और चार नोकषायका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुकृष्ट अनन्तगुणा हीन
होता है । नामकर्मका भज्ज स्वस्थान सञ्चिकर्षके समान है । आतप और उच्चोतकी मुख्यतासे
सञ्चिकर्ष पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्कोंके समान है । इसी प्रकार अर्थात् पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्क अपर्याप्तकोंके
समान सब अपर्याप्तक, सब विकलेन्द्रिय, प्रथिधीकायिक, जलकायिक, घनस्पति प्रत्येक और नियोद
जीवोंके जानना चाहिए । अविनकायिक और वायुकायिक जीवोंके भी यही सञ्चिकर्ष है । इतनी
विशेषता है कि इनके मनुष्यायु, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यजुपूर्वी और उच्चगोत्रको छोड़कर सञ्चिकर्ष
कहना चाहिए ।

१८१. मनुष्योंमें स्पष्ट प्रकृतियोंका भज्ज ओघके समान है । शेष भज्ज पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्कोंके
समान है । इसी प्रकार मनुष्यपर्याप्त और मनुष्यनियोंके जानना चाहिए ।

१८२. देवोंमें आभिनिवोधिक ज्ञानावरणके उक्तृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार
ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, तिर्यक्कगति,
हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यक्कगत्यजुपूर्वी, उपवास, अस्थिर आदि पाँच, नीचगोत्र

१. आ० प्रती चदुसंघ० अप्पसत्थ० वेदैदिपभंगो इति पाठः । २. आ० प्रतौ सोलसक०
भयहु० इति पाठः ।

पंच-णीचा०-पंचंत० णि० । तं तु० । एङ्द्रि०-असंप०-अप्यसत्थवि०-थावर०-दुस्सर० सिया० । तं तु० । पंचिदि०-ओरालि०-अंगो०-आदाउज्जो०-तस० सिया० अणंतगुणहीण० । ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थ०-भूमिका०-प्रकृति०-सुविज्ञान०-प्रिमि० इति० अणंत-गुणहीण० । एवं तं तु० पदिदार्ण० । साददंडओ इत्थ०-पुरिस० णिरयोघभंगो ।

१८०. हस्स० उ० ओघं । णवरि दोगदि-दोजादि-पंचसंठा०-ओरालि०-अंगो०-पंचसंघ०-दोआणु०-आदाउज्जो०-अप्यत्थवि०-तस०-थावर०-दुस्सर०-सिया० अणंतगुण-हीण० । इत्थ०-णवुस० सिया० अणंतगुणहीण० । रदि० णि० । तं तु० । एवं रदीए० । एङ्द्रि०-थावर० ओघं । चदुसंठा०-चदुसंघ० ओघं ।

१८१. असंप० उ० वं० हेहा उवरि तिरिक्वभंगो । णाम० सत्याणभंगो । सेस० णिरयभंगो ।

१८२. भवण०-वाणवें०-जोदिसि०-सौधम्मी० आभिणिवोधि० उ० वं० चदुणा०-

और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है । एकेन्द्रियजाति, असम्प्राप्तासुपाटिकासंहनन, अप्रशस्त विहायोगति, स्थावर और दुःस्वरका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो उत्कृष्ट अनुभाग का भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है । पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिक आङ्गोपाङ्क, आतप, उद्योत और ब्रसका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णन्तुष्क, अशुरुलघुत्रिक, वादर, पर्याप्त प्रत्येक और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । इसी प्रकार तं तु पतित प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । सातावेदनीय दण्डक, स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष सामान्य नारकियोंके समान है ।

१८०. हास्य प्रकृतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवका भङ्ग ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि दो गति, दो जाति, पाँच संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्क, पाँच संहनन, दो आनुपूर्वी, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, ब्रस, स्थावर और दुःस्वरका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । रतिका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है । इसी प्रकार रतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । एकेन्द्रियजाति और स्थावरकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ओघके समान है । चार संस्थान और चार संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ओघके समान है ।

१८१. असम्प्राप्तासुपाटिकासंहननके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवके नामकर्मसे पूर्वकी और बादकी प्रकृतियोंका भङ्ग तिर्यङ्कोंके समान है । नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है । शेष भङ्ग नारकियोंके समान है ।

१८२. भवनवासी, इयन्तर, ज्योतिषी तथा सौधर्म और ऐशान कल्पके देवोंमें आभिन्न-बोधिक शानावरणके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार शानावरण, नौ दर्शनावरण,

णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०--सोलसक०-पंचणोक०--तिरिक्ख०-एङ्गि०-हुंड०-अण्ण-
सत्थ०४-तिरिक्खाणु०-उप०-थावर०-अथिरादिपंच०-णीचा०-पंचंत०। तं तु०।
ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थ०४-अगु०३-बादर-पज्जत-पत्ते०-णिमि० णिय० अणंत०-
हीणं०। आदाउज्जो० सिया० अणंत०हीणं०। एवमेदाओ तं तु० पदिदाओ एक-
मेकस्स॒। तं तु०।

१८३. असंप० उ० व० हेटा उवरि तिरिक्खगदिभंगो। णवरि णि० अणंतगुण-
हीणंस्त्रिंश्चम॒ संस्थार्जभैगी॒ कृष्णैरुप॑ अण्णस॒ हुंड॒ सर० णिय०। तं तु०। सेसं देवोयं।

१८४. सणवकुमार याव सहस्सार त्ति पहमपुढविभंगो। आणद याव पवगेवज्जा-
सि आभिणिवो० उ० व० चदुणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-
हुंड०-असंप०-अण्णसत्थ०४-उप० अण्णसत्थवि०-अथिरादिव०-णीचा०-पंचंत० णि०।
तं तु०। मणुस०-पञ्चिंदि०-तिणिणसरीर-ओरालिशंगो०-पसत्थ०४-मणुसाणु०-अगु०३-
पसत्थवि०-तस०४-णिमि० णि० अणंतगुणही०। एवमेदाओ एकमेकस्स॒ तं तु०।

असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह क्षया, पाँच नोक्षय, तिर्यङ्गगति, एकेन्द्रिय जाति, हुण्ड-
संस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वी, उपवात, स्थावर, अस्थिर आदि पाँच, नीच-
गोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता
है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह
छह स्थान पतित हानिरूप होता है। औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्ण-
चतुष्क, अगुस्तुषुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट
अनन्तगुणा हीन होता है। आतप और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्त-
गुणा हीन होता है। इसी प्रकार यदां जितनी तं तु पतित प्रकृतियाँ हैं उनकी मुख्यतासे परस्पर
उसी प्रकार सञ्चिकर्ष जानना चाहिए जिस प्रकार आभिनिवोधिक ह्यानावरणकी मुख्यतासे कहा है।

१८५. असम्प्राप्तासृपाटिका संहननके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवके नामकर्मसे
पूर्वकी और आगेकी प्रकृतियोंका भङ्ग तिर्यङ्गगतिके समान है। इतनी विशेषता है कि नियमसे
अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन बन्ध करता है। नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सञ्चिकर्षके समान है किन्तु
इतनी विशेषता है कि अप्रशस्त विहायोगति और दुःस्वरका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह
उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनु-
त्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है। शेष प्रकृतियोंका
भङ्ग सामान्य देवोंके समान है।

१८६. सनकुमारसे लेकर सहस्सार कल्पतकके देवोंमें पहली पृथिवीके समान भङ्ग है।
आनत कल्पसे लेकर नौ प्रैवेयक तकके देवोंमें आभिनिवोधिक ह्यानावरणके उत्कृष्ट अनुभागका
बन्ध करनेवाला जीव चार ह्यानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह क्षया,
पाँच नोक्षय, हुण्डसंस्थान, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपवात, अप्रशस्त
विहायोगति, अस्थिर आदि छह, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु
वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि
अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है। मनुष्यगति,
पञ्चेन्द्रिय जाति, तीन शरीर, औदारिक आङ्गोपङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी,
अगुस्तुषुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो

सेसं सहसारभंगो । एवं भगवत् कादवं ।

१८५, अणुदिस याव सब्बदु ति आभिषिवो० उ० व० चतुणा०-बदंसणा०-असादा०-बारसक०-पंचणोक०-अप्पसत्थ०४-उप०-अधिर-असुभ-अजस०-पंचंत णि० । तं तुष्टुपर्थशुस०-अवचिदित्त०-ओरलिल०-जेजाह०-कल्पसमचदु०-ओरालि०-आंगो०-बज्जरि०-पसत्थ०४-मणुसाणु०-अगु०३-पसत्थवि०-तस०४-सुभग०-सुस्तर०--आदे०-णिमि०-उच्चो० णि० अणंतगुणही० । तिथ० सिया० अणंतगुणही० । एवं आभिषि०भंगो अप्पसत्थाणं सब्बाणं । सादादीणं आणदभंगो ।

१८६, एइदिष्ठु साद० उ० व० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-अप्पसत्थ०४-उप०-पंचंत णि० अणंत०हीण० । तिरिक्त०-तिरिक्तवाणु०-पीचा० सिया० अणंत०हीण० । मणुस०-मणुसाणु०-उज्जो०-उच्चा० सिया० । तं तु० । पंचिदियादिवंधगा णिय० व० । तं तु० । एवं तं तु० पदिदाणं सब्बाणं । सेसाणं अनुकृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । इसी प्रकार यहां तं तु पतित जितनी प्रकृतियाँ हैं उनकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष आभिनिवोधिक ज्ञानावरणकी मुख्यतासे जैसा कहा है वैसा जानना चाहिए । शेष प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष सहकार कल्पके समान है । इतनी विशेषता है कि मनुष्यगति द्विको ध्रुव करना चाहिए ।

१८७, अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें आभिनिवोधिक ज्ञानावरणके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, असाता वेदनीय, बारह कषाय, पाँच तोकषाय, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपघात, अस्थिर, अशुभ, अयशकीर्ति और पांच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुकृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है । मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरल्ल संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्जनवनाराच संहनन, प्रशस्त वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुत्रिक, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्तर, आदेय, निर्माण और उच्चगोत्रका नियमसे बन्ध करता है जो अनुकृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । तीर्थद्वार प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुकृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । इसी प्रकार सब अप्रशस्त प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष आभिनिवोधिक ज्ञानावरणकी मुख्यतासे कहे गये सञ्चिकर्षके समान जानना चाहिए । तथा सातादिककी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष, आनंत कल्पमें इन प्रकृतियोंकी मुख्यतासे जिस प्रकार सञ्चिकर्ष कहा है, वह प्रकारका है ।

१८८, एकेन्द्रियोंमें सातावेदनीयके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पांच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच तोकषाय, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपघात और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुकृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । तिर्यङ्गगति, तिर्यङ्गत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुकृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, उद्योत और उच्चगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुकृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है । पञ्चेन्द्रिय जाति आदिका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुकृष्ट अनुभागका बन्ध करता है ।

१. ता० आ० प्रल्लो॒ णिमि॒ णि॒ उच्चा॒ इति पाठः ।

अप्पज्जस्तभंगो ।

१८७. पंचिदि० - तस०२-पंचमण० - पंचवचि० - काययोगी० ओघो । ओरा-
लियका० मणुसभंगो । ओरालियमि० आभिणि० दंडओै पंचि० तिरि० अपज्ज० पढमदंडओ० ।
साददंडओ० तिरिक्खोघोै । इत्थि०-पुरिस०-हस्स-रदि-दोआउ०-तिण्णजादि-चदुसंदा०-
चदुसंघ०-आदाउज्जो०-पसत्थवि०-दुस्सर० अपज्जस्तभंगो । मणुसग० उ० व० पंचणा०-
णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-पुरिस०-भय-दु०-उच्चा०-पंचत० णि० अण्णतगु०ही० ।
यार्गदर्शक् ॥ आचार्य श्री सुवेद्विष्णुसाहन जी॒ घटाक
दावदणी०-चदुणोक० सिया० अण्णतगु०ही० । णाम० सत्थाणभंगो ।

१८८. वेदविद्यका०-वेदविद्यमि० देवोघं । उज्जोवं ओघं । आहार०-आहारमि०
आभिणिघो० उ० व० चदुणा०-चदंसणा०--असादावे०-चदुसंज०-पंचणोक०-
अप्पसत्थ०४-उप०-अथिर-असुभ०-अजस०-पंचत० णि० । तै तु० । पसत्थाण
धुविगाण० णि० अण्णतगुणही० ।

तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है । इसी प्रकार तं तु पतित जितनी प्रकृतियाँ हैं उन सबकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जैसा सातावेदनीयकी मुख्यतासे कहा है वैसा जानना चाहिए । शेष प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष अपर्याप्तक जीवोंके समान है । अर्थात् पहले जिस प्रकार अपर्याप्तक जीवोंके सञ्जिकर्ष कह आये हैं उस प्रकार यहाँ शेष प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए ।

१८९. पञ्चेन्द्रियद्विक, त्रसद्विक, पाँचो मनोयोगी, पाँचो वचनयोगी और काययोगी जीवोंका भज्ज ओघके समान है । औदारिककाययोगी जीवोंमें मनुष्योंके समान भज्ज है । औदारिक-मिश्रकाययोगी जीवोंमें आभिनिबोधिक इनावरण आदि प्रथम दण्डककी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्ष अपर्याप्तकोंके प्रथम दण्डकके समान है । सातावेदनीयदण्डककी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष सामान्य तिर्यक्षोंके समान है । ऋवेद, पुरुषवेद, हास्य, रति, दो आयु, तीन जाति, चार संस्थान, चार संहनन, आत्म, उक्षीत, प्रशस्त विहायोगति और दुःस्वरकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष अपर्याप्तकोंके समान है । मनुष्यगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच इनावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पुरुषवेद, भय, जुगुस्सा, उच्चोग्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुकृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । दो वेदतीय और चार नोक्षायका कदाचित बन्ध करता है जो अनुकृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । नामकर्मका भज्ज स्वस्थान सञ्जिकर्षके समान है ।

१९०. वैक्रियिककाययोगी और वैक्रियिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष सामान्य देवोंके समान है । उद्योत प्रकृतिकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष ओघके समान है । आहारकाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें आभिनिबोधिकहानावरणके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार इनावरण, छह दर्शनावरण, असातावेदनीय, चार संज्वलन, पाँच नोक्षाय, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपवात, अस्थिर, अशुभ, अशराकीर्ति और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुकृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है । प्रशस्त ध्रुव प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है जो अनुकृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है ।

१. ता० आ० प्रत्योः ओणलियमि० आभिणिघो० उ० व०, एवं आभिणिदंडओ० इति पाठः ।
२. आ० प्रती -दंडओ० तिरिक्खोघो० इति पाठः ।

१८६. सादा० उ० व० अप्पसत्थाणि० णि० अणंतगु० । देवगदिपसत्थडावीसं
उच्चा० णि० । तं तु० । तित्थकर्त्तसिया० । तं तु० । एवं पसत्थाणे प्रकमेकस्स तं तु० ।

१८७. हस्स० उ० व० धुवियाणे अप्पसत्थाणे असाद०-अथिर-अमुभ-अजस०
णि० अणंतगु०ही० । सेसाणे पि णि० अणंतगु०ही० । रदि० णि० । तं तु० ।
एवं रदीए० ।

१८८. कम्मझगका० आभिणिवो० उ० व० चदुणा०-णवदंसणा०-असादा०-
मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-तिरिक्ख०-हुँड०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाणु०-उप०-
अथिरादिपंच०-णीचा०-पंचत० णि० । तं तु० । एडिं०-असंष०-अप्पसत्थवि०-थाव-
रादि०४-हुस्सर० सिया० । तं तु० । पंचिं०-ओरालि०अंगो०-पर०-उस्सा०-आदा-
उज्जो०-तस०४ सिया० अणंतगु०ही० । ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थ०४-अगु०-

१८९. सातावेदनीयके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव अप्रशस्त प्रकृतियोंका
नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । देवगति आदि प्रशस्त अट्टाईस
प्रकृतियों और उच्चगोत्रका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता
है अर्थात् अनुत्कृष्ट अनुभागकी इच्छिक्षकताही उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो
वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है । तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध
करता है तो वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता
है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है । इसी
प्रकार प्रशस्त प्रकृतियोंकी मुख्यतासे परस्पर सम्बन्ध कहना चाहिए जो सातावेदनीयकी
मुख्यतासे जैसा कहा है उसी प्रकारका है ।

१९०. हास्य प्रकृतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव अप्रशस्त ब्रुवं प्रकृतियों,
असातावेदनीय, अस्थिर, अशुभ और अयशक्तीर्तिका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट
अनन्तगुणा हीन होता है । होय प्रकृतियोंका भी नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा
हीन होता है । रतिका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है
और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह
छह स्थान पतित हानिरूप होता है । इसी प्रकार अर्थात् हास्यके समान रतिकी मुख्यतासे भी
सम्बन्ध जातना चाहिए ।

१९१. कार्मणकायथोगी जीवोंमें आभिनिष्ठोधिक ह्यानावरणके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध
करनेवाला जीव चार ह्यानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्म, सोलह कषाय, पाँच
नोकषाय, तिर्यङ्गगति, हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यङ्गत्यानुपूर्वी, उपचात, अस्थिर
आदि पाँच, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट^१
अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट^१
अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है । एकेन्द्रिय जाति,
असम्मानासुपाटिकासंहनन, अप्रशस्त चिह्नायोगति, स्थावर आदि चार और दुःस्वरका कदाचित्
बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट^१
अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित
हानिरूप होता है । पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिक अङ्गोपाङ्ग, परघात, उच्छ्रवास, आतप, ज्योत
और प्रसचतुष्कका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । औदारिक

णिमि० णि० अणंतगु०ही० । एवं तं तु० पदिदाओ सब्बाओ ।

१६२. साद० उ० व० पंचणा०--ज्ञदंसणा०--बारसक०--अप्पसत्थ०४--उप०-
पंचत० णि० अणंत०ही० । दोगदि-दोसरीर-दोशंगो०-वज्जरि०-दोआणु०-तित्थय०-
सिया० तं तु० । पंचिदि०-तेजा०-क०-समचदु०-पसत्थ०४-अगु०३-पसत्थ०-तस०४-
थिरादिक्ष०-णिमि०-उच्चा० णि० । तं तु० । एवं तं तु० पदिदाओ सब्बाओ । इत्थ०-
शुरिस०-हस्स-रदि-तिथिणजादि-चदुसंठा०-चदुसंघ० ओधो ।

१६३. इत्यवेदेसु आभिणधो० उ० व० चदुणा०--णवदंसणा०--असादा०-
मिक्ष०-सोलसक०-पंचणोक०-हुँड०-अप्पसत्थ०४-उप०-अथिरादिपंच०-णीचा०-पंचत०-
णि० । तं तु० । णिरयग०-तिरिक्षव०-एहंदि०-दोआणु०-अप्पसत्थवि०-थावर-दुस्सर०-
सिया० तं तु० । पंचि०-दोसरीर-वेजविव०-शंगो०-आदाउज्जो०-तस० सिया० अणंतगु०-
शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु और निर्माणका नियमसे बन्ध
करता है जो अनुकृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । दो गति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, बज्रभ-
नाराच संहनन, दो आनुपूर्वी और तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध
करता है तो उक्तुष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकृष्ट अनुभागका भी बन्ध
करता है । यदि अनुकृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है ।
पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्त संस्थान, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरु-
लघुत्रिक, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह, निर्माण और उच्चगोद्रका नियमसे
बन्ध करता है । किन्तु वह उक्तुष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकृष्ट अनुभागका भी
बन्ध करता है । यदि अनुकृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है ।
इसी प्रकार तं तु पतित सब प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । लीवेद,
पुरुषवेद, हास्य, रति, तीन जाति, चार संस्थान और चार संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष
ओवके समान है ।

१६४. लीवेदी जीवोंमें आभिनिवोधिक ज्ञानावरणके उक्तुष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला
जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिश्यात्व, सोलह कषाय, पांच नोकषाय,
हुँड संस्थान, अप्रशस्त वर्ण चार, उपवात, अस्थिर आदि पांच, नीचगोद्र और पांच अन्तरायका
नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उक्तुष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकृष्ट अनुभागका
भी बन्ध करता है । यदि उक्तुष्ट अनुभागका बन्ध करता है वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है ।
नरकगति, तिर्थङ्गगति, एकेन्द्रिय जाति, दो आनुपूर्वी, अप्रशस्त विहायोगति, स्थावर और
दुःस्वरका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो उक्तुष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है
और अनुकृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुकृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह

१. ता० आ० मत्योः दोआणु० तुवि० अप्पसत्थवि० इति पाठः । २. आ० प्रती किया० पंचि०
इति पाठः ।

ही० । तेजा०-क०-पसत्य०४—अगु०३—बादर-पज्जत्त-पत्ते०-णिमि० णि० अणंत०ही० । एवं तं तु० पदिदाणं अणणमणस्त । तं तु० । इत्य०--पुरिस०-हस्स-रदि-चदुआउ०-मणुसगदिपंच०-सादादिखविगाणं तिण्णिजाहि-चदुसंठा०-चदुसंघ०-सुहुम०-अपज्ज०-साहा० ओघं ।

१६४. णिरय० उक्त० व० ओघं । एवं णिरयाणु०-अप्पसत्थवि०-दुस्सर० । तिरिक्ख० उ० व० हेटा उवरि एङ्गदियसंजुत्ताओ सोधम्मपद्मदंडओ ।

१६५. असंप० उ० व० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-भिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-तिरिक्ख०३-ओरालि०-तेजा०-क०-हुँड०-ओरालि०अंगो०-पसत्यापसत्य०४-अगु०-उप०-तस०-बादर-पत्ते०-अथिरादिपंच०-णिमि० णीचा० पंचतं० णि० अणंत-गुणही० । पंचि०-पर०-उज्जो०-अप्पसत्थवि०-पज्जतापज्ज० सिया० अणंतगु०-ही० । वैई० सिया० । तं तु० ।

छह स्थान पतित हानिरूप होता है । पञ्चेन्द्रिय जाति, दो शरीर, वैकियिक आङ्गोपाङ्ग, आतप, ऊरोत और ब्रसका कवाचित् बन्ध करता है जो अनुकृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्ण चार, अगुरुलघुत्रिक, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अनुकृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । इसी प्रकार तं तु पतित जितनी प्रकृतियाँ हैं उनकी मुख्यतासे परस्पर सञ्जिकर्ष जिस प्रकार आभिनिकोषिक हानावरणकी मुख्यतासे कहा है उस प्रकार जानना चाहिए । खावेद, पुरुषवेद, हास्य, रति, चार आयु, मनुष्यगति पञ्चक, सातावेदनीय आदि क्षणक प्रकृतियाँ, तीन जाति, चार संस्थान, चार संहनन, सूहम, अपर्याप्त और साधारणकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष ओबके समान है ।

१६६. नरकगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवके सब प्रकृतियोंका सञ्जिकर्ष ओघके समान है । इसी प्रकार नरकगत्यासुपूर्वी, अप्रशस्त विद्यायोगति और दुःस्वरकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए । तिर्यञ्चगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवके नामकर्मसे पूर्वकी और बादकी एकेन्द्रियजाति संयुक्त प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष सौधर्मकल्पके प्रथम दण्डकके समान है ।

१६७. असम्याप्तासृपाटिका संहननके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पांच हानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कथाय, पाँच नोक्षण्य, तिर्यञ्चगति-त्रिक, औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपधात, ब्रस, बादर, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र और पांच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुकृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । पञ्चेन्द्रियजाति, परवात, उच्छ्रवास, ऊरोत, अप्रशस्त विद्यायोगति, पर्याप्त और अपर्याप्तका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुकृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । द्वीन्द्रियजातिका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुकृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है ।

१६६. पुरिसेसु ओघो । णवरि उज्जोवं देवोघं ।

१६७. णवुंस० आभिणिवो० उ० वं० चदुणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-
सोलसक०-पंचणोक०-हुङ०-अप्पसत्थ०४-उप०-अप्पसत्थवि०-अधिरादिष्ठ०-णीचा०-
पंचंत० णिं० । तं तु० । दोगदि-असंप०-दोआणु० सिया० । तं तु० । पंचि०-तेजा०-क०-
पसत्थ०४-अगु०३-तस०४-णिमि० णियमा अणंतरु० । दोसरीर-दोअंगो०-उज्जो०-
सिया० अणंत०ही० । णिरयग० ओघं ।

१६८. तिरिक्त्व० उ० वं० असंपत्त०-तिरिक्त्वाणु०-अप्पसत्थवि०-दुस्सर०
णिं० । तं तु० । पंचि०-ओरालि०अंगो०-तस०४ णिं० अणंत०ही० ।

१६९. एङ्गदि० उ० वं० थावरादि०४ णिं० । तं तु० । एवं थावरादि०४ ।
सेसं ओघं ।

२००. अवगदवे० आभिणिवो० उ० वं० चदुणा०-चदुदंसणा०-चदुसंजै०-

१७०. पुरुषवेदी जीवोंमें ओघके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि उद्योतकी मुख्यतासे
सञ्जिकर्ष सामान्य देवोंके समान है ।

१७१. नपुंसकवेदी जीवोंमें आभिनिवोधिक ज्ञानावरणके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला
जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह क्षयाय, पाँच नोक्षयाय,
हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपधात, अप्रशस्त विहायोगति, अस्थिर आदि छह, नीचगोप
और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है
और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह
छह स्थान पतित हानिरूप होता है । दो गति, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन और दो आनुपूर्वीका
कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और
अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह
स्थान पतित हानिरूप होता है । पञ्चेन्द्रियजाति, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क,
अगुरुलघुष्ट्रिक, त्रसचतुष्क और निमीणका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा
हीन होता है । दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट
अनन्तगुणा हीन होता है । नरकगतिकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष ओघके समान है ।

१७२. तिर्यङ्गगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन,
तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वी, अप्रशस्त विहायोगति और दुःखरका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह
उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट
अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है । पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिक
आङ्गोपाङ्ग और त्रसचतुष्कका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणाहीन होता है ।

१७३. एकेन्द्रियजातिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव स्थावर आदि चारका
नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका
भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप
होता है । इसी प्रकार स्थावर आदि चारकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए । शेष भङ्ग ओघके
समान है ।

२००. अपगतवेदी जीवोंमें आभिनिवोधिक ज्ञानावरणके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला

पंचत० णि० उक्त० । साद०-जस०-उच्चा० णि० अणंतरु०ही० । एवं अप्यसत्याणं ।
साद०-जस०-उच्चा० ओघो । एवं सुहुमसंप० । कोधादि०४ ओघो । णवरि साद०-
जस०-उच्चा० उ० वै० पंचणा०-चदुदंसणा०-चदुसंज०-पंचत० णि० अणंतरु० । माणे
तिणिसंजल० णि० अणंतरु०ही० । मायाए दोसंज० णि० अणंतरु०ही० । लोभे ओषं ।

२०१. मदि० अमिलिष्ट-दंडओ। साददंडओ ओघो। णवरि
पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-अष्टसत्य०४-उप०-पंचत० णि०
अण्टतग०। देवगदिसंजुत्ताओ याव जस०-उच्चा०गोद चि णि०। तु तु०। सेसं ओर्बं।
एवं विभंगे।

२०२. आभिषि०--सुद०-ओषि० आभिषि० उ० व० चदुणा०-बदंसणा०-०
 [असाद०--वारसक०--पुरिसबे०--अरदि०--सोग-भय-हु०-अप्यसस्थ०४-] उप०-
 अथिर'-असुभ-अजस०-पञ्चत० णि० । ते हु० । दोगदि-दोसरीर-दोअंगो०-बजरि०-
 जीव चार शानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायका नियमसे उत्कृष्ट
 अनुभागबन्ध करता है । सातावेदनीय, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका नियमसे बन्ध करता है जो
 अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । इसी प्रकार अप्रशस्त प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना
 चाहिए । सातावेदनीय, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ओषधके समान है ।
 इसी प्रकार सूक्ष्मसाम्परायिक संयत जीवोंके जानना चाहिए । क्रोध आदि चार क्षणावाले जीवोंमें
 सब प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ओषधके समान है । इतनी विशेषता है कि सातावेदनीय, यशः
 कीर्ति और उच्चगोत्रके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच शानावरण, चार दर्शनावरण,
 चार संज्वलन और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है ।
 मानमें तीन संज्वलनका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । लोभमें
 ओषधके समान भज्ज है ।

२०१. मत्यज्ञानी और श्रुतज्ञानी जीवोंमें आभिन्निदोधिकज्ञानावरण दण्डकका भङ्ग ओपके समान है। सातावेदनीयदण्डकका भङ्ग ओपके समान है। इतनी विशेषता है कि यह पाँच ज्ञानावरण, नी दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कथाय, पाँच नोकथाय, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपचात और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुरूप अनन्तगुण। हीन होता है। देवगतिसंयुक्त प्रकृतियोंसे लेकर यशःकीर्ति और उच्चगोत्र सक्की प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह उरुष अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुरूप अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुरूप अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है। शेष भङ्ग ओपके समान है। इसी प्रकार अर्थात् मत्यज्ञानी जीवोंके समान विभज्ञानी जीवोंके जानना चाहिए।

२०२. आभिनिवोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें आभिनिवोधिक ज्ञानाभरणके उल्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, असातावेदनीय, बारह कृष्ण, पुरुषवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, अपशस्त वर्णचतुष्क, उपघात, अस्थिर, अशुभ, अयशःकीर्ति और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु छह उल्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुल्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अनुल्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान परिवहनिरूप होता है। दो गति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वर्णर्थभ-

दोआणु०-तित्थ० सिया० अणंतगु०ही० । पंचि०-तेजा०-क०-समचहु०-पसत्थ०४-
अगु०३-पसत्थवि०-तस०४-सुभग-सुस्वर-आदे०-णिमि०-उच्चा० णि० अणंतगु०ही० ।
एवं अप्सत्थाणं उक्सससंकिलिद्वाणं ।

२०३. हस्स० उक० ब० पंचणा०-बदंसणा०-जसादा०-बारसक०-पुरिस०-भय-
हु०-पंचिदि०--तेजा०-क०-समचहु०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०४-पसत्थवि०-तस०४--
अधिर-असुभ-सुभग-सुस्वर-आदे०-अजस०-णिमि०-उच्चा०-पंचंत० णि० अणंतगु० ।
रदि० णि० । तं तु० । दोगदि-दोसरीर-दोअंगो०-बज्जरि०-दोआणु०-तित्थ० सिया०
अणंतगु०ही० । एवं रदीए० ।

२०४. मणुसाद० देवोघं । सादादीणं स्वविगाणं देवात० मणुसगदिपंचगस्सा य
ओंघो । एवं आभिणि०भंगो ओधिदंस०-सम्मादि०-खडग०-बेदग०-उवसम० । यणपज्ज०
आभिणि०भंगो । णवरि असंजदपगदीओ वज्ज । एवं संजद-सामाइय-च्छेदो०-परिहार० ।
संजदासंज० आभिणि०दंडओ साददंडओ ओधि०भंगो । णवरि संजदासंजदपगदीओ

नाराच संहनन, दो आतुपूर्वी और तीर्थद्वारका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुलृष्ट अनन्तगुणा
हीन होता है । पञ्चेन्द्रियजाति, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, समचतुरसंस्थान, प्रशस्त वर्णचतुष्क,
अगुरुलघुत्रिक, प्रशस्त विद्योगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण और उच्चगोत्रका
नियमसे बन्ध करता है जो अनुलृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । उल्कष्ट संक्लेशसे उल्कष्ट बन्धको
प्राप्त होनेवाली अप्रशस्त प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सञ्चिकर्त्त इसी प्रकार जानना चाहिए ।

२०३. हास्यके उल्कष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पौच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण,
असातावेदनीय, बारह कषाय, पुरुषवेद, भय, ऊगुप्सा, पञ्चेन्द्रियजाति, तैजस शरीर, कार्मणशरीर,
समचतुरसंस्थान, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विद्यो-
गति, त्रसचतुष्क, अस्थिर, अशुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, अयशकीर्ति, निर्माण, उच्चगोत्र और
पौच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुलृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । रतिका नियमसे
बन्ध करता है । किन्तु उल्कष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुलृष्ट अनुभागका भी बन्ध
करता है । यदि अनुलृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान परित हानिरूप होता है ।
दो गति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वज्रप्रभनाराच संहनन, दो आतुपूर्वी और तीर्थद्वारका कदाचित्
बन्ध करता है जो अनुलृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । इसी प्रकार रतिकी मुख्यतासे सञ्चिकर्त्त
जानना चाहिए ।

२०४. मनुष्यायुकी मुख्यतासे सञ्चिकर्त्त सामान्य देवोंके समान है । सातावेदनीय आदि
क्षपक प्रकृतियाँ, देवायु और मनुष्यगतिपञ्चककी मुख्यतासे सञ्चिकर्त्त ओधके समान है । इसी
प्रकार आभिनिवैधिक ज्ञानी जीवोंके समान अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि, वेदग-
सम्यग्दृष्टि और उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिए । मनःपर्यपज्जानी जीवोंका भङ्ग आभिनि-
वैधिक ज्ञानी जीवोंके समान है । इतनी विशेषता है कि असंयतोंके बैंधमेवाली प्रकृतियोंको छोड़कर
यह सञ्चिकर्त्त कहना चाहिए । इसी प्रकार संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत और परिहार-
विशुद्धिसंयत जीवोंके कहना चाहिए । संयतासंयत जीवोंमें आभिनिवैधिक ज्ञानावरण दण्डक और
सातावेदनीय दण्डक अवधिज्ञानी जीवोंके समान है । इतनी विशेषता है कि संयतासंयत प्रकृतियोंको

धुविगाओ नादव्वाओ । सेसं ओघो । असंजदेशु मदि० भंगो । णवरि असंजदसम्मादिडि० पगदीओ नादव्वाओ । चक्षु०-अचक्षु० ओघभंगो ।

२०५. किणाए आभिण०दंडओ णवुंसगभंगो । साददंडओ णिरयभंगो । चहुआउ० ओघ० । णवरि देवाउ० उ० व० पंचणा०-छदंसणा०-सादा०--बारसक०-पंचणोक०--देवगदिअद्वावीस-उच्चा०-पंचत० णि० अणंतगुणही० । तित्थ० सिया० अणंतगु० । अथवा मिच्छादिही यदि करेदि तो मिच्छादिहिपगदीओ सम्मादिडि० पगदीओ विं नादव्वाओ ।

२०६. देवगदि० उ० व० पंचणा०-छदंस०-साद०-बारसक०-पंचणोक०-पंचिदि० यादिपसत्थाओ-णिधि०-उच्चा०-पंचत०-पंचिदि०-पंचतगुणही० । वेऽन्तिक्षम्येऽलिक्ष्मांश्चेऽच्छ देवाणुपुञ्चिव० णि० । तं तु० । तित्थ० सिया० । तं तु० । एव देवगदिभंगो वेऽन्तिव०-वेऽन्तिव०-अंगो०-देवाणु०-तित्थ० । तिरिक्षब०-षड्दिदि० णवुंसगभंगो । सेसं ओघ० ।

२०७. नील-काऊण आभिण०दंडओ साददंडओ णिरयभंगो । इत्थ०-पुरिस०-भुव करना चाहिए । शेष भङ्ग ओघके समान है । असंयत जीवोंमें सत्यज्ञानी जीवोंके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि असंयतसम्यग्दृष्टि सम्बन्धी प्रकृतियाँ जाननी चाहिए । चक्षुदर्शनी और अचक्षुदर्शनी जीवोंमें ओघके समान भङ्ग है ।

२०८. कुषणलेश्यामें आभिनिवोधिक्षानावरण दण्डक नपुंसकोंके समान जानना चाहिए । सातावेदनीय दण्डक नारकियोंके समान जानना चाहिए । चार आयुओंका भङ्ग ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि देवायुके उत्कृष्ट अनुभागका वन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, सातावेदनीय, बारह कषाय, पाँच नोकपाय, देवगति आदि आद्वाईस प्रकृतियाँ, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे वन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । तीर्थ-क्षुर प्रकृतिका कदाचित् वन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । अथवा मिच्छादित्य करता है तो मिच्छादित्य प्रकृतियाँ और सम्यग्दृष्टि प्रकृतियाँ भी जाननी चाहिए ।

२०९. देवगतिके उत्कृष्ट अनुभागका वन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, सातावेदनीय, बारह कषाय, पाँच नोकपाय, पञ्चन्त्रिय जाति आदि प्रशस्त प्रकृतियाँ, निर्माण, उच्चगोत्र, और पाँच अन्तरायका नियमसे वन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और देवगत्यानुपूर्वीका नियमसे वन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी वन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी वन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका वन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है । तीर्थक्षुर प्रकृतिका कदाचित् वन्ध करता है । यदि वन्ध करता है तो उत्कृष्ट अनुभागका भी वन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी वन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका वन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है । इसी प्रकार देवगतिके समान वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकआङ्गोपाङ्ग, देवगत्यानुपूर्वी और तीर्थक्षुर प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । तिर्यक्षगति और एकेन्द्रिय जातिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष नपुंसक जीवोंके समान है । शेष भङ्ग ओघके समान है ।

२०७. नील और कापोतलेश्यामें आभिनिवोधिक ज्ञानावरण दण्डक और सातावेदनीय

१. आ० प्रतौ मिच्छादिहिपगदीओ वि इति पाठः । २. आ० प्रतौ अणंतगु०ही० । वेऽन्तिव० अंगो० इति पाठः ।

६० महावेदे अणभागवेधाहियारे
यागविहारः— आदार्य श्री द्वृष्टिकामना जी यहांटाल

हस्स-रदि-चदुसंठा०-चदुसंघ०-उज्जो० णिरयभंगो । चदुआउ० ओघं । णवरि देवाउ०
उ० व० पंचणा०-चदंसणा०-साद०-बारसक०-पंचणोक०--देवगदिअडावीस-उच्चा०-
पंचत० णि० अणंतगुणही० । तित्थ० सिया० अणंतगुणही० । अथवा पुण मिच्छा-
दिहिस्स पि होदि तदो णादव्वा विभासा । णिरयगदि० उ० व० णि० णिरयाणु० णि० ।
तं तु० । सेसाओ णि० अणंतगु० । एवं णिरयाणु० । देवगदि४-तित्थय० किण०-
भंगो । चदुजादि-आदाव-थावरादि०४ णवुसगभंगो । उज्जोवं पढमपुढविभंगो । काऊण
तित्थ० णिरयभंगो ।

२०८, तेजए आभिणि०दंडओ सोधम्मभंगो । साददंडओ परिहार०भंगो । इत्थि०-
युरिस०--हस्स-रदि-दोआउ०-चदुसंठा०-पंचसंघ० सोधम्मभंगो । देवाउ० ओघो ।
मणुसगदिपंचगं ओघं । एत्रं पम्माए वि । णवरि अप्पसत्याणं सहस्सारभंगो णादव्वो ।
सुकाए आभिणि०दंडओ इत्थि०-युरिस०-हस्स-रदि-मणुसाउ०-चदुसंठा०-चदुसंघ०
आणदभंगो । सेसं ओघं ।

२०९, भवसि० ओघं । अबभवसि० आभिणि०दंडओ ओघं । साद० उ० व०
पंचणा०- णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-अप्पसत्थ०४-उप०-पंचत० णि०
दण्डकका भङ्ग नारकियोंके समान है । खीवेद, पुरुषवेद, हास्य, रति, चार, संस्थान, चार संहनन
और उद्योतका भङ्ग नारकियोंके समान है । चार आयुका भङ्ग ओघके समान है । इतनी विशेषता
है कि वेदायुके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, साता
वेदनीय, बारह कषाय, पाँच नोकणाय, देवगति आदि अड्डाईस प्रकृतियों, उच्चगोत्र और पाँच अन्त-
रायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित्
बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । अथवा यदि मिथ्यादृष्टिके भी होता है तो
शिकल्प जानना चाहिए । नरकगतिके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव नरकगत्यानुपूर्वीका
नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभाग
का भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानि-
रूप होता है । शेष प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है ।
इसी प्रकार नरकगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना चाहिए । देवगति चतुर्ष और तीर्थङ्कर
प्रकृतिकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष कृष्णलेश्यके समान है । चार जाति, आतप और स्थावर आदि
चारकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष नपुंसक जीवोंके समान है । उद्योतकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष पहली पृथिवीके
समान है । कापोतलेश्यमें तीर्थङ्कर प्रकृतिकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष नारकियोंके समान है ।

२१०, पीत लेश्यामें आभिनिवोधिक ज्ञानावरण दण्डकका भङ्ग सौधर्म कल्पके समान है ।
सातावेदनीयदण्डकका भङ्ग परिहारविशुद्धिसंयत जीवोंके समान है । खीवेद, पुरुषवेद, हास्य, रति,
दो आयु, चार संस्थान और पाँच संहननका भङ्ग सौधर्म कल्पके समान है । देवायुका भङ्ग ओघके
समान है । भनुष्यगति पद्मकका भङ्ग ओघके समान है । इसी प्रकार पद्मलेश्यामें भी जानना
चाहिए । इतनी विशेषता है कि इसमें अप्रशस्त प्रकृतियोंका भङ्ग सहस्त्रार कल्पके समान है ।
शुक्ललेश्यमें आभिनिवोधिकज्ञानावरणदण्डक, खीवेद, पुरुषवेद, हास्य, रति, मनुष्यायु, चार
संस्थान और चार संहननका भङ्ग आनंत कल्पके समान है । शेष भङ्ग ओघके समान है ।

२११. भल्य जीवोंमें ओघके समान भङ्ग है । अभल्य जीवोंमें आभिनिवोधिक ज्ञानावरण
दण्डक ओघके समान है । सातावेदनीयके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण

अणंतगु० । तिरिक्खब०--तिरिक्खाणु०-णीचा० सिया० अणंतगु० । मणुसगदिपंचग-
देवगदिष्ट-उज्जो० उज्जो० सिया० । तं तु० । चिचिद्विद्व०-तज्जो० कृष्णमचदु०-पसत्थ०[४-]
अगु० ३-पसत्थवि०-तस०४-थिरादिव०-णिमि० णिय० । तं तु० । एवं उच्चागोदं पि ।
णवरि तिरिक्खसंजुर्तं वज्ज ।

२१०. मणुस-देवगदि० उ० वं० पसत्थाणं णि० । तं तु० । अप्पसत्थाणं अणंत-
गु०ही० । एवं मणुसाणु०-देवगदि०४ ।

२११. ओरालि० उ० वं० तिरिक्खब०-तिरिक्खाणु०-णीचा० सिया० अणंतगु० ।
मणुसग०-मणुसाणु०-उज्जो० सिया० । तं तु० । सेसं मणुसगदिभंगो । एवं ओरालि०-
अंगो०-वज्जरि० । एवं उज्जो० । सेसं ओघो ।

२१२. सासणे आभिणि० उ० वं० चदुणा०-णवदंसणा०-असादा०-सोलसक०-

नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह क्षयाय, पाँच नोकपाय, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपथात और
पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अनुकूष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । तिर्यङ्गगति,
तिर्यङ्गत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुकूष्ट अनन्तगुणा हीन होता
है । मनुष्यगतिपञ्चक, देवगति चतुष्क, उद्योत और उच्चगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है । किन्तु वह
उक्षुष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकूष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि
अनुकूष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है । पञ्चेन्द्रियजाति,
तैजसरारीर, कार्मणशरारीर, समचतुरस्त्रसंस्थान, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुस्त्रुतिक, प्रशस्त
विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह
उक्षुष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकूष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुकूष्ट
अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है । इसी प्रकार उच्चगोत्रकी
मुख्यतासे भी सन्निकर्ष जानना चाहिए । इतनी शिशेषता है कि तिर्यङ्गगतिसंयुक्त प्रकृतियोंको
छोड़कर सन्निकर्ष कहना चाहिए ।

२१०. मनुष्यगति और देवगतिके उक्षुष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव प्रशस्त
प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उक्षुष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकूष्ट
अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुकूष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान
पतित हानिरूप होता है । अप्रशस्त प्रकृतियोंका अनुकूष्ट अनन्तगुणहीन बन्ध करता है । इसी
प्रकार मनुष्यगत्यानुपूर्वी और देवगतिचतुष्ककी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

२११. औदारिक शरीरके उक्षुष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यङ्गगति, तिर्यङ्ग-
गत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुकूष्ट अनन्तगुणा हीन होता है ।
मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है । किन्तु वह उक्षुष्ट अनु-
भागका भी बन्ध करता है और अनुकूष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनुकूष्ट अनु-
भागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित हानिरूप होता है । शेष भङ्ग मनुष्यगतिके समान
है । इसी प्रकार औदारिक आङ्गोपाङ्ग और वर्जीभनाराच संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना
चाहिए । तथा इसी प्रकार उद्योत प्रकृतिकी मुख्यतासे भी सन्निकर्ष जानना चाहिए । शेष भङ्ग
ओघके समान है ।

२१२. सासादनसम्यग्द्वितीयामें आभिनिवोधिक ज्ञानावरणके उक्षुष्ट अनुभागका बन्ध

इति०--अरदि०-सोग-भय--तुगु०--तिरिक्तव०-वायण०-खीलिय०--अप्पसत्थ०४--तिरि-
क्तवाणु०-उप०-अप्पसत्थवि०-अधिरादिल०-णीचा०-पंचत० णि० । तं तु० । पंचिदि०-
ओरालि०-तेजा०-क०--ओरालि०-अंगो०-पसत्थ०४--अगु०३-तस०४-णिमि०-णी०
अणंतगु०ही० । उज्जोवं सिया० अणंतगु० । एवं तं तु० पदिदार्ण ।

२१३. साद० उ० व० तिरिक्तव०-तिरिक्तवाणु०-णीचा० सिया० अणंतगु० ।
दोगदि०-दोसरी०-दोअंगो०-वज्जरिस०-दोआणु०--उज्जो०-उच्चा० सिया० । तं तु० ।
पंचणाणावरणादिअप्पसत्थाणं णिय० अणंतगु० । पंचिदियादिपसत्थाणं णिय० ।
तं तु० । इति०-पुरिस०--हस्स-रदि०-तिणिणाड०-तिणिणसंडा०-उज्जो०-
ओघं । सेसाणं कम्माणं हेदाै उवरि॒ सादभंगो । णाम० सत्थाणभंगो ।

२१४. सम्मामिच्छादिही० आभिणि०भंगो । मिच्छादिही० मदि०भंगो ।
ओरालि० उ० व० तिरिक्तव०-तिरिक्तवाणु०-णीचा० सिया० अणंतमुणही० । मणुसगदि-
करनेवाला जीव चार झानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, सोलह कथाय, खीवेद, अरति,
शोक, भय, जुगुप्सा, तिवेङ्गगति, वामन संस्थान, कीलक संदेनन, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यङ्ग-
गत्यातुपूर्वी, उपचात, अप्रशस्त विहायोगति, अस्थिर आदि छह, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका
नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका
भी बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप
होता है । पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग,
प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, त्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो
अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । उथोतका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा
हीन होता है । इसी प्रकार तं तु पतित प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए ।

२१५. सातावेदनीयके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यङ्गगत्यातु-
पूर्वी और नीचगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । दो गति,
दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वर्णभनराचसंहनन, दो आलुपूर्वी, उथोत और उच्चगोत्रका कदाचित्
बन्ध करता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी
बन्ध करता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता
है । पाँच झानावरणादि अप्रशस्त प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है जो अनुत्कृष्ट अनन्तगुणा
हीन होता है । पञ्चेन्द्रिय जाति आदि प्रशस्त प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह
उत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अनु-
त्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है । खीवेद, पुरुषवेद,
हास्य, रति, तीन आयु, तीन संस्थान, तीन संहनन और उथोतका भज्ज ओघके समान हैं ।
शेष कर्मोंके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवके नामकर्मसे पूर्वकी और बादकी प्रकृतियोंका
भज्ज सातावेदनीयके समान है । नामकर्मकी प्रकृतियोंका भज्ज स्वस्थान सञ्जिकर्षके समान है ।

२१६. सम्यग्मिच्छादृष्टि जीवोंमें आभिनियोग्यिक झानी जीवोंके समान भज्ज है । मिच्छा-
दृष्टि जीवोंमें मत्यज्ञानी जीवोंके समान भज्ज है । किन्तु औदारिक शरीरके उत्कृष्ट अनुभागका
बन्ध करनेवाला जीव तिर्यङ्गगत्यातुपूर्वी और नीचगोत्रका कदाचित् बन्ध करता

१. आ० प्रतौ तिरिक्तवाणु० अणंतगु० इति पाठः । २. ता० आ० प्रस्तोः सेसाणं णामाणं हेदाै
इति पाठः ।

उज्जोवं सिया० । तं तु० । ओरालि०अंगो०-वज्जरि० णि० । तं तु० । सेसाओ
पसत्थाओ णि० अणंतगु० । एवं ओरालिअंगो०-वज्जरि० ।

२१५. सण्णि० ओघं । असण्णी० तिरिक्खोघो । साददंडओ यदि०भंगो ।

यागदिलक्ष्मीहारुचञ्चलोकंगा सुन्दरस्त्रपटकलग्नाहृष्टमंगो ।

एवं उक्ससं सम्पतं ।

२१६. जहणपरत्थाणसण्णियासं पगदं । दुवि०--ओघे० आदे० । ओघे०
आभिणि० जह० अणुभागं वंधतो चदुणा०-चदुदंस०-पंचत० णि० वं० जहणा० ।
साद०-जस०-उच्चा० णि० वं० णि० अजहणं अणंतगुणदभियं वंधदि । एवं चदुणा०-
चदुदंस०-पंचत० ।

२१७. णिदाणिदाए जहणं वं० पंचणा०-छदंसणा०-सादा०-वारसक०-पुरिस०-
हस्स-रदि-भय-दुगु०-देवगदि-पंचिदि०-वेउच्चि०-तेजा०-क०-समचदु०-वेउच्चि०अंगो०-
पसत्थापसत्थ०४-देवाणु०-अगु०४-पसत्थवि०--तस०४-थिरादिद्व०-णिमि०-उच्चा०-
हैं जो अनुकृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । मनुष्यगति और उद्योतका कदाचिन् बन्ध
करता है । यदि बन्ध करता है तो वह उकृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकृष्ट अनु-
भागका भी बन्ध करता है । यदि अनुकृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित
हानिरूप होता है । औदारिक आङ्गोपाङ्ग और वर्षपूर्णनाराच संहननका नियमसे बन्ध करता
है । किन्तु वह उकृष्ट अनुभागका भी बन्ध करता है और अनुकृष्ट अनुभागका भी बन्ध
करता है । यदि अनुकृष्ट अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित हानिरूप होता है ।
शेष प्रशस्त प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है जो अनुकृष्ट अनन्तगुणा हीन होता है । इसी
प्रकार औदारिक आङ्गोपाङ्ग और वर्षपूर्णनाराच संहननकी मुख्यतासे सञ्चिकर्त्त जानना चाहिए ।

२१८. सञ्चियोंमें ओघके समान भङ्ग है । आसञ्चियोंमें सामान्य तिर्यक्षोंके समान भङ्ग है ।
इत्तीविशेषता है कि सातावेदनीयदण्डक मत्यज्ञानी जीवोंके समान है । आहारक जीवोंमें ओघके
समान भङ्ग है । अनाहारक जीवोंमें कार्मणकाययोगी जीवोंके समान भङ्ग है ।

इस प्रकार उकृष्ट सञ्चिकर्त्त समाप्त हुआ ।

२१९. जघन्य परस्थान सञ्चिकर्त्तका प्रकरण है । उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—
ओघ और आदेश । ओघसे आभिनिष्ठोधिक ज्ञानावरणके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला
जीव चार ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायके जघन्य अनुभागका नियमसे बन्ध
करता है । सातावेदनीय, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका नियमसे बन्ध करता है जो नियमसे
अजघन्य अनन्तगुणे अधिक अनुभागका बन्ध करता है । इसी प्रकार चार ज्ञानावरण, चार
दर्शनावरण और पाँच अन्तरायकी मुख्यतासे सञ्चिकर्त्त जानना चाहिए ।

२२०. निद्रानिद्राके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शना-
वरण, सातावेदनीय, बारह कषाय, पुरुषवेद, द्वास्य, रति, भय, जुगुसा, देवगति, पञ्चेन्द्रियज्ञाति,
वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्संस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त
वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, प्रस-
चतुष्क, स्थिर आदि छह, निर्माण, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो

पंचत०-णि०बं० णि० अज० अणंतगु० । पचलापचला-थीणगिद्धि०-मिच्छ०-अणंताणु०४
णि० । तं तु० । छडाणपदिदं बं० अणंतभागवभद्रियं चा ५ । एवं पचलापचला०-
थीणगिद्धि०-मिच्छ०-अणंताणु०४ ।

२१८. णिदाएज० बं० पंचणा०-चदुर्दस०-सादा०-चदुसंज०-पंचणोक०-णामाणि
णिदाणिहाए भंगो । उच्चा०-पंचत० [णि०] अणंतगुणवभ० । पचला० णि० । तं तु०
छडाणपदिदं० । आहारदुग-तित्थ० सिया० अणंतगुणवभ० । एवं पचला० ।

२१९. साद० ज० बं० पंचणा०-चदंसणा०-चदुसंज०-भय-दु०-तेजा०-क०-पसत्या-
पसत्य०४-अग०-उप०-णिमि०-पंचत० णिय० अणंतगुणवभ० । थीणगिद्धि३-
मिच्छ०-बारसक०-सत्तणोक०-तिरिक्ख०-पंचिंदि०--दोसरीर-दोअंगो०-तिरिक्खाणु०-
पर०-उस्सा०-आदाउज्जो०-तस०४-तित्थ०-णीचा० सिया० अणंतगुणवभ० । तिणि-
आउ-दोगदि-चदुजादि-छसंगा०-छसंग्य०-दोआणु०-दोविहा०-थिरादिच्छपुग०-उच्चा०

नियमसे अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। प्रचलाप्रचला, स्त्यानगृद्धि, मिथ्यात्व और
अनन्तानुवर्धी चारका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है
और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो
वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप बन्ध करता है। अथात् या ता अनन्तभागवृद्धिरूप या असंख्यात-
भागवृद्धिरूप, संख्यातभागवृद्धिरूप, संख्यातगुणवृद्धिरूप, असंख्यातगुणवृद्धिरूप या अनन्तगुण-
वृद्धिरूप बन्ध करता है। इसी प्रकार प्रचलाप्रचला, स्त्यानगृद्धि, मिथ्यात्व, और अनन्तानुवर्धी
चार की मुख्यतासे समिकर्ष जानना चाहिए।

२२०. निद्राके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवके पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण,
सातावेदनीय, चार संज्ञलन, पाँच नोकपाय और नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग निद्रानिद्राके समान
है। उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक
होता है। प्रचलाका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है
और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो
वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। आहारक्षिक और तीर्थद्वारका कदाचित् बन्ध करता है
जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार प्रचलाप्रकृतिकी मुख्यतासे समिकर्ष
जानना चाहिए।

२२१. सातावेदनीयके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह
दर्शनावरण, चार संज्ञलन, भय, जुगुप्सा, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप-
शस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपधात, निर्माण और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो
अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, चारह कपाय, सात नोकपाय,
तिर्यक्खणति, पञ्चनिद्रिय जाति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, तिर्यक्खणत्यानुपूर्वी, परधात, उच्चवास,
आतप, उच्चोत, त्रसचतुष्क, तीर्थद्वार और नीचगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य
अनन्तगुणा अधिक होता है। तीन आयु, दो गति, चार जाति, छह संस्थान, छह संदनन, दो
आनुपूर्वी, दो विहायोगति, स्थिर आदि छह युगल और उच्चगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है।
किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है।
यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार

सिया० । तं तु० । एवं असाद०-अथिर-असुभ-अजस० । ज्वरि षिरयाशु-षिरयगदि-
देवगदि-दोआणु० सिया० । तं तु० । देवात० वज्ज ।

२२०. अपच्चकखा० कोध० ज० वं० तिण्णि क० । तं तु० । सेसं णिहाए
भंगो । ज्वरि अटकसाथं भाणिदव्यं॑ । एवं तिण्णि क० ।

२२१. पञ्चलत्रिलोध॒ असुभ॑ कं लुलिङ्गत्वं॒ षिरयगदि-देवगदि॒ । सेसं णिहाए
भंगो । एवं तिण्णि क० ।

२२२. कोधसंज० ज०वं० पंचणा०-चदुदंस०-सादा०-तिण्णिसंज०-जसगि०-
उच्चा०-पंचंत० णि॒ अणंतगुणव्य॒ । माणसंज० ज० वं० दोसंज० णि॒ अणंतगुणव्य॒ । सेसं०
कोधभंगो । मायसंज० ज० वं॒ लोभसंज० णि॒ अणंतगुणव्य॒ । सेसं॒ माणभंगो । लोभ-
संज० ज० वं॒ पंचणा०-चदुदंसणा०-सादा०-जस०-उच्चा०-पंचंत० णि॒ अणंतगुणव्य॒ ।

२२३. इत्यि० ज० वं॒ पंचणा०-णवदंस०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दु०-
असातावेदनीय, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्षं जानना चाहिए । इतनी
विशेषता है कि नरकायु, नरकगति, देवगति और दो आशुपूर्वीका कदाचित् बन्ध करता है । यदि
बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता
है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । मात्र
देवायुक्तो छोड़कर इन असातावेदनीय आविकी मुख्यतासे यह सन्निकर्ष कहना चाहिए ।

२२०. अप्रत्याख्यानावरण कोधके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तीन कषायोंका
नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनु-
भागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप
होता है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग निद्राके समान है । इतनी विशेषता है कि आठ कषाय
कहलाना चाहिए । इसी प्रकार तीन कषायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

२२१. प्रत्याख्यानावरण कोधके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तीन कषायोंका
नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका
भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप
होता है । शेष भङ्ग निद्राप्रकृतिके समान है । इसी प्रकार तीन कषायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्षं
जानना चाहिए ।

२२२. कोध संज्वलनके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, चार
दर्शनावरण, साता वेदनीय, तीन संज्वलन, यशःकीर्ति, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे
बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । मानसंज्वलनके जघन्य अनुभागका
बन्ध करनेवाला जीव दो संज्वलनका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक
होता है । शेष भङ्ग कोध संज्वलनके समान है । मायासंज्वलनके जघन्य अनुभागका बन्ध करने-
वाला जीव लोभ संज्वलनका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है ।
शेष भङ्ग मान संज्वलनके समान है । लोभ संज्वलनके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव
पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, सातावेदनीय, यशःकीर्ति, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका
नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है ।

२२३. स्त्रीवेदके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, तीन दर्शनावरण,

पंचिदि०-तेजा०-क०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदे०-
णिमि०-पंचंत० णि० अणंतगुणव्यभ० । सादासाद०-चदुणोक०-तिष्णगदि-दोसरीर-
तिष्णसंठा०-दोशंगो०-तिष्णसंघ०-तिष्णआणु०-उज्जो०—थिराथिर-सुभासुभ-जस०-
अजस०-णीचुच्चामो० सिया० अणंतगुणव्यभ० । एवं णवुंस० । णवरि पंचसंठा०-पंचसंघ०
सिया० अणंतगुणव्यभ० ।

२२४. पुरिस० ज० वं० कोधसंजलणभंगो । णवरि चदुसंज० णि० अणंतगुणव्यभ० ।

२२५. हस्स० ज० वं० पंचणा०-चदुंसणा०-साद०-चदुसंज०-पुरिस०-
जस०-उच्चा०-पंचंत० णि० अणंतगुणव्यभ० । रदि-भय-दु० णियमा । तं तु० । एवं रदि-
भय-दु० ।

२२६. अरदि० ज० वं० पंचणा०-चदुंसणा-सादा०-चदुसंज०-पुरिस०-भय-
दु०-देवगदि-पसत्थद्वावीस-उच्चा०-पंचंत० णि० अणंतगुणव्यभ० । तित्थ० सिया० अणंत-
गुणव्यभ० । सोग० णि० । तं तु० । एवं सोग० ।

सिद्धात्य, सोलह कथाय, भय, जुगुप्सा, उच्चार्यभूष्य जातिः सैक्षर्षरीरदुक्तिः लिङ्गरूपर, व्रीशस्तत्त्वर्ण-
चतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलबुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्सर,
आदेय, निर्माण और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक
होता है । सातवेदनीय, असातवेदनीय, चार नोकथाय, तीन गति, दो शरीर, तीन संस्थान, दो
आङ्गोपाङ्ग, तीन संहनन, तीन आनुपूर्वी, उद्घोत, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति, अयशः-
कीर्ति, नीचगोप्र और उच्चगोप्रका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता
है । इसी प्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि पाँच
संस्थान और पाँच संहननका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है ।

२२७. पुरुषवेदके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवका भङ्ग कोध संज्वलनके समान
है । इतनी विशेषता है कि चार संज्वलनका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा
अधिक होता है ।

२२८. दास्यप्रकृतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, चार
वर्षीनावरण, सातवेदनीय, चार संज्वलन, पुरुषवेद, यशःकीर्ति, उच्चगोप्र और पाँच अन्तरायका
नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । रति, भय और जुगुप्साका
नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य
अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान
पतित शृङ्खिरूप होता है । इसी प्रकार रति, भय और जुगुप्साकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए ।

२२९. अरतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह वर्षीनावरण,
सातवेदनीय, चार संज्वलन, पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा, देवगति आदि प्रशस्त अष्टाहस प्रकृतिदौ०,
उच्चगोप्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता
है । तीर्थकुर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । शोकका
नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनु-
भागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित
शृङ्खिरूप होता है । इसी प्रकार शोककी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए ।

२२७. णिरथाउ० ज० व० पंचणा०-णवदंस०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-
पंचि०-बेउच्चिव०--तेजा०-क०--बेउच्चिव०अंगो०--पसत्थापसत्थ०४-अगु०४-तस०४-
णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० अणंतगुणव्यभ० । असाद०-णिरय०-हुंड०-णिरयाणु०-
अप्पसत्थवि०-अथिरादिव्र० णि० । तं तु० । एवं णिरयगदि-णिरयाणु० ।

२२८. तिरिक्खाउ० ज० व० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-पांुस०-
भय-दु०-तिरिक्ख०-ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०३-उप०-णिमि०-
णीचा०-पंचंत० णि० अणंतगुणव्यभ० । सादासा०-चदुजादि-असंप०-यावर-सुहुम-साधार०-
सिया० । तं तु० । चदुणोक०-पंचि०-ओरालि०अंगो०-तस०-बादर-पते० सिया०-
अणंतगुणव्यभ० । हुंड०-अपज्ज०-अथिरादिपंच० णि० । तं तु० । मणुसाउ० ज० तिरि-
क्खाउ०भंगो^१ । णवरि मणुस०-हुंड०-असंप०-मणुसाणु०-अपज्ज०-अथिरादिपंच० णि० ।
तं तु० ।

यागदक्षिक :— आचार्य श्री सुविद्धासामर्त जी घटाटच

२२७. नरकायुके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पैँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण,
मिश्यात्व, सोलह कषाय, पैँच नोकपाय, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मण-
शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, त्रस-
चतुष्क, निर्माण, नीचगोत्र और पैँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्त-
गुणा अधिक होता है । असातावेदनीय, नरकगति, हुण्डसंस्थान, नरकगत्यानुपूर्वी, अप्रशस्त
विहायोगति और अद्वित आदि छहका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका
भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध
करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार नरकगति और नरकगत्यानुपूर्वी
की मुख्यतासे संशिकर्ष जानना चाहिए ।

२२८. तिर्यक्खायुके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पैँच ज्ञानावरण, नौ दर्शना-
वरण, मिश्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, भय, जुगुप्सा, तिर्यक्खगति औदारिकशरीर, तैजस-
शरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुजघुत्रिक, उपषात, निर्माण,
नीचगोत्र और पैँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता
है । सातावेदनीय, असातावेदनीय, चार जाति, असम्प्राप्तासुपादिका संहनन, स्थावर, सूक्ष्म और
साधारणका कदाचित् बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और
अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह
स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । चार नोकपाय, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, त्रस,
बादर और प्रत्येकका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । हुण्ड
संस्थान, अपर्याप्त और अस्थिर आदि पैँचका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य
अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य
अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । मनुष्यायुके जघन्य अनु-
भागका बन्ध करनेवाले जीवका भङ्ग तिर्यक्खायुके समान है । इतनी विशेषता है कि मनुष्यगति,
हुण्डसंस्थान, असम्प्राप्तासुपादिका संहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अपर्याप्त और अस्थिर आदि पैँचका
नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका

१. आ० प्रतौ तस० णिमि० इति पाठः । २. आ० प्रतौ पते० अणंतगुणव्यभ० इति पाठः ।

३. आ० प्रतौ मणुसाउ० उ० तिरिक्खमंगो इति पाठः ।

२२६. देवाऽऽ० ज० वं पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दु०-
पंचिं०-बेउविव०-तेजा०-क०-बेउविव०श्रंगो०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०४-तस०४-णिमि०-
पंचंत० णिय० अणंतगुणव्यम्० । सादा०-देवम०-समचहु०-देवाणु०-पसत्थवि०-
थिरादिव०-उच्चा० णिं० । तं तु० । इत्युपर्वुरिस० सियाँ० शीणसौर्यैष्टम्भ० । जी यहाराज

२३०. तिरिक्खव० ज० वं० पंचणा०-णवदंस०-सादा०-मिच्छ०-सोलसक०-
पंचणोक०-पंचंत० णिं० अणंतगुणव्यम्० । णाम० सत्थाणभंगो० णीचा० । तं तु० ।
एवं तिरिक्खवाणु०-णीचा० ।

२३१. मणुस० ज० वं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दु०-
पंचंत० णिं० अणंतगुणव्यम्० । सादासाद०-मणुसाऽ०-ब्रह्मसंठा०-ब्रह्मसंघ०-दोविहा०-
अपज्ज०-थिरादिव्युग०-उच्चा० सिया० । तं तु० । सत्तणोक०-पर०-उस्सा०-पज्ज०-
णीचा० सिया० अणंतगुणव्यम्० । पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०-अंगो-पसत्था-
भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धि-
रूप होता है ।

२३२. देवायुके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेयाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण,
मिथ्यात्व, सोलह कपाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रियजाति, वैक्रियिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मण-
शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, ब्रस-
चतुष्क, निर्माण और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक
होता है । सातावेदनीय, देवगति, समचतुरल्लसंस्थान, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगति, स्थिर
आदि छह और उच्चगोत्रका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता
है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो
वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । ऋषिवेद और पुरुषवेदका कदाचित् बन्ध करता है जो
अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है ।

२३०. तिर्यङ्गगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेयाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शना-
वरण, सातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, पाँच नोकषाय और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध
करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान समिक्षणके समान
है । नीषगोत्रका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और
अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह
छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वी और नीषगोत्रकी मुख्यतासे
सम्प्रिकर्ष जानना चाहिए ।

२३१. मनुष्यगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेयाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शना-
वरण, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, भय, जुगुप्सा, और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो
अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । सातावेदनीय, असातावेदनीय, मनुष्यायु, छह संस्थान, छह
संहन्तन, दो विहायोगति, अपर्याप्ति, स्थिर आदि छह युगल और उच्चगोत्रका कदाचित् बन्ध करता
है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है ।
यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । सात
नोकषाय, परघात, उच्छ्रवास, पर्याप्ति और नीषगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य
अनन्तगुणा अधिक होता है । पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर,

पसत्थ०४—अगु०-उप०-तस०-बादर-पते०-णिधि० णि० अणंतगुणव्य० । मणुसाण० णि० । तं तु० । एवं मणुसाण० ।

२३२. देवगदि० ज० वं पंचणा०-णवदंस०-मिच्छ०-सोलसक०-भय०-दु०-पंचतै० णि० अणंतगुणव्य० । सादासाद०-देवाड० सिया० । तं तु० । इत्य०-पुरिस०-हस्स-रदि-अरदि-सोग० सिया० अणंतगुणव्य० । उच्चा० णि० । तं तु० । णाम० सत्थाणभंगो । एवं दवाणु० ।

२३३. एइंदि० ज० वं पंचणा०-णवदंस०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-भय०-दु०-णीचा०-पंचतै० णि० अणंतगुणव्य० । सादासाद०-तिरिक्खाड० सिया० । तं तु० । हस्स-रदि-अरदि-सोग० सिया० अणंतगुणव्य० । णाम० सत्थाणभंगो । एवं वेई०-तेई०-चदुरिं० हेट्रा उवरि॒ एइंदियर्भंगो । णाम० सत्थाणभंगो ।

आौदारिकाङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णन्तुष्क, अप्रशस्त वर्णन्तुष्क, अगुरुलघु, उपघात, त्रस, बादर, प्रत्वेक और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। मनुष्य-गत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए।

२३४. देवगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच छानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुसा, और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। सातावेदनीय, असातावेदनीय और देवायुक्त कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। ऊवेद, पुरुषवेद, दास्य, रति, अरति और शोकका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। उच्चगोत्रका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सञ्जिकर्षके समान है। इसी प्रकार देवगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए।

२३५. एकेन्द्रिय जातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच छानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, भय, जुगुसा, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। सातावेदनीय, असातावेदनीय, और तिर्यङ्गायुक्त कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। दास्य, रति, अरति और शोकका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सञ्जिकर्षके समान है। इसी प्रकार दीन्द्रियजाति, ब्रीन्द्रियजाति और चतुरिन्द्रिय जातिकी मुख्यतासे नामकर्मसे पूर्वकी और बादकी प्रकृतियोंका सञ्जिकर्ष एकेन्द्रिय जातिके समान है तथा नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सञ्जिकर्षके समान है।

१. ता० प्रती॒ एवं॑ मणुसाणु० । णि० तं तु० एवं॑ मणु० [एतमिन्द्रान्तर्गतः पाठोऽधिकः प्रतीयते ।] देवगदि०, आ० प्रती॒ एवं॑ मणुसाणु० णि० तं तु० एवं॑ मणुस० देवगदि० इति पाठः । २. आ० मणु॑ सोलसक० णवुंस० भयदु० णीचा० पंचतै० इति पाठः ।

२३४. पंचिदि० ज व्यक्षेन्द्रियं चित्तणा० मनस्तदैसणाकु॒ विश्वास॑ ल॒ विद्व॑ ल॒ सोल॑ सक०-
पंचणोक०-णीचा०-पंचत० णि० अणंतरुणब्ध० | णाम० सत्थाणभंगो० | एवं तस० ।

२३५. ओरालि० जं० बं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोल॑ सक०-
पंचणोक०-णीचा०-पंचत० णि० अणंतरुणब्ध० | णाम० सत्थाणभंगो० | एवं
उज्जो० ।

२३६. वेऽन्वित० ज० बं० हेदा उवरि॑ पंचिदिय॑ भंगो० | णाम० सत्थाणभंगो० |
एवं वेऽन्वित॑ अंगो० ।

२३७. आहार० ज० बं० पंचणा०-छदंस०-सादा०-चदुरंज०-पंचणोक०-देव-
गदिपसत्थद्वावीसं-उच्चा०-पंचत० णि० अणंतरुणब्ध० | आहार० अंगो॑० णि० | तं तु० ।
तित्य० सिया० अणंतरुणब्ध० | एवं आहारंगोवंग० ।

२३८. तेजाक० हेदा उवरि॑ पंचिदियभंगो० | णाम० सत्थाणभंगो० | एवं तेजङ्ग-
भंगो० कम्मइ०-पसत्थदण्ण४-अगु०३-बादर-पञ्जत-पत्ते०-णिमि० ।

२३९. पञ्चेन्द्रिय जातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ
दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकपाय, नीचगोत्र और पाँच अन्त-
रायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तरुणा अधिक होता है। नामकर्मका भङ्ग
स्वस्थान सञ्जिकर्षके समान है। इसी प्रकार ब्रह्म प्रकृतिकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए।

२४०. ब्रौदारिकशरीरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ
दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकपाय, नीचगोत्र और पाँच
अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तरुणा अधिक होता है। नामकर्मका
भङ्ग स्वस्थान सञ्जिकर्षके समान है। इसी प्रकार उद्योतकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए।

२४१. वैक्षियिकशरीरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवके नामकर्मसे पूर्वकी और
बादकी प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय जातिके समान है। नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सञ्जिकर्षके
समान है। इसी प्रकार वैक्षियिक आङ्गोपाङ्गकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए।

२४२. आहारकशरीरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह
दर्शनावरण, सातावेदनीय, चार संज्वलन, पाँच नोकपाय, देवगति आदि प्रशस्त अद्वाईस प्रकृतियों,
उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तरुणा अधिक होता
है। आहारक आङ्गोपाङ्गका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध
करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता
है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। तीर्थद्वार प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है जो
अजघन्य अनन्तरुणा अधिक होता है। इसी प्रकार आहारक आङ्गोपाङ्गकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष
जानना चाहिए।

२४३. तैजसशरीरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवके नामकर्मसे पूर्वकी और
बादकी प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय जातिके समान है। नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सञ्जिकर्षके
समान है। इसी प्रकार तैजसशरीरके समान कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक,
बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए।

२३६. समचदु० ज० व० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दु०-
पंचत० णि० अणंतगुणब्ध०। सादासाद०-देवाउ०-उच्चा० सिया०। तं तु०। सत्तणोक०-
दोआउ०-णीचा० सिया० अणंतगुणब्ध०। णाम० सत्थाणभंगो। एवं पसत्थवि०-
सुभग-सुस्सर-आदे०।

२४०. णगोद० ज० व० पंचणा०-णवदंस०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दु०-
पंचत० णिय० अणंतगुणब्ध०। सादासाद०-उच्चा० सिया०। तं तु०। सत्तणोक०-
दोआउ०-णीचा० सिया० अणंतगुणब्ध०। णाम० सत्थाणभंगो। एवं णगोद०-भंगो
तिष्णसंठा०-पञ्चसंघटिक।:- आदार्य श्री लुविदिलागर जी घटाराज

२४१. हुँड० ज० व० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय०-दु०-पंचत०
णि० अणंतगुणब्ध०। दोवेदणी०-तिष्णआउ०-उच्चा० सिया०। तं तु०। सत्तणोक०-
णीचा० सिया० अणंतगुणब्धहियं०। णाम० सत्थाणभंगो। एवं हुँड०-भंगो दूभग-अणादे०।

२३८. समचतुरस्त संस्थानके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ह्वानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। सातवेदनीय, असातवेदनीय, देवायु और उच्चगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। सात नोकषाय, दो आयु और नीचगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सञ्जिकर्षके समान है। इसी प्रकार प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर और आदेयकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए।

२४०. न्यप्रोध संस्थानके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ह्वानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। सातवेदनीय, असातवेदनीय और उच्चगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। सात नोकषाय, दो आयु और नीचगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सञ्जिकर्षके समान है। इसी प्रकार न्यप्रोध संस्थानके समान तीन संस्थान और पाँच संहननकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए।

२४१. हुण्ड संस्थानके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ह्वानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। दो वेदनीय, तीन आयु और उच्चगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। सात नोकषाय और नीचगोत्र का कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सञ्जिकर्षके समान है। इसी प्रकार हुण्ड संस्थानके समान दुर्भग और अनादेयकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए।

२४२. ओरालि०अंगो ज० ब० हेहा उवरि ओरालिय० भंगो० णाम० सत्थाणभंगो०

२४३. असंप० ज० ब० पंचणा०-णवदंस०-मिच्छ०-सोलसक०-भय०-दुरु०-पंचंत० णि० अणंतगुणब्ध०। दोवेदणी०-तिरिक्त०-मणुसाड०-उच्चा० सिया०। तं तु०। सत्तणोक०-णीचा० सिया० अणंतगुणब्ध०। णाम० सत्थाणभंगो०।

२४४. आदाउज्जो० ज० ब० पंचणा०-णवदंस०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-णीचा०-पंचंत० णि० अणंतगुणब्ध०। णाम० सत्थाणभंगो०।

२४५. अप्पसत्थवि० ज० ब० पंचणा०-णवदंस०-मिच्छ०-सोलसक०-भय०-दु०-पंचंत० णि० अणंतगुणब्ध०। यस्तद्वाद अणित्याङ्ग० उड्डान्त्यास्त्रियर्थ० कृत्संतु०। सत्तणोक०-दोआउ०-णीचा० सिया० अणंतगुणब्ध०। णाम० सत्थाणभंगो०। एवं दुस्सर०।

२४६. सुहुम० ज० ब० पंचणा०-णवदंस०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-भय०-दु०-णीचा०-पंचंत० णि० अणंतगुणब्ध०। सादासाद०-तिरिक्तवाड० सिया०। तं तु०।

२४७. औदारिक आङ्गोपाङ्कके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीवके नामकर्मसे पूर्वकी और बादकी प्रकृतियोंका भंग औदारिकशरीरके समान है। तथा नामकर्मका भंग स्वस्थान सम्बन्धके समान है।

२४८. असम्प्राप्तासृष्टिका संहननके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। दो वेदनीय, तिर्यङ्गायु, मनुष्यायु और उच्चगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। सात नोकषाय और नीचगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। नामकर्मका भंग स्वस्थान सम्बन्धके समान है।

२४९. आतप और उद्योतके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। नामकर्मका भंग स्वस्थान सम्बन्धके समान है।

२५०. अप्रशस्त विद्यायोगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। सातावेदनीय, असातावेदनीय, नरकायु और उच्चगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। सात नोकषाय, दो आयु और नीचगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। नामकर्मका भंग स्वस्थान सम्बन्धके समान है। इसी प्रकार दुःस्वर प्रकृतिकी मुख्यतासे सम्बन्धित जानना चाहिए।

२५१. सूक्ष्मके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, भय, जुगुप्सा, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। सातावेदनीय, असातावेदनीय और तिर्यङ्गायुका कदाचित् बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अज-

चहुणोक० सिया० अणंतगुणवभ० | णाम० सत्थाणभंगो | एवं अपज०-साधार० | पवरि
अपजस्ते दोआउ० सिया० | तं तु० |

२४७. थिर० ज० ब० पंचणा०-वदंस०--चहुसज०-भय०-दु०-पंचंत० णि०
अणंतगुणवभ० | थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-वारसक०--सत्थाणोक०--तिरिक्ख-मणुसाउ०-
जीचा० सिया० अणंतग० | सादासाद०-देवाउ०-उच्चा० सिया० | तं तु० | णाम०
सत्थाणभंगो | एवं सुभ-जस० |

२४८. प्राग्विश्वर्थकः ज अङ्गेष्ट्वपञ्चणमुक्तद्वाहन्तरसक०-पुरिस०-अरदि-
सोग-भय-दु०-उच्चा०-पंचंत० णि० अणंतगुणवभ० | णाम० सत्थाणभंगो |

२४९. उच्चा० ज० ब० पंचणा०-णवदंस०-मिच्छ०-सोलसक०-भय०-दु०-
पंचि०-तेजा०-क०--पसत्थापसत्थ०४-अगु०४-तस०४-णिमि०--पंचंत० णि० अणंत-
गुणवभियं० | सादासाद०-देवाउ०-छसंठा०-छसंघ०-दोगदि-दोआणु०-दोविहा०-

ज्ञन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजबन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। चार नोकपायका कदाचित् बन्ध करता है जो अजबन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सञ्जिकर्षके समान है। इसी प्रकार अपर्याप्त और साधारण प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपर्याप्तके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव दो आयुओंका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजबन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजबन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है।

२५०. स्थिरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्ञलन, भय, जुगुप्सा और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजबन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। स्त्यानगुद्धि, तीन, मिथ्यात्व, वारह कपाय, सात नोकपाय, तिर्थज्ञायु, मनुष्यायु और नीचगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है जो अजबन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। सातावेदनीय, असातावेदनीय, देवायु और उच्चगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजबन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजबन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सञ्जिकर्षके समान है। इसी प्रकार शुभ और यशःकीर्तिकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए।

२५१. तीर्थङ्कर प्रकृतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, असातावेदनीय, वारह कपाय, पुरुषवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजबन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सञ्जिकर्षके समान है।

२५२. उच्चगोत्रके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नी दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, भय जुगुप्सा, पञ्चेत्रिय जाति, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, असचतुष्क, निर्माण और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजबन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। सातावेदनीय, असातावेदनीय, देवायु, छह संस्थान, छह संहनन, दो गति, दो आनुपूर्वी, दो विद्यायोगति और स्थिर आदि छह युगलका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजबन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजबन्य अनुभागका बन्ध करता है तो

थिरादिल्लयुग० सिया० । तं तु० । सत्तणोक०-मणुसात०-दोसरीर-दोशंगो० सिया० अणंतगुणवभियं बन्धदि ।

२५०. आदेसेण णिरएसु आभिणि० ज० वं० चदुणा०-बदंसणा०-बारस-क०-पंचणोक०-अप्पसत्थ०४-उप०-पंचंत० णि० । तं तु० । साद०-मणुसग०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०अंगो०-बजरि०-पसत्थ०-४-मणुसाणु०-अगु०३-पसत्थवि०-तस०४-थिरादिल्ल०-णिमि०-उच्चा० णि० अणंत-गुणवभ० । तित्थ० सिया० अणंतगुणवभ० । एवं आभिणि०भंगो० तं तु० पदिदाणं सब्बाणं ।

२५१. **णिहाणिहाष्ट** ज० वं० पंचणा०-बदंस०-साद०-बारसक०-पंचणोक०-पार्वदिक०-आचाय० श्री हुविलासगर जी छहाराज एवं उपर्युक्त शब्दों का अर्थ इस प्रकार है—
पंचिं-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०अंगो०-बजरि०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०४-पसत्थवि०-तस०४-थिरादिल्ल०-णिमि०-पंचंत० णि० अणंतगु० । पचला-पचला०-धीणगिद्धि०-मिच्छ०-अणंताणु०४ णि० । तं तु० । तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु०-गीचा० सिया० । तं तु० । मणुस०-मणुसाणु०-उच्चो०-उच्चा० सिया० अणंतगुणवभ० ।

बहु छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । सात नोकघाय, मनुष्यायु, दो शरीर और दो आङ्गोपाङ्ग-का कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक अनुभागबन्ध करता है ।

२५०. आदेशसे नारकियोंमें आभिनिवोधिक ज्ञानावरणके जबन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, बारह कथाय, पाँच नोकघाय, अप्रशस्त वर्ण-चतुष्क, उपघात और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जबन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । सातवेदनीय, मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरल्लसंस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्जनाराचसंहनन, प्रशस्त वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुत्रिक, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदिल्ल, निर्माण और उच्चगोत्रका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । तीर्थङ्करका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । इसी प्रकार तं तु पतित सब प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष आभिनिवोधिक ज्ञानावरणके समान ज्ञानना चाहिए ।

२५१. निद्रानिद्राके जबन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, सातवेदनीय, बारह कथाय, पाँच नोकघाय, पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरल्लसंस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्जनाराचसंहनन, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह, निर्माण और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । प्रचलाप्रचला, स्त्यानगृद्धि, मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचारका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जबन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । तिर्यङ्गगति, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है । त्रदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । मनुष्यगति, मनुष्यगत्या-

एवं पञ्चलापञ्चला०-थीणगिद्धि०-मिच्छ०-अणंताणु०४ ।

२५२. साद० ज० ब० पञ्चणा०-छदंसणा०-बारसक०-भय०-दु०-पंचिदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०श्रंगो०-पसत्यापसत्थ०४-अगु०४-तस०४-णिमि०-पंचत० णि० अणंतगु० । थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणु०४-सखणोक०-तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु०-उज्जो०-तित्थ०-णीचा० सिया० अणंतगुणव्य० । दोआउ०-मणुसग०-ब्रह्मसंठा०-ब्रह्मसंघ०-मणुसाणु०-दोविहा०-थिरादिक्ष०-उच्चा० सिया० । तं दु० । एवं सादभंगो असाद०-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० ।

२५३. इत्थि० ज० ब० पञ्चणा०-णवदंस०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दु०-पंचिदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०श्रंगो०-पसत्यापसत्थ०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुहसर-आदे०-णिमि०-पंचत० णि० अणंतगुणव्य० । सादासाद०-चहु-णोक०-दोगदि-तिष्णसंठा०-तिष्णसंघ०-दोआणु०-उज्जो०-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस०-दोगोद० सिया० अणंतगुणव्य० । एवं णवुंस० । णवरि पंचसंठा०-पंचसंघ० सिया० अणंतगुणव्य० ।

तुपूर्वी, उद्योत और उच्चगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । इसी प्रकार प्रथलापञ्चला, स्त्यानगृद्धि, मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चारकी मुख्यतासे जानना चाहिए ।

२५४. सातावेदनीयके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, बारह कथाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मण-शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, ग्रसचतुष्क, निर्माण और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । स्त्यानगृद्धित्रिक, मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार, सात नोकथाय, तिर्यङ्गगति, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वी, उद्योत, तीर्थङ्कर और नीचगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । दो आयु, मनुष्यगति, छह संस्थान, छह संहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, दो विद्यायोगति, स्थिर आदि छह और उच्चगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार सातावेदनीयके समान असातावेदनीय, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्तिकी मुख्यतासे सम्भिक्ष्य जानना चाहिए ।

२५५. स्त्रीवेदके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कथाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मण-शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, ग्रसचतुष्क, प्रशस्त विद्यायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुष्वर, आदेय, निर्माण और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । सातावेदनीय, असातावेदनीय, चार नोकथाय, दो गति, तीन संस्थान, तीन संहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति, अयशःकीर्ति और दो गोत्रका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । इसी प्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सम्भिक्ष्य जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि वह पाँच संस्थान और पाँच संहननका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य

२५४. अरदि० ज० व० पंचणा०-क्रदंसणा०-सादावे०-वारसक०-पुरिस०-भय-
दु०-मणुसग०-पंचिदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०अंगो०-कज्जरि०-
पसत्थापसत्थ०४-मणुसाणु०-अगु०४-पसत्थनि०-तस०४-थिर-सुभ-सुभग-सुस्सर-
आदे०-जसगि०-णिमि०-उच्चा०-पंचत॒लिमि॒क अणंलङ्घनभ॒म | शुद्धित्तुलिका॒क्षम्भ॒-
गुणब्भ॒० | सोग० णि० | तं तु० | एवं सोग० |

२५५. तिरिक्खाउ० ज० व० पंचणा०-णवदंसणा०-पिच्छ०-सोलसक०-भय०-
दु०-तिरिक्ख०-पंचिदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-पसत्थापसत्थ०४-
सिरिक्खाणु०-अगु०४-तस०४-णिमि०-णीचा०-पंचत० णि० अणंतगुणब्भ॒० | सादा-
साद०-क्षसंठा०-क्षसंघ०-दोविहा०-थिरादिक्षुग० सिया० | तं तु० | सत्तणोक०-
उज्जो० सिया० अणंतगुणब्भ॒० | एवं मणुसाउ० | णवरि सत्तणोक०-णीचा० सिया०
अणंतगुणब्भ॒० | सादादि याव उच्चा० सिया० | तं तु० | मणुस०-मणुसाणु०-
अनन्तगुणा अधिक होता है।

२५६. अरतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, सातावेदनीय, बारह कषाय, पुरुषवेद, भय, जुगुसा, मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समच्छुरस्संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रवैभनाराच-संहनन, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर, शुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, यशःकीर्ति, निर्माण, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। तीर्थकुर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। शोकका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह वह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार शोकको मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२५७. तिर्यक्षायुके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्म, सोलह कषाय, भय, जुगुसा, तिर्यक्षगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, तिर्यक्षगत्यानुपूर्वी। अगुरुलघुचतुष्क, त्रसचतुष्क, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। सातावेदनीय, असातावेदनीय, छह संस्थान, छह संहनन, दो विहायोगति और स्थिर आदि छह युगलका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह वह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। सात नोकषाय और लयोतका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार मनुष्यायुकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सात नोकषाय और नीचगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। सातावेदनीयसे लेकर उच्चगोत्र तककी प्रकृतियोंका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभाग का भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका

१. ता० प्रतौ० ज० व० प० (?) पंचणा० इति पाठः । २. ता० आ० प्रत्योः मणुसाणु० इति पाठः ।

पणुसाड०भंगो० ।

२५६. पंचिदि० ज० वं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-
णवुंस०-अरादि०-सोग-भय-दु०-नीचा०-पंचतं० णि० अणंतगुणव्य० । णाम० सत्थाण-
भंगो । एवं पंचिदियभंगो ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०आंगो०-पसत्थ०४-अगु०३-
उज्जो०-तस०४-णिमि० ।

२५७. समचदु० ज० वं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दु०-
णि० अणंतगुणव्य० । सादासाद०-दोआड०-उच्चा० सिया० । तं तु० । सत्तणोक०-
नीचा० सिया० अणंतगुणव्य० । णाम० सत्थाणभंगो । एवं समचदुर०भंगो पंचसंवा०-
पंचसंघ०-दोविहा०-शुभादितिष्णयुग० ।

२५८. तित्थ० ज० वं० पंचणा०-छदंसणा०-असादा०-बारसक०-पुरिस०-
अरादि०-सोग-भय-दु०-उच्चा०-पंचतं० णि० अणंतगुणव्य० । णाम० सत्थाणभंगो ।

२५९. उच्चा० ज० वं० पंचणा०-णवदंस०-मिच्छ०-सोलसक०-भय० दु०-
पंचिदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०आंगो०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०४-तस०४'-
बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । अनुष्यगति और मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी
मुख्यतासे सञ्जिकर्ष मनुष्यायुके समान जानना चाहिए ।

२६०. पञ्चेन्द्रिय जातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच इनावरण, नी-
दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा,
नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अज्ञबन्ध अनन्तगुणा अधिक होता
है । नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सञ्जिकर्षके समान है । इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय जातिके समान
औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु-
त्रिक, व्योत, त्रसचतुष्क और निर्माणकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए ।

२६१. समचतुरल्लसंस्थानके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच इनावरण,
नी दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्ध करता है जो
अज्ञबन्ध अनन्तगुणा अधिक होता है । सातावेदनीय, असातावेदनीय, दो आयु और उच्चगोत्रका
कदाचित् बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अज्ञबन्ध अनु-
भागका भी बन्ध करता है । यदि अज्ञबन्ध अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित
वृद्धिरूप होता है । सात मोक्षवाय और नीचगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है जो अज्ञबन्ध
अनन्तगुणा अधिक होता है । नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सञ्जिकर्षके समान है । इसी प्रकार सम-
चतुरल्लसंस्थानके समान पाँच संस्थान, पाँच संहनन, दो विहायोगति और शुभादि तीन युगलकी
मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए ।

२६२. तीर्थङ्कर प्रकृतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच इनावरण, छह
दर्शनावरण, असातावेदनीय, बारह कषाय, पुरुषवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, उच्चगोत्र और
पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अज्ञबन्ध अनन्तगुणा अधिक होता है । नामकर्मका
भङ्ग स्वस्थान सञ्जिकर्षके समान है ।

२६३. उच्चगोत्रके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच इनावरण, नी दर्शना-
वरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर,

णिमि० णि० अणंतमुणव्वभ० । सादासाद०--मणुसार०-क्षसंठा०-क्षसंघ०-दोविहा०-
थिरादित्युग० सिया० । तं तु० । सत्तणोक० सिया० अणंतमुणव्वभ० । मणुसगदि-
मणुसाणु० णि० । तं तु० । एवं सत्तमाए पुढबीए । णवरि मणुस०-मणुसाणु०-उच्चा०
तित्थयरभंगो । थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणु०४-इतिथ०-णवुंस०-पंचसंठा०-पंच-
संघ०-अथ्यसत्थ०-दूधग-दुस्सर-अणादे०-णीचा० एदेसि तिरिक्खगदी धुवं कादब्बं ।
णवरि थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणु०४ ज० वं० तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु०-णीचा०
मिच्छव्वज्ञं तु क्षा॑ चाह॒ क्षेद॑ क्षुषो॑ ल्लाज्ज्वो॑ उप्पल्ल॒ ल्लाज्ज्वु॑ । णवरि साद० ज० वं० दोगदि-
दोआणु०-उज्जो०-दोगो० सिया० अणंतमुणव्वभ० । एवं असाद०-थिरादितिणियुगलाण० ।
ब्रह्म उवरिमासु णिरथोघो । णवरि तिरिक्ख०--तिरिक्खाणु०-णीचा० परियत-
माणियाण० कादब्बं॑ । थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणु०४-इत्थि॑-णवुंसगाण॑ मणुसगदि-
दुगं कादब्बं॑ ।

कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुस्तुभुचतुष्क, असचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। सातावेदनीय, असातावेदनीय, मनुष्यायु, वह संस्थान, छह संहनन, दो विहायोगति और स्थिर आदि छह युगलका कदाचित बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित शृद्धिरूप होता है। सात नोकधायका कदाचिन् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। मनुष्यगति और मनुष्यगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित शृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार सातवी पृथिवीमें भी जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रका भङ्ग तीर्थकुर प्रकृतिके समान है। तथा स्त्यानगुद्धि तीन, मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार, ऋवेद, नपुंसकवेद, पौच संस्थान, पौच संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भाग, दुर्म्मथर, अनावेद और नीचगोत्र इनकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष कहते समय तिर्यङ्गगतिको ध्रुव करना चाहिए। इतनी विशेषता है कि स्त्यानगुद्धि तीन, मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी खारके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यङ्गगति, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभाग का भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित शृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार इन प्रकृतियोंकी मुख्यतासे परस्पर सञ्चिकर्ष जानना चाहिए। किन्तु वह स्त्यानगुद्धि तीन आदिकी मुख्यतासे कहे गये सञ्चिकर्षके समान ही जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सातावेदनीयके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव दो गति, दो आनुपूर्वी, उद्योत और दो गोत्रका कदाचित बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार असातावेदनीय और स्थिर आदि तीन युगलोंकी अपेक्षा जानना चाहिए। प्रारम्भकी छह पृथिवियोंमें सामान्य नारकियोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि तिर्यङ्गगति, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रको परिवर्तमान प्रकृतियोंमें करना चाहिए। तथा स्त्यानगुद्धि तीन, मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार, ऋवेद और नपुंसकवेदके मनुष्यगति द्विक करना चाहिए।

२६०. तिरिक्खेसु आभिषिं० ज० व० चदुणा०-छदंस०-अटकसा०-पंचणोक०-अप्पसत्थ०-४-उप०-पंचंत० णिय० । तं तु० । साद०-देवग० पसत्थसत्तावीसं-उच्चा० णि० अणंतगुणब्ध० । एवं तं तु पदिदाओ अण्णयण्णस्स तं तु० । सेर्स ओघं । णवरि अरदि० ज० व० पंचणा०-छदंस०-अटक०-पुरिस०-भय-दु०-उच्चा०-पंचंत० णि अणंत-गुणब्ध० । सेर्सं णामाणं णाणावरणभंगो । एवं पंचिदिय० तिरि० ३ । णवरि तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु०-गीवा० परियतमाणियाणं कादब्धं तिरिक्खेसु० । णवरि पंचिदियजादीणं ओरालि०-ओरालि०अंगो०-उज्जो०-तिरिक्खगदिदुग० अप्पणो सत्थाणं कादब्धं ।

वद्धद्व्यूङ् पंचिदिष्ठलिक० छुक्कमक्काव्यात्रिष्ठिल्लक्क० व० चदुणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-अप्पसत्थ०-४-उप०-पंचंत० णि० । तं तु० । साद०-मणुस०-पंचिदि०-तिष्णसरीर-समच्छु०--ओरालि०अंगो०-बज्जरि०-पसत्थ०-४-मणु-साणु०-अगु० ३-पसत्थवि०-तस४-थिरादिष्ठ०-णिमि०-उच्चा० णि० अणंतगुणब्ध० । एवं तं तु० पदिदाओ अणोणं तं तु० ।

२६०. तिर्यङ्गोमें आभिनिबोधिकङ्गानावरणके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार झानावरण, छह दर्शनावरण, आठ कषाय, पाँच नोकषाय, अप्रशस्त, वर्णचतुष्क उपघात, और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थाने पतित वृद्धिरूप होता है। सातावेदनीय, देवगति आदि प्रशस्त सत्ताईस प्रकृतियों और उच्चगोत्रका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार तं तु पतित जितनी प्रकृतियों हैं उनकी मुख्यतासे परस्पर आभिनिबोधिकङ्गानावरणकी मुख्यतासे जिस प्रकार सञ्चिकर्ष कहा है उस प्रकार जानना चाहिए। शेष भङ्ग ओधके समान है। इतनी विशेषता है कि अरतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच झानावरण, छह दर्शना-वरण, आठ कषाय, पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। शेष नामकर्मकी प्रकृतियोंका झानावरणके समान भङ्ग है। इसी प्रकार अर्थात् सामान्य तिर्यङ्गोके समान पञ्चेन्द्रिय तिर्यङ्गत्रिकके सब प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि तिर्यङ्गोमें तिर्यङ्गगति, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रको परिवर्तनान प्रकृतियोंमें करना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रियजाति आदिमें औदारिकशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, उथोत और तिर्यङ्गगतिद्विकका अपना अपना स्थान सञ्चिकर्ष कहना चाहिए।

२६१. पञ्चेन्द्रिय तिर्यङ्ग अपर्याप्तकोमें आभिनिबोधिकङ्गानावरणके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार झानावरण, नी दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपघात और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थाने पतित वृद्धिरूप होता है। सातावेदनीय, मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रियजाति, तीन शरीर, समचतुरक्षसंस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रपूर्वनाराच-संहनन, प्रशस्त वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुत्रिक, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह, निर्माण और उच्चगोत्रका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक

२६२. साद० ज० वं० पंचणा०-णवदंस०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-हु०-ओरालि०-तेजा०-क०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०-उप०-णिमि०-पंचत० णि० अण्तगुणव्य०। सत्तणोक०-ओरा०अंगो०-पर०-उस्ता०-आदाउज्जो० सिया० अण्तगुणव्य०। दो आउ०-दोगदि-पंचजादि-छसंठा०-छसंघे०-दोआणु०-दोविहा०-तस-थावरादिदसयुग०-दोगो० सिया०। तं हु०। एवं सादभंगो असाद०-अथिर-असुभ०-अजस०।

२६३. इत्थि० ज० वं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-हु०-मणुस०-पंचिदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-पसत्थापसत्थ०४-मणुसाणु०-अगु०४-पसत्थवि०तस०४-सुभग-सुस्तर-आदे०-णिमि०-उच्चा०-पंचत० णि० अण्त-गुणव्य०। सादासाद०-चदुणीक०-तिणिसंठा०-तिणिसंघ०-थिरादितिणियुग०-सिया अण्तगुणव्य०। एवं णकुंस०। णवरि पंचसंठा०-पंचसंघ०।

२६४. अरदि० ज० वं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-पुरिस०-होता है। इसी प्रकार तं हु पतित जितनी प्रकृतियाँ हैं उनकी मुख्यतासे परस्पर सञ्चिकर्ष आभिन्न-धोधिकज्ञानावरणके समान जानना चाहिए।
मार्गदर्शक :— ज्ञानावली क्षुविज्ञानागत जी छाटाल

२६२. सातवेदनीयके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपवात, निर्माण और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। सात नोकषाय, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, परवात, उच्छ्रवास, आतप और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। दो आयु, दो गति, पाँच जाति, छह संस्थान, छह संहनन, दो आनुपूर्वी, दो विहायोगति, त्रस-स्थावर आदि दस युगल और दो गोत्रका कदाचित् बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार सातवेदनीयके समान असातवेदनीय, अस्थिर, अशुभ और अयशकीर्तिकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना चाहिए।

२६३. ख्लीवेदके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, मनुष्यगति, पञ्चेत्रियजाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्तर, आदेय, निर्माण, उच्चगोत्र, और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। सातवेदनीय, असातवेदनीय, चार नोकषाय, तीन संस्थान, तीन संहनन और स्थिर आवि तीन युगलका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसमें पाँच संस्थान और पाँच संहनन कहने चाहिए।

२६४. अरतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण,

१. ता० प्रतौ पंचजादि० छसंघ० इति पाठः। २. ता० प्रतौ अगु० पसत्थापसत्थ० इति पोठः।

०-दु०-मणुसे पूर्णाच्छिदि०-ओरलिल०-तीजात्कर्त्तव्यमध्येतु० व्योगात्ति० अंगो०-वज्जरि०-पसत्थापसत्थ०४-मणुसाणु०-अगु०४-पसत्थवि०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदे०-णिमि०-उच्चा०-पंचंत० णि० अणंतगुणव्यम्० । सादासाद०-थिरादितिणियुग० सिया० अणंतगुणव्यम्० । सोग० णि० । तं तु० । एवं सोग० । तिरिख०-मणुसाउ०-मणुसग०-मणुसाणु० ओर्धं ।

२६५. तिरिख० ज० वं० पंचणा०-गवदंस०-मिच्छ०-सोलसक०-भय०-दु०-पंचंत० णि० अणंतगुणव्यम्० । सादासाद०-तिरिख्वाउ० सिया० । तं तु० । सत्त-णोक० सिया० अणंतगुणव्यम्० । णीचा० णि० । तं तु० । णाम० सत्थाणभंगो० । एवं तिरिख्वाणु०-णीचा० । चहुजादि-छसंठा०-छसंघ०-दोविहा०-थिरादि०४ ओर्धं ।

२६६. पंचिदि० ज० वं० पंचणा०-गवदंस०-मिच्छ०-सोलसक०-भय०-दु०-पंचंत० णियमा० अणंतगुणव्यम्० । सादासाद०-दोआउ०-दोगोद० सिया० । तं तु० ।

मिथ्यात्व, सोलह कपाय, पुरुषवेद, भय, जुगुसा, मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरल्लासंस्थान, औदारिक आंगोपांग, वर्जीभनाराचसंहनन, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलभुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, व्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । सातावेदनीय, असातावेदनीय और स्थिर आदि तीन युगलका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । शोकका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार शोककी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । तिर्यङ्गायु, मनुष्यायु, भनुष्यगति और मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ओर्धके समान है ।

२६५. तिर्यङ्गगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नी दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, भय, जुगुसा और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । सातावेदनीय, असातावेदनीय और तिर्यङ्गायुका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह वह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । नीचगोत्रका नीकपायका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह वह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सन्निकर्षके समान है । इसी प्रकार तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वी वृद्धिरूप होता है । नीचगोत्रकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । चार जाति, वह संस्थान, वह संहवन, दो विहायोगति और स्थिर आदि चार युगलकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ओर्धके समान है ।

२६६. पञ्चेन्द्रिय जातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नी दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, भय, जुगुसा और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । सातावेदनीय, असातावेदनीय, दो आयु और दो गोत्रका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह

सत्त्वप्रोक्त० सिया० अण्ठतगुणव्य० । णाम० सत्थाणभंगो । एवं पंचिंदियजादिभंगो तत्स०४ । थिरादिक्षयुग० हृष्टा उवरि पंचिंदियभंगो । णामाणं अप्पप्पणो सत्थाणभंगो ।

२६७. ओरालि० ज० ब० पंचणा०-शबदंसणा०-असाद०-मिळ०-सोलसङ्क०-पंचणांक०-णीचा०-पंचंत० णिय० अण्ठतगुणव्य० । णाम० सत्थाणभंगो । एवं ओरालि० लियभंगो तेजा०-क०-पस्तथव०४—अमु०-णिमि०-ओरालि०अंगो०-पर०-उस्सा० । आदाडज्जो० एवं चेव । सादासाद०-चदुणोक०सिया० अण्ठतमुणव्य० । णाम० सत्थाणभंगो । उच्चा० ओघो । णवरि पंचिंदिय० णि० । तंतु० । एवं सब्बअपज्जताणं सब्बविग्लिदियाणं पुढ०-आउ०-वणप्फदि०-बादरपत्ते०-णियोदाणं च । लेऊणं [बाल्ण] पि एवं चेव । णवरि मणुसगदिचदुवकं वज्ज । तिरिक्खगदिव्यविगाणं सब्बाणं आभिण०भंगो । एङ्गिंदिएसू अपज्जतभंगो । णवरि तिरिक्खगदितिमं तिरिक्खोघं ।

२६८. मणुस०३ स्वविगाणं संजमपाओगमाणं ओघं । सेसाणं पंचिंदिय-
तिरिक्खवभंगो । गांडिलकि :- आचार्य श्री सुविधिलालगट जी घाराज

छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । सात नोकषायका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सञ्जिकर्षके समान है । इसी प्रकार पञ्चेन्द्रियजातिके समान व्रसचतुष्ककी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए । स्थिर आदि वह युगलकी मुख्यतासे नामकर्मसे पूर्वकी और बादकी प्रकृतियोंका सञ्जिकर्ष पञ्चेन्द्रियजातिके समान है । तथा नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग अपने अपने स्वस्थान सञ्जिकर्षके समान जानना चाहिए ।

२६९. औदारिकशरीरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, असातवेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सञ्जिकर्षके समान है । इसी प्रकार औदारिकशरीरके समान तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, निर्माण, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, परघात और उच्छ्वासकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए । आतप और उत्तोतकी मुख्यतासे भी इसी प्रकार जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि यह सातवेदनीय, असातवेदनीय, और चार नोकषायका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सञ्जिकर्षके समान है । उच्चगोत्रकी मुख्यतासे ओघके समान सञ्जिकर्ष है । इतनी विशेषता है कि यह पञ्चेन्द्रिय जातिका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु यह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभाग का भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो यह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार अर्धात् पञ्चेन्द्रिय तिर्यङ्ग अपर्याप्तिकोंके समान सब अपर्याप्तक, सब विक्लेन्द्रिय, पृथिवीकायिक, जलकायिक, घनस्पतिकायिक, घनस्पतिकायिक बादर प्रत्येक और लिंगोद जीवोंके जानना चाहिए । अग्निकायिक और वायुकायिक जीवोंके भी इसी प्रकार जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि मनुष्यगति चतुष्कको छोड़कर जानना चाहिए । तथा तिर्यङ्गगति आदि सब ध्रुव प्रकृतियोंका भङ्ग आग्निवोधिकझानावरणके समान है । एकेन्द्रियोंमें अपर्याप्तिकोंके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि तिर्यङ्गगतित्रिकका भङ्ग सामान्य तिर्यङ्गोंके समान है ।

२६१. मनुष्यश्रिकमें क्षयक प्रकृतियों और संयम प्रायोग्य प्रकृतियों इनका भङ्ग ओघके समान है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यङ्गोंके समान है ।

२६९. देवेषु सत्त्वणं कम्माणं पद्मपुद्विभंगो । सादावे० ज० व० दोगदि-
एईदि०-छसंठा०-छसंघ०-दोआण०-दोविहा०-थावर-थिरादिव्युग०-दोगो० सिया० ।
तं तु० । पंचि०-ओरालि०अंगो०-आदाउज्जो०-तस०-तिथ० सिया० अणंतगुणधभ० ।
सेसाणं पिरयभंगो । णामाणं लिरिक्खगदिलिं परियत्प्राणियाणं कादव्यं । एईदि०-
आदाव-थावर० ओघं । पंचि०-ओरालि०अंगो०-तस० पिरयभंगो । णाम० सत्थाणभंगो ।
सेसं पद्मपुद्विभंगो ।

२७०. भवण०-बाणव०-जोदिसि०—सोधभीसाणं सत्त्वणं कम्माणं देवोघं ।
णामाणं हेढाै उवरि देवोघं । उवरि णामाणं अप्पणो सत्थाणभंगो । सणंकुमार
याव सहसर ति पद्मपुद्विभंगो । आणद याव णवगेवज्ज ति सत्त्वणं कम्माणं एवं
चेव । णामाणं पि तं चेव । उवरि मणुस० ज० व० पंचणा०-णवदंस०-असाद०-मिच्छ०-
सोलसक०-पंचणोङ्ग०-णीच्चा०-पंचंत० णि० अणंतगुणधभ० । णामाणं सत्थाणभंगो । एवं
सन्वसंकिलिहाणं । शार्गदिलक :— आचार्व श्री सुदृढिलागट जी महाराज

२७१. अणुदिस याव सन्वह ति आभिण०दंडओ देवोघं । साद० ज० व० पंचणा०-

२६९. देवोमें सात कर्मोंका भङ्ग पहली पृथिवीके समान है । सातावेदनीयके जघन्य अनु-
भागका बन्ध करनेवाला जीव दो गति, एकेन्द्रियजाति, छह संस्थान, छह संहनन, दो आनुपूर्णी,
दो विहायोगति, स्थावर, स्थिर आदि छह युगल और दो गोत्रका कदाचित् बन्ध करता है । यदि
बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता
है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो छह स्थान परित वृद्धिरूप होता है । पञ्चेन्द्रिय-
जाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, आतप, उद्योत, उस और तीर्थकुरका कदाचित् बन्ध करता है जो
अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग नारकियोंके समान है । किन्तु
नामकर्मकी तिर्यक्खगतित्रिको परिवर्तमान करना चाहिए । एकेन्द्रियजाति, आतप और स्थावरका
भङ्ग औधके समान है । पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग और त्रसप्रकृतिका भङ्ग नारकियोंके
समान है । नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थान सशिकर्षके समान है । शेष भंग पहली
पृथिवीके समान है ।

२७०. भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी और सौधम-ऐशान कल्पके देवोमें सात कर्मोंका भङ्ग
सामान्य देवोंके समान है । नामकर्मके पहले और अन्तकी प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य देवोंके
समान है । नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग अपने अपने स्वस्थानके समान है । सनकुमारसे
लेकर सहस्रार कल्प तकके देवोमें पहली पृथिवीके समान भङ्ग है । आनत कल्पसे लेकर नौ श्रेष्ठ-
यक तकके देवोमें सात कर्मोंका भङ्ग इसी प्रकार है । नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग भी उसी प्रकार
है । इतनी विशेषता है कि मनुष्यगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच हानावरण,
नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नौकषाय, नीचगोत्र और पाँच
अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । नामकर्मकी
प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थान सशिकर्षके समान है । इसी प्रकार सर्व संक्लेशसे जघन्य बंधनेवाली
प्रकृतियोंके सन्वन्धमें जानना चाहिए ।

२७१. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोमें आभिनिवौधिक हानावरण दण्डकका

१. ता० आ० ग्रन्थोः यावरादि इति पाठः । २. आ० मतौ णाम सत्थाणं हेढा इति पाठः ।

अदंस०-बारसक०-पुरिस०-भय-दु०-मणुसगदि-पंचिं०-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०अंगो०-वज्जरि०-पसत्यापसत्य०४-मणुसाण०-अगु०४-पसत्थवि०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदे०-णिमि०-उच्चा०-पंचत० पि० अणंतगुणव्य० । चदुणोक०-तित्थ० सिया० अणंतगुणव्य० । मणुसाउ०-थिरादितिणियुग० सिया० । तं तु० । एवं सादर्भगो असाद०-मणुसाउ०-थिरादितिणियुग० । अरदि-सोगं देवोघं० ।

२७२. मणुसग० ज० बं० पंचणा०-बदंस०-असादा०-बारसक०-पंचणोक०-पंचत० पि० अणंतगुणव्य० । उच्चा० पि० । तं तु० । णाम० सत्थाणभंगो० । एवं सब्बसंकिलिद्वाण भंगो उच्चा० ।

२७३. पंचिंदि०-तस०२-पंचयण०-पंचवचि०-कायजोगी० ओघो । ओरालि० मणुसभंगो० । णवरि तिरिक्ख०३ मूलोघं० । ओरालियमि० आभिण०दंडओ तिरि-क्खोघं० । णवरि बारसक० पि० । तं तु० । तित्थ० सिया० अणंतगुणव्य० । थीण-भङ्ग सामान्य देवोंके समान है । सातावेदनीयके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच छह दशनावरण, छह दर्शनावरण, छह स्थान, सुखयेद्वयोंका, जुगुप्ता, मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्त संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्जर्वभ-नाराच संहनन, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । चार नोकषाय और तीर्थङ्करका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । मनुष्यायु और स्थिर आदि तीन युगलका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार सातावेदनीयके समान असातावेदनीय, मनुष्यायु और स्थिर आदि तीन युगलकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए । अरति और शोकका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है ।

२७२. मनुष्यगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, असातावेदनीय, बारह कषाय, पाँच नोकषाय और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । उच्चगोत्रका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । नामकर्मका भङ्ग स्थस्थान सञ्जिकर्षके समान है । इस प्रकार सर्व संक्लेशसे जघन्य बन्धको प्राप्त होनेवाली प्रकृतियोंके समान उच्चगोत्रकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए ।

२७३. पञ्चेन्द्रियद्विक, त्रसद्विक, पाँचों सनोयोगी, पाँचों वचनयोगी और काययोगी जीवोंमें ओघके समान भङ्ग है । औदारिककाययोगी जीवोंमें मनुष्योंके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि तिर्यङ्गगतित्रिकका भङ्ग मूलोघके समान है । औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें आभिनिषोधिकज्ञानावरण दण्डकका भङ्ग सामान्य तिर्यङ्गके समान है । इतनी विशेषता है कि बारह कषायका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य

गिद्ध०३—अण्ताणुवं०४ देवोघं । सादासाद०—थिरादितिष्णयुग० ओघं । णवरि असाद० जह० बंधगस्स विसेसो । देवगदिपंचग० सिया० अण्ताणुणवभ० । इत्थ०-पुरिस०-दोआउ०-मणुसम०-पंचजादि-ओरालि०-तेजा०-क०-छसंठा०-ओरालि०-शंगो०-छसंघ०-पसत्थापसत्थ०४—मणुसाणु०—अगु०४—आदाउज्जो०-दोविहा०-तसा-दिदसयुग०-उच्चा० पंचिदियतिरिक्खभंगो । अरदि-सोगं देवोघं । णवरि देवगदिसंजुतं । तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु०-णीचा० ओघं । देवगदिपंचगं तित्थयरभंगो ।

२७४. वेउच्चि० आभिणि०दंडओ थीणगिद्धिंदंडओ च णिरयोघं । तिरिक्खायु-तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु०-णीचा० णिरयोघं । सेसाणं पगदीणं देवोघं । णवरि इत्थ०-णहुस० णिरयोघं । एवं वेउच्चिवयमि० ।

२७५. [आहार०-]आहारमि० आभिणि० ज० वं० चदुणा०-छदंसणा०-चदुसंज०-पंचणोक०-अप्पसत्थ०४—उप०-पंचत० णि० । तं तु० । साद०-देवगदिआदिसत्तावीसं-उच्चा० णि० तित्थ० सिया० अण्ताणुणवभ० । एवमण्णोण्णं तं तु० । साद ज० वं० सव्वद०भंगो । णवरि अद्वक० वज्ज० । देवगदी धुवं । एवं सादभंगो देवाउ०-थिर-सुभ-अनन्तगुणा अधिक होता है । स्त्यानगृद्धि तीन और अनन्तानुबन्धी चारका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है । सातावेदनीय और स्थिर आदि तीन युगलका भंग ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि असत्तमेवनीयके छान्तुमयैरुभागस्त्री रुद्धकाञ्चरनेवाले जीवके विशेष जानना चाहिए । देवगति पञ्चकका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । स्त्रीवेद, पुरुषवेद, दो आयु, मनुष्यगति, पाँच जाति, औदारिकशरीर, तैंसंसरारीर, कार्मणशरीर, छह संस्थान, औदारिक आंगोपांग, छह संहनन, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, मनुष्य-गत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, आतप, ज्योत, दो विहायोगति, त्रसादि दस युगल और उच्चगोत्रका भंग पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्कोंके समान है । अरति और शोकका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है । इतनी विशेषता है कि देवगतिसंयुक्त करना चाहिए । तिर्यक्कगति, तिर्यक्कगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रका भङ्ग ओघके समान है । देवगतिपञ्चकका भङ्ग तीर्थङ्कर प्रकृतिके समान है ।

२७६. वैकियिककायोगी जीवोंमें आभिनिबोधिकज्ञानावरणदण्डक और स्त्यानगृद्धिदण्डक सामान्य नारकियोंके समान है । तिर्यक्कायु, तिर्यक्कगति, तिर्यक्कगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रका भङ्ग सामान्य नारकियोंके समान है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है । इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका भङ्ग सामान्य नारकियोंके समान है । इसी प्रकार वैकियिक-मिश्रकाययोगी जीवोंके जानना चाहिए ।

२७७. आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें आभिनिबोधिकज्ञानावरणके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्ञलन, पाँच नोकपाण, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपवात और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित वृद्धिरूप होता है । सातावेदनीय, देवगति आदि सत्ताईस प्रकृतियाँ और उच्चगोत्रका नियमसे तथा तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । इसी प्रकार तं तु पतित प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । सातावेदनीयके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवका भङ्ग सर्वार्थसिद्धिके समान है । इतनी विशेषता है कि आठ कपायोंको छोड़कर कहना चाहिए ।

जस० । एवं तत्पदिपकखाण॑ । णवरि देवाड० णत्थि ।

२७६. देवगदि० ज० बं० पञ्चणा०-क्षदंसणा०-असांदा०-चदुसंज०-पञ्चणोक्त०-अण्टसत्थ०४-उप०-पञ्चत० णि० अणंतगुणवभ० । उच्चा० णि० । तं तु० । णामाणं सत्थाणभंगो । एवं सब्बसंकिलिहाण॑ ।

२७७. कम्मइ० आभिणि० ज० बं० दोगदि०-दोसरीर०-दोअंगा०-वज्जरि०-दोआणु०-तिथ० सिया० अणंतगुणवभ० । सेसं ओरालियमिस्स०भंगो । थीणगि०[३-] मिच्छ०-अणंताणु०४ ज० बं० षणुस०-षणुसाणु०-उज्जो०-उच्चा० सिया० अणंत-गुणवभ० । तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु०-णीचा० सिया० । तं तु० । सेसाणं ओघं । णवरि दोगदि-दोसरीर-दोअंगो०-वज्जरि०-दोआणु० सिया० अणंतगुणवभ० । देव-गदि०४ ओरालियमिस्स०भंगो । तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु०-णीचा० सत्तमपुढिविभंगो ।

२७८. ओरालि० ज० बं० एङ्द्रिदि०-यावरादि०४ सिया० अणंतगुणवभ० ।

वेवगतिको भ्रष्ट करना चाहिए । इसी प्रकार सातोवेदनीयके समान देवायु, स्थिर, शुभ और यशः कीर्तिकी मुख्यतासे समिकर्प जानना चाहिए । इसी प्रकार इनकी प्रतिपक्ष प्रकृतियोंकी मुख्यतासे समिकर्प जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि देवायु नहीं है ।

२७९. वेवगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, असातोवेदनीय, चार संबलन, पाँच नोकपाय, अप्रशस्त चर्ण चतुष्क, उपवात और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है । जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । उष्णगोत्रका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । नामकर्मकी प्रकृतियोंका भज्ज स्वस्थान समिकर्पके समान है । इसी प्रकार सर्व संकलेशसे जघन्य बँधनेवाली प्रकृतियोंका जानना चाहिए ।

२८०. कार्मणकाययोगी जीवोंमें आभिनिबोधिकज्ञानावरणके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव दो गति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वज्रष्वभनाराच संहनन, दो आनुपूर्वी और तीर्थेङ्गुर प्रकृतिका क्वाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । शेष भज्ज औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके समान है । स्त्यानगुद्धि तीन, भिष्याल्व और अनन्तानुजन्धीचारके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, उद्योत और उष्णगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । तिर्यङ्गगति, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । शेष प्रकृतियोंका भज्ज ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि दो गति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वज्रष्वभनाराच संहनन और दो आनुपूर्वीका क्वाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । देवगतिचतुष्कका भज्ज औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके समान है । तिर्यङ्गगति, तिर्यङ्गगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रका भज्ज सातवीं पूथिवीके समान है ।

२८१. औदारिकशरीरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव एकेन्द्रियजाति और स्थावर आदि चारका क्वाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है ।

पंचि०-ओरालि०अंगो०-पर०-उस्सा०-आदाउज्जो०-तसष्ठ सिया० । तं तु० । एवं
ओरालिय०भंगो तेजा०-क०-पसत्थ०४-अमु०-णिमि०-पंचि०-पर०-उस्सा०-उज्जोव० ।
तस०४ मूलोधं । सेसाणं ओरालियमिस्स०भंगो ।

२७६. इत्थिवेदेसु आभिणि० ज० वं० चदुणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पुरिस०-
पंचत० णि० जहण्णा० । गार्गदृष्टिः - अऽचार्य और सूक्ष्मादीक्षाग्रत लिखा दृष्टिः अणतगुणव्यम्० । एवमेदाओ
अण्णोएणं जहण्णा० । सेसाणं खवगपगदीणं ओधं ।

२८०, सादा० ज० वं० पंचणा०-छदंसणा०-चदुसंज०-भय-हुमु०-पंचत० णि०
अणतगुणव्यम्० । सेसं पंचिदियतिरिक्खवभंगो । तिथ० सिया० अणतगुणव्यम्० ।
एवं असाद०-थिरादितिएणामु० । इत्थ०-ण्डुंस०-चदुआड०-चदुगदि-चदुजादि असंठा०-
छसंघ०-चदुआण०-दोविहा०-थावरादि०४-मज्जिमल्ल०३-दोगो० पंचि०तिरिक्खवभंगो ।

२८१. पंचिदि० ज० वं पंचणा०--णवदंस०--असाद०--मिच्छ०--सोलसक०-
पंचणोक०-णिरयग०-हुंडसंठा०-अप्पसत्थ०४-णिरयाणु०--उप०--अप्पसत्थ०--अथिरा-
दिछ०-णीचा०-पंचतरा० णि० अणतगुणव्यम्० । वेउच्चिव०-तेजा०-क०-वेउच्चिव०अंगो०-

पञ्चे निद्र्यजाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, परघात, उच्छृंखास, आतप, उद्योत और त्रसचतुष्कका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थानपतित शुद्धिरूप होता है । इसी प्रकार औदारिकशरीरके समान तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त घण्णचतुष्क, अगुरुलघु, निर्माण, पञ्चे निद्र्यजाति, परघात, उच्छृंखास और उद्योतकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए । त्रसचतुष्ककी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष मूलोधके समान है । शेष प्रकृतियोंका भज्ज औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके समान है ।

२८६. शीघ्रेदी जीवोंमें आभिनिन्द्रियकल्पानावरणके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेशाला जीव चार छानावरण, चार दर्शनावरण, चार संबलन, पुरुषवेद और पाँच अन्तरायका नियमसे जघन्य अनुभाग बन्ध करता है । सातावेदनीय, यशाकीर्ति और उव्वगोत्रका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । इसी प्रकार परस्पर जघन्य अनुभाग बन्ध करनेशाली इन प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए । शेष शुपक प्रकृतियोंका भज्ज ओधके समान है ।

२८०. सातावेदनीयके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेशाला जीव पाँच छानावरण, छह दर्शनावरण, चार संबलन, भय, जुगुप्सा और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । शेष भज्ज पञ्चे निद्र्य तिर्यङ्गोंके समान है । तीर्थद्वार प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । इसी प्रकार असातावेदनीय और स्थिर आदि तीन युगलकी मुख्यतासे सञ्जिकर्ष जानना चाहिए । शीघ्रेद, नपुंसकवेद, चार आयु, चार गति, चार जाति, छह संहनन, चार आमुपूर्णी, दो विद्यायोगति, स्थाप्तर आदि चार, मध्यके तीन युगल और दो गोपका भज्ज पञ्चे निद्र्य तिर्यङ्गोंके समान है ।

२८२. पञ्चे निद्र्यजातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेशाला जीव पाँच छानावरण, नीर्देशनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्म, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, नरकगति, हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त घण्णचतुष्क, नरकगत्यामुपूर्वी, उपघात, अप्रशस्त विद्यायोगति, अस्थिर आवि छह, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । वैकियिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वैकियिक आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त घण्णचतुष्क, अगुरु-

पसत्थ०४-अगु०३-तस०४-णिमि० णि० । तं तु० । एवं वेउच्चिव०-वेउच्चिव०अंगो०-[तस०]।

२८२. ओरालि० ज० व० हेदा उवरि पर्चिदियजादिभंगो । तिरिक्ख०-
एइदि०-हुँड०-अप्पसत्थ०४-तिरिक्खाण०-उप०-थावर०-अथिरादिपंच०-णीच०-
पंचंत० णि० अणंतगुणबभ० । तेजझगादीण० णि० । तं तु० । आदाउज्जो० सिया० ।
तं तु० । [एवं आदाउज्जो०] ।

२८३. तेज० जह० हेदा उवरि ओरालिय०भंगो । दोगदि-एइदि-दोआणु०-
अप्पसत्थ०-थावर०-दुस्सर० सिया० अणंतगु० । पंचि०-ओरालि०-वेउच्चिवयदुग-
आदाउ०-तस० सिया० । तं तु० । कम्म०-पसत्थ०४-अगु०३-वादर-पज्जत-पते०-
णिमि० णि० । तं तु० ! हुँड०-अप्पसत्थ०४-उप०-अथिरादिपंच० णि० अणंतगु० ।
एवं कम्मझगादिसंकिलिद्वाण॑ ।

लघुत्रिक, व्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और त्रसकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना चाहिए।

२८४. औदारिकशरीरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवके पूर्वकी और अन्तकी प्रकृतियोंका भङ्ग पश्चेन्द्रियजातिके समान है। तिर्यङ्गगति, एकेन्द्रियजाति, हुण्डसंस्थान, अप्रशास्त वर्णचतुष्क, तिर्यङ्गगत्यालुपूर्णी, उपघात, स्थावर, अस्थिर आदि पाँच, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। तैजसशरीर आदिका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। आतप और उद्योतका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार अर्थात् औदारिकशरीरके भङ्ग समान आतप और उद्योतका भंग है।

२८५. तैजसशरीरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवके पूर्वकी और अन्तकी प्रकृतियोंका भंग औदारिकशरीरके समान है। दो गति, एकेन्द्रियजाति, दो आलुपूर्णी, अप्रशास्त विहायोगति, स्थावर और दुःस्वरका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। पश्चेन्द्रियजाति, औदारिकशरीर, वैक्रियिकशरीरद्विक, आतप और त्रसका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। कार्मणशरीर, प्रशास्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, वादर, पर्याप, प्रत्येक और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। हुण्डसंस्थान, अप्रशास्त वर्णचतुष्क, उपघात और अस्थिर आदि पाँचका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। इसी प्रकार संकलेशसे बँधनेवाली कार्मणशरीर आदि प्रकृतियोंका सञ्चिकर्ष जानना चाहिए।

यागविश्वाकः २८४. ओरालि० अग्ना० ज० च० हृषी उवरि तेजइगर्भंगो । वी॒इ॒दि०-॑पंचि०-॒पर०-॒उसा०-॒उज्जो०-॒अप्पसत्थ०-॒पञ्चापञ्च०-॒दुस्सर० सिया० अण्टगु० । तिरिक्ख-॒गदिसंजुत्ताओ णिय० अण्टगु० । तित्थयरं ओघं ।

२८५. पुरिसेमु सत्तण्ण कम्माण्ण इत्थिर्भंगो । पंचिदिय०-॒ओरालि०-॒वेऽन्वित०-॒आहार०-॒तेजा०-॒क०-॒तिणि० अंगो०-॒पसत्थ०४-॒अगु०३-॒आदाउज्जो०-॒तस०४-॒णिमि०-॒खविगाण्ण तित्थय० ओघं । सेसाण्ण इत्थिर्भंगो ।

२८६. णवुंसगे पहयदंडओ इत्थिर्भंगो । सेसं ओघं । णवरि पंचिदि० ज० व० पंचणा०-॒णवदंस०-॒असाद०-॒मिच्छ०-॒सोलसक०-॒पंचणोक०-॒हुंड०-॒अप्पसत्थ०४-॒उप०-॒अप्पसत्थ०-॒अथिरादिव०-॒णीचा०-॒पंचंत० णि० अण्टगु० । दोगदि०-॒असंप०-॒दोआणु०-॒णीचा० [सिया०] अण्टगु० । दोसरीर-॒दोआंगो०-॒उज्जो० सिया० । तं तु० । तेजा०-॒क०-॒पसत्थ०४-॒अगु०३-॒तस०४-॒णिमि० णि० । तं तु० । एवं पंचिदि-॒यर्भंगो तेजा०-॒क०-॒पसत्थ०४-॒अगु०३-॒तस०४-॒णिमि० । ओरालि०-॒ओरालि०-

२८७. ओदारिक आङ्गोपांगके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवके पूर्वकी और अन्तकी प्रकृतियोंका भंग तैजसशरीरके समान है । द्वीन्द्रियजाति, पञ्चेन्द्रियजाति, परघात, उच्छ्वास, उद्घोत, अप्रशस्त विहायोगति, पर्याप्त, अपर्याप्त और दुःस्वरका कदाचिन् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । तिर्यङ्गगति संयुक्त प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । तीर्थकुरप्रकृतिका भङ्ग ओघके समान है ।

२८८. पुरुषवेदी जीवोंमें सात कर्मोंका भङ्ग स्त्रीवेदी जीवोंके समान है । पञ्चेन्द्रियजाति, ओदारिकशरीर, वैक्षियिकशरीर, आहारकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, तीन आङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, आतप, उद्घोत, त्रसचतुष्क, निर्माण, क्षपक प्रकृतियों और तीर्थङ्कुर प्रकृतिका भङ्ग ओघके समान है । तथा शेष प्रकृतियोंका भङ्ग स्त्रीवेदीके जीवोंके समान है ।

२८९. नपुंसकवेदी जीवोंमें प्रथम दृण्डकका भङ्ग स्त्रीवेदी जीवोंके समान है । शेष भङ्ग ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रियजातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, पाँच नोकपाय, हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उषधात, अप्रशस्त विहायोगति, अस्थिर आदि छह, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । दो गति, असम्भासासुपादिका संहनन, दो आनुपूर्वी और नीचगोत्रका कदाचिन् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग और उद्घोतका कदाचिन् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, त्रसचतुष्क और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय जातिके समान तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, त्रसचतुष्क और निर्माणकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । ओदारिक

१. आ० प्रतौ अप्पसत्थ०४ हति पाठः । २. ता० आ० प्रत्योः—पञ्चस परे० दुस्तर हति पाठः ।
३. ता० प्रतौ दोगदि० आसंप (अप्पस) तथा दोआणु०, आ० प्रतौ दोगदि० अप्पसत्थ० दोआणु० हति पाठः । ४. ता० प्रतौ अगु०४ हति पाठः । ५. आ० प्रतौ तस०४ णिमि० ओरालि० हति पाठः ।

अंगो०-उज्जो० णिरयभंगो । आदाव० तिरिक्खभंगो । सेसं ओघं ।

२८७. अबगदवेदेषु अप्पप्पणो पगदीओ ओघो ।

२८८. कोधादि०४ ओघं । णवरि कोधे० १८ णिय० जह० । माणे० १७ जह० ।
मायाए० १६ जह० । लोभे० ओघो ।

२८९. पदि-सुद०-आभिणि० ज० व० चदुणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोल-
सक०-पंचणोक०-अप्पसत्थ०४-उप०-पंचत० णि० । तं तु० । सादावे०-देवगदिसचा-
वीसं-उच्चा० णि० अणंतगु० । एवमेदाओ तं तु० पदिदाओ^१ अण्णपण्णस्स तं तु० ।

२९०. अरदि० ज० व० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-पुरिस०-भय-
हु०-पंचिदि०-तेजा०-क०-समच्छु०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०४-पसत्थ०४-तस०४-सुभग-
सुस्सर-आदे०--णिमि०-पंचत० णि० अणंतगु० । सादासाद०-तिणिगदि०-दोसरीर-
दोअंगो०-वज्जरि०-तिणिआण०-उज्जो०-थिरादि०-तिणियुग०-दोगो०-सिया०-अणंतगु०।

अरवद्वाक् श्री लुक्लिङ्गावरण ज्ञानी वृद्धरच्च
शरीर, औदारिकआंगोपांग और उद्घोतका भंग नारकियोंके समान है । आतपका भंग तिर्यक्षोंके समान है । शेष भंग ओघके समान है ।

२९१. अपगतवेदी जीवोंमें अपनी अपनी प्रकृतियोंका भंग ओघके समान है ।

२९२. कोधादि चार कथायोंमें ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि कोध कथायमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तराय इन अठारह प्रकृतियोंका नियमसे एक साथ जघन्य अनुभागबन्ध होता है । मानकथायमें संज्वलन कोधके सिवा सबह प्रकृतियोंका नियमसे जघन्य अनुभागबन्ध होता है । माया कथायमें संज्वलनकोध और संज्वलन मानके सिवा सोलह प्रकृतियोंका नियमसे जघन्य अनुभागबन्ध होता है । लोभकथायमें ओघके समान भंग है ।

२९३. मत्यज्ञानी और श्रुतज्ञानी जीवोंमें आभिनिकोधिकज्ञानावरणके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कथाय, पाँच नोकथाय, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपवात और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित छुड़िरूप होता है । सातावेदनीय, देवगति आदि सत्ताईस प्रकृतियाँ और उच्चगोत्रका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । इसी प्रकार इन तं तु पतित प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सक्रिकर्ष परस्पर आभिनिकोधिक-ज्ञानावरणके समान जानना चाहिए ।

२९४. अरतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कथाय, पुरुषवेद, भय, जुगुप्ता, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजसरारीर, कार्मणशरीर, समचतुरलक्षसंस्थान, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलचुचतुष्क, प्रशस्त विद्यायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुख्वर, आदेय, निर्माण और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । सातावेदनीय, असातावेदनीय, तीन गति, दो शरीर, दो आंगोपांग, वज्रभनाराचसदन, तीन आलुपूर्वी, उद्योत, स्विर आदि तीन युगल और दो गोत्रका कथाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । शेष भंग ओघके

१. ता० प्रती तं तु० पंचिदि (दिया) ओ, आ० प्रती तं तु० पंचिदियाओ हति पाठः । २. आ० प्रती अगु०३ एषत्थ० इति पाठः । ३. ता० आ० प्रत्योः दोगो० हति पाठः । ४. आ० प्रती तिणिआगु० थिरादि० हति पाठः ।

सेसं ओषं । एवं विभंग० ।

२६१. आभिषि०-सुद०-ओधि० खविगाणं पगदीणं अरदि-सोगाणं च ओषं संजमपाओगाणं च । साद० ज० वं० पंचणा०-छदंस०-चहुसंज०-पुरिस०-भय-दु०-पंचि०-समचहु०-तेजा०-क०-पसत्थापसत्थ०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्वर-आदे०-णिधि०-उच्चा०-पंचेत० णि० अणंतगु० । अहक०-चहुणोक०-दोगदि-दोसरीर-दोअंगो०-बज्जरि०-दोआणु०-तित्थय० सिया० अणंतगु० । दोआड०-थिरादितिष्ण-युग० सिया० । तं तु० । एवं मणसा०-दोआड०-थिरादितिष्णयु० ।

२६२. मणुस्तुकज० इंद्रियांच्छात्मुक्तहस्ताप०-असाक्षात्त्वारसक०-पंचणोक०-अप्पसत्थ०४-उप०-अथिर-असुभ-अजस०-पंचेत० णि० शणंतगु० । पंचिदियादि यावणिमि०-उच्चा० णि० । तं तु० । एवं मणुसगदिपंच० ।

२६३. देवगदि ज० वं० हेहा उवरि मणुसगदिभंगो । णाम० सत्थाणभंगो । एवं देवगदि०४ ।

२६४. पंचिदि० ज० वं० हेहा उवरि मणुसगदिभंगो । णामाण० दोगदि-समान है । इसी प्रकार अर्थात् मत्यज्ञानी जीवोंके समान विभक्तज्ञानी जीवोंके जानना चाहिए ।

२६१. आभिनिवीधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें क्षपक प्रकृतियोंका, अरति शोकका व संयमप्रायोग्य प्रकृतियोंका भङ्ग ओषके समान है । सातावेदनीयके जघन्य अनुभागका वन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्ञलन, पुरुषवेद, भय, जुगुज्ञा, पञ्चेन्द्रियजाति, समचतुरस्संस्थान, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, असचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । आठ कृपाय, चार नोकपाय, दो गति, दो शरीर, दो आङ्गापाङ्ग, बर्षभनराच संहनन, दो आनुपूर्वी और तीर्थद्वारका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । दो आयु और स्थिर आदि तीन युगलका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार असातावेदनीय, दो आयु और स्थिर आदि तीन युगलकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना चाहिए ।

२६२. मनुष्यगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, असातावेदनीय वारह कृपाय, पाँच नोकपाय, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, उपवात, अस्थिर, अशुभ, अयशःकृति और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । पञ्चेन्द्रियजातिसे लेकर निर्माण तक और उच्चगोत्रका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार मनुष्यगतिपञ्चकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना चाहिए ।

२६३. देवगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवके नामकर्मसे पूर्वकी और वादकी प्रकृतियोंका भङ्ग मनुष्यगतिके समान है । तथा नामकर्मका भङ्ग स्वस्थान सञ्चिकर्षके समान है । इसी प्रकार देवगतिचतुष्ककी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना चाहिए ।

२६४. पञ्चेन्द्रियजातिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवके नामकर्मसे पूर्वकी और

दोसरीर-दोअंगो०-बज्जरिस०--दोआणु०--तित्थ० सिया० । तं तु० । तेजइगादिपस्त्थाओ उक्ता० णि० । तं तु० । अप्पसत्थवण्ण०-[उप०-अथिर-असुभ-अजस०] णि० अण्ठतगु० । एवं सञ्चासंकिलिष्टाणं पंचिदिवभंगो । [अहारदुगं अप्पसत्थ०४-उप० ओघं ।] एवं ओधिद०-सम्मादि०-खडगसम्मा०-वेदग०-उवसम०-सम्मामि० । यवरि उवसम० पसत्थाणं तित्थ० वज्ज असंजमपाओगा कादच्चा ।

यागदशक्ति०-**यणपञ्चके खविमाणां ओघो०**-**सुमास्त्रं ओधिभंगो०** । एवं संजद-सामाइ०-
ब्रेदो०-परिहार-संजदासंजद० । यवरि परिहारवज्ञाणं पसत्थपगदीणं तित्थयरं वज्ज० ।
सुहुपसंप० अवगदवेदभंगो० ।

२६६. असंजदेसु आभिणि०दंडओ थीणगिछ्दिंडओ देवगदिसंजुत्त॑ कादच्चं ।
सादासाद०-थिरादितिणियुग० सम्मादिडि-मिच्छादिडिसंजुत्ताओ कादच्चाओ । इत्थ०-
णवुंस० ओघं ।

२६७. अरदि० ज० घ० दोगदि०-दोसरीर०-दोअंगो०-बज्जरि०-दोआणु०-
बादकी प्रकृतियोंका भङ्ग मनुष्यगतिके समान है। नामकर्मकी दोगति, दो शरीर, दो आंगोपांग, बन्ध-
वंभनाराचसंहनन, दो आलुपूर्वी और तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता
है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता
है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है।
तैजसशरीर आदि प्रशस्त प्रकृतियाँ और उच्चोत्रका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य
अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य
अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। अप्रशस्त वर्णचतुष्क,
उपघात, अस्थिर, अशुभ और अयशकीर्तिका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा
अधिक होता है। इस प्रकार जिनका सर्वसंक्लेशसे जघन्य अनुभागबन्ध होता है उनकी मुख्यतासे
सत्रिकर्ष पञ्चेन्द्रियजातिके समान जानना चाहिए। आहारकट्टिक, अप्रशस्त वर्ण चार और उप-
घातकी मुख्यतासे सत्रिकर्ष ओघके समान है। [इसी प्रकार अर्थात् आभिनिबोधिकज्ञानी जीवोंके
समान अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि, उपशमसम्यग्दृष्टि और सम्य-
ग्मित्याहृष्टि जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंमें प्रशस्त प्रकृतियोंको
तीर्थङ्करप्रकृतिको छोड़कर असंयमप्रायोग्य करना चाहिए।

२६८. मनःपर्यंज्ञानी जीवोंमें क्षपक प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। शेष प्रकृतियोंका
भङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है। इसी प्रकार संयत, सामयिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत,
परिहारचिशुद्धिसंयत और संयतासंयत जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि परिहार-
विशुद्धिसंयतोंमें प्रशस्त प्रकृतियोंका तीर्थङ्कर प्रकृतिको छोड़कर सत्रिकर्ष कहना चाहिए। सूर्त्म-
साम्परायसंयत जीवोंमें अपगतवेदी जीवोंके समान भङ्ग है।

२६९. असैयत जीवोंमें आभिनिबोधिकदण्डक और स्त्यानगृद्धिदण्डकको देवगतिसंयुक्त
करना चाहिए। सातवेदनीय, असातवेदनीय और स्थिर आदि तीन युगलको सम्यग्दृष्टि और
मित्याहृष्टि संयुक्त करना चाहिए। ऋवेद और नपुंसकवेदका भङ्ग ओघके समान है।

२७०. अरतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव दो गति, दो शरीर, दो आङ्गो-

१. आ० प्रती आभिनिदण्डओ देवगदिसंजुत्त॑ हसि पाठः ।

तिथ० सिया० अण्तगु० । सेसं ओघे ।

२६८. चक्षु०-अचक्षु० ओघे । किण्णाए आभिणि०दंडओ थीणगिद्दंडओ णिरयभंगो । सादादिचदुयुग०--अरदि-सोगं असंजदभंगो । इत्थ०-णवुंस० ओघे । सेसं णवुंसगभंगो ।

२६९. णील-काऊए पहमदंडओ विदियदंडओ तदियदंडओ अरदि-सोगदंडओ किण्णभंगो । इत्थ० ज० वं० तिरिकखोघे । मणुस०-देवगदि-दोआणु० सिया० अण्तगु० । णवुंस०-थीणमिद्दंडओ पंचिंदि०दंडओ णिरयोघे ।

३००. वेउच्चिव० ज० वं० पंचणा०-णवदंस०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-णिरयगदि-अहावीसं-णीचा०-पंचंत० णि० अण्तगु० । वेउच्चिव०अंगो० आदावं तिरिकखोघे । सेसं किण्णभंगो ।

३०१. तेऊए आभिणि०दंडओ परिहार०भंगो । विदियदंडओ ओघे । साद० ज० वं० पंचणा०-छदंसणा०-चक्षुसेजै०-भर्तृ-श्री०-यौतुलीष्टुष्टुकूली०पस्त्यात्प्रसत्य०४-अगु०४-बादर-पञ्जत-पसै०-णिमि०-पंचंत० णि० अण्तगु० । थीणगि०३-मिच्छ०-बारसक०-सत्तणोक०-देवगदि-दोसरीर-दोअंगो०-देवाणु०-आदाउज्जो०-तिथ० सिया० पाङ्ग, वर्णवर्भनाराचसंहनन, दो आनुपूर्वी और तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । शेष भङ्ग ओघके समान है ।

२६८. चक्षुदर्शनी और अचक्षुदर्शनी जीवोंमें ओघके समान भङ्ग है । कृष्णलेश्यामें आभिनिवोधिकज्ञानावरणदण्डक और स्त्यानगृद्धिदण्डकका भङ्ग नारकियोंके समान है । साता आदि चार युगल, अरति और शोकका भङ्ग असंयतोंके समान है । खीवेद और नपुंसकवेदका भङ्ग ओघके समान है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग नपुंसकवेदी जीवोंके समान है ।

२६९. नील और कापोत लेश्यामें प्रथम दण्डक, द्वितीय दण्डक, तृतीय दण्डक और अरति-शोकदण्डकका भङ्ग कृष्णलेश्याके समान है । खीवेदके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवका भङ्ग सामान्य तिर्यक्षोंके समान है । मनुष्यगति, देवगति, और दो आनुपूर्वीका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । नपुंसकवेद, स्त्यानगृद्धिदण्डक और पञ्चेन्द्रियजाति दण्डकका भङ्ग सामान्य नारकियोंके समान है ।

३००. वैक्तिकिशरारीरके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, नरकगति आदि अट्ठाहिस प्रकृतियाँ नीचगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । वैक्तिकिश्चारोपाङ्ग और आतपका भङ्ग सामान्य तिर्यक्षोंके समान है । शेष प्रकृतियों का भङ्ग कृष्णलेश्याके समान है ।

३०१. पीतलेश्यामें आभिनिवोधिकज्ञानावरण दण्डक परिहारविगृद्धिसंयत जीवोंके समान है । द्वितीय दण्डकका भङ्ग ओघके समान है । सातावेदनीयके जघन्य अनुभागका बन्ध करने वाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्वलन, भय, जुगुप्सा, तैजसशरीर, कार्मण-शरीर, प्रशस्त वर्णचतुष्क, अप्रशस्त वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, निर्माण और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, बारह कषाय, सात नोकषाय, देवगति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, देवगत्यानु-

अणतगु० । तिणिआउ०-दोगदि-दोजादि-छसठा०-छसठा०-दोआण०-दोविहा०-
तस-थावर-थिरादिछयुग०-दोगो० सिया० । तं तु० । एवं असाद०-थिरादितिणि-
युग० । इत्थि० ज० बं० णीलभंगो । णवुंस०-दोआउ० देवभंगो ।

३०२. देवाउ० ज० बं० सादा०-थिर-सुभ-जस० णि० । तं तु० । मिच्छा-
दिडिसंजुत्ता कादव्या । सेसं णि० अणतगु० ।

३०३. देवगदि ज० बं० पञ्चणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-
इत्थि०-अरदि-सोग-भय-दु०-उच्चा०-पञ्चंत० णि० अणतगु० । वेउविव०-वेउविव०-अंगो०-
देवाणु० णि० । तं तु० । णामाणं सत्थाणभंगो । सेसं सोधम्भंगो । एवं पम्माए
वि० । णवरि णामाणं सहस्रारभंगो । देवगदि०४ तेउभंगो । णवरि पुरिस० धुवं० ।

३०४. सुकाए खविगाणं ओघं । सादादिचतुयुग० पम्मभंगो । देवगदि०४
पम्मभंगो । सेसं णवगेवज्जभंगो ।

पूर्वी, आतप, उद्योत और तीर्थद्वारका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। तीन आयु, दो गति, दो जाति, छह संस्थान, छह संहनन, दो आनुपूर्वी, दो विद्यायोगति, छह स्थावर, स्थिर आदि छह युगल और दो गोत्रका कदाचित् बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो भैत्राम्बुद्ध्यक्तिमुभागवत्तासी क्लीयत्तुसिंहासी और ज्ञीजलम्बुद्ध्यक्तिमुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। इसी प्रकार अर्थात् सातावेदनीयके समान असातावेदनीय और स्थिर आदि तीन युगलकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष जानना चाहिए। खीवेदके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवका भङ्ग नीललेश्याके समान है। नपुंसवेद और दो आयुका भङ्ग देवोंके समान है।

३०२. देवायुके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव सातावेदनीय, स्थिर, शुभ और यशःकीर्तिका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। किन्तु इन्हें मिथ्यादृष्टिसंयुक्त करना चाहिए। शेष प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है।

३०३. देवगतिके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, स्त्रीवेद, अरति, शोक, भय, जुगुसा, उव्वगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है। वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और देवगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्ध करता है। किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है। यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है। नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्थस्थानसञ्चिकर्षके समान है। शेष भङ्ग सौधर्म कल्पके समान है। इसी प्रकार अर्थात् पीतलेश्याके समान पद्मलेश्यमें भी जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसमें नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग सहस्रार कल्पके समान है। तथा देवगतिचतुष्कका भङ्ग पीतलेश्याके समान है। इतनी विशेषता है कि पुरुषवेदको ध्रुव करना चाहिए।

३०४. शुक्ललेश्यमें ध्रुपक प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। सातावेदनीय आदि चार युगलोंका भङ्ग पद्मलेश्याके समान है। देवगतिचतुष्कका भङ्ग पद्मलेश्याके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग नौप्रवैयकके समान है।

३०५. भवसि० ओघं । अवभवसि० आभिणि०दंडजो [मदि०भंगो । ऊवरि] तिरिक्ख०—तिरिक्खाणु०-णीचा० सिया० । तं तु० । दोगदि-दोसरीर-दोअंगो०-व०ज्जरि-दोआणु०-उज्जो०-उच्चा० सिया० अणंतगु० । इत्थि०-णवुंस० ओघं । अरदि-सोग० मदि०भंगो । ऊवरि सव्वयोर्धे॑ ।

३०६. सासणे आभिणि० ज० व० चदुणा०-णवदंसणा०-सोलसक०-पंच-णोक०-अप्पसत्थ०४—उष०-पंचत० णि० । तं तु० । सादा०-पंचिदि०-तेजा०-क०-पसत्थ०४—अगु०३—पसत्थ०-तस०४—थिरादिछ०-णिमि० णि० अणंतगु० । तिरिक्ख०-तिरिक्खाणु०--णीचा० सिया० । तं तु० । दोगदि--दोसरीर-दोअंगो०--वज्जरि०-दोआणु०-उज्जो०-उच्चा० सिया० अणंतगु० । एवमेदाजो एकमेकस्स तं तु० ।

३०७. सादा० ज० व० पंचणा०-णवदंसणा०-सोलसक०-भय-दु०-पंचिदि०-तेजा०-क०-पसत्थापसत्थ०४—अगु०४—तस०४—णिमि० णि० अणंतगु० । चदुणोक०-

३०८. भव्योंमें ओघके समान भङ्ग हैं । अभव्योंमें आभिनिवीधिकज्ञानावरणदण्डकके जबन्य अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवका भङ्ग मत्यज्ञानियोंके समान है । इतनी विशेषता है कि तिर्यक्खगति, तिर्यक्खगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । दो गति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वर्जनेभनाराच संहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत और उच्चगोत्रका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । खींचेद और नयुंसकवेदका भङ्ग ओघके समान है । अरति और शोकका भङ्ग मत्यज्ञानी जीवोंके समान है । आगेका सब भङ्ग ओघके समान है ।

३०८. सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंमें आभिनिवीधिकज्ञानावरणके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव चार छानावरण, नौ दर्शनावरण, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, अप्रशस्त चर्ण-चतुष्क, उपघात और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्ध करता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । सातावेदनीय, पञ्चेन्द्रियजाति, तैजस-शरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त चर्णचतुष्क, अगुरुलघुत्रिक, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह और निर्माणका नियमसे बन्ध होता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । तिर्यक्खगति, तिर्यक्खगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रका कदाचित् बन्ध होता है । किन्तु वह जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागका बन्ध करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । दो गति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वर्जनेभनाराच संहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत और उच्चगोत्रका कदाचित् बन्ध होता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । इस प्रकार तंतु पतित इन प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सम्बिल्प जानना चाहिए ।

३०९. सातावेदनीयके जघन्य अनुभागका बन्ध करनेवाला जीव पाँच छानावरण, नौ दर्शना-वरण, सोलह कषाय, भय, जुगुसा, पञ्चेन्द्रियजाति, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, प्रशस्त चर्णचतुष्क,

तिरिक्त्वा० ३—दोसरीर-दोश्चगो०-उज्जो० सिया० अणंतगु० । तिणिआड०-मणुसग०-
देवग०-पंचसंडा०-पंचसंघ०-दोआणु०-यिरादिछयुग०-उच्चा० सिया० । तं तु० । एवं
तंतु पदिदाणं सब्बाणं सादर्भंगो । पंचिदियदंडओ णिरयभंगो । दोआड० देवभंगो ।
देवाड० ओघं ।

३०८. मिच्चादिढी० मदि०भंगो । सण्णी० श्रोघो । असण्णीसु आभिण-
दंडओ देवगदिसंजुत्तं० कादब्बं । सेसं तिरिक्त्वोघं । आहार० ओघं । अणाहार०
कम्मइगभंगो ।

एवं जहणपरत्थाणसण्णिकासो समतो ।

१६ भंगविचयप्रलवणा

३०९. णाणाजीवैह भगविचय तुवि०-जैह० उक्ससयी च । उक० पगदं ।
तथ इमं अर्थपदं मूलपगदिभंगो । एदेण अर्थपदेण तुवि०-ओघे० आदे० ।
ओघे० सब्बपगदीणं उक्ससाणुक्सस० छभंगा । तिणिआडणं उक्ससाणुक्सस०
सोलसभंगा । एवं ओघभंगो तिरिक्त्वोघं कायजोगि-ओरालि०-ओरालियमि०-कम्म-
इग०-णवुंस०--कोधादि०४—मदि०--सुद०--असंजद०—अचक्षु०—तिणले०--भवसि०

अप्रशास्त वर्णभुष्ट, अगुरुलघुचतुष्ट, व्रस्त्वतुष्ट और निर्माणका नियमसे बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । चार नोकवाय, तिर्यक्षगतित्रिक, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग और उद्घोतका कदाचित् बन्ध करता है जो अजघन्य अनन्तगुणा अधिक होता है । तीन आयु, मनुष्यगति, देवगति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, दो आनुपूर्वी, स्थिर आदि छह युगल और उच्चगोप्रका कदाचित् बन्ध करता है । यदि बन्ध करता है तो जघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है और अजघन्य अनुभागका भी बन्ध करता है । यदि अजघन्य अनुभागवन्य करता है तो वह छह स्थान पतित वृद्धिरूप होता है । इसी प्रकार तंतु पतित सब प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सञ्चिकर्ष साताथेदीयके समान है । पञ्चेन्द्रियजातिदण्डकका भज्ज नारकियोंके समान है । दो आयुओंका भज्ज देवोंके समान है । देवायुका भज्ज ओघके समान है ।

३१०. मिथ्याहृष्टि जीवोंमें सत्यहानी जीवोंके समान भज्ज है । संही जीवोंमें ओघके समान भज्ज है । असंज्ञियोंमें आभिन्नोधिकहानावरण दण्डक देवगतिसंयुक्त करना चाहिए । शेष भज्ज सामान्य तिर्यक्षोंके समान है । आहारक जीवोंमें ओघके समान भज्ज है । अनाहारक जीवोंमें कार्मणकाय-योगी जीवोंके समान भज्ज है ।

इस प्रकार जघन्य परस्थान सञ्चिकर्ष समाप्त हुआ ।

१६ भङ्गविचयप्रलपणा

३११. नाना जीवोंकी अपेक्षा भङ्गविचय दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । उसके विषयमें यह अर्थपद मूलप्रश्नतिके समान है । इस अर्थपदके अनुसार विदेश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्टअनुभागबन्धके छह भज्ज हैं । तीन आयुओंके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्टके सोलह भज्ज हैं । इस प्रकार ओघके समान सामान्य तिर्यक्ष, काययोगी, औदारिककाययोगी, औदारिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, नपुंसकवेदी,

अवधवसि०-मित्त्वा०-असण्णि०-आहार०-अणाहारग ति । जवरि ओशलियमि०-कम्बइ०-अणाहारएसु-देवगदिपंच० उक्ससाणुक्सस० सोलस भंगा ।

३१०. ऐरइएसु-दोआउ० दो वि पदा सोलस भंगा । सेसाणं सञ्चयगदीणं दोपदा छर्भंगा । एवं णिरत्यभंगो पंचिं०तिरि०अपज्ज० मणुस०३-सञ्चदेव०-सञ्च-विगलिंदि०--पंचि०--तस० तेसि पज्जतापज्जता वादर-वादरपुढवि०-आउ०--तेउ० वाड०-वादरक्षणफादपत्तेयेज्जताणं च पंचमण०-पंचवचि०-वेडविं०--इतिथ०-पुरिस०-विभंग-आभिणि०-मुद०-ओधि०-मणपज्ज०-संजद० याव संजदासंजदा० चक्रवुदं०-ओधिदं०-तिष्णिले०-सम्मादि०-खइग०-वेदग०-सणिण ति ।

३११. मणुस०अपज्ज०-वेडवियमि०-आहार०-आहारमि०-अवगद०-मुहुषसं०-उवसम०-सासण०-सम्मामि० उक्क० अणुक० सोलस भंगा । एइंदिएसु-दोआउ ओघं । सेसाणं उक्ससाणुक्सस० अथिरबंधगा य अबंधगा य । एवं एइंदियभंगो वादरपुढवि०-आउ०-तेउ०-वाड०अपज्ज०--सञ्चवणण्फदिवादर-पत्तेय०अपज्ज०-सञ्च-णियोदाणं सञ्चवसुहुमाणं च । जवरि एइंदिं०-वादरएइंदिं० तस्सेव पज्जतगेसु उज्जोवं ओघं । पुढ०- आउ०-तेउ०-वाड०-वादर-पत्ते० सञ्चयगदीणं ओघं ।

एवं उक्ससं समत्तं ।

क्रोधादि चार कथायबाले, मत्यज्ञानी, श्रुतज्ञानी, असंयत, अचलुदर्शनी, तीन लेश्यावाले, भव्य, अभव्य, मिश्याहृष्टि, असही, आहारक और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि औदारिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी और अनाहारक जीवोंमें देवगतिपञ्चकके उल्लूष्ट और अनुत्कृष्ट अनुभागवन्धके सोलह भङ्ग हैं ।

३१०. नारकियोंमें दो आयुओंके दोनों ही पदोंके सोलह भङ्ग हैं । शेष सब प्रकृतियोंके दो पदोंके छह भङ्ग हैं । इसी प्रकार नारकियोंके समान पञ्चेन्द्रिय तिर्यङ्ग तीन, पञ्चेन्द्रिय तिर्यङ्ग अपर्याप्त, मनुष्यत्रिक, सब देव, सब विकलिन्द्रिय, पञ्चेन्द्रिय और व्रस तथा इन दोनोंके पर्याप्त और अपर्याप्त, वादर पृथिवीकायिक, वादर जलकायिक, वादर अग्निकायिक, वादर वायुकायिक, वादर वनस्पति प्रत्येक शरीर और इन पाँचोंके पर्याप्त, पाँचों मनोयोगी, पाँचों चचनयोगी, वैक्रियिककाययोगी, स्त्रीवेदी, पुरुषवेदी, विभक्तज्ञानी, आभिनिवोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी, संयतोंसे लेकर संयतासंयत तकके जीव, चलुदर्शनी, अवधिदर्शनी, तीन लेश्यावाले, सम्यग्हृष्टि, क्षायिकसम्यग्हृष्टि, वेदकसम्यग्हृष्टि, और सही जीवोंके जानना चाहिए ।

३११. मनुष्यअपर्याप्त, वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, आहारकाययोगी, आहारकमिश्रकाययोगी, अपगतवेदी, सूक्ष्मसाम्परायिक संयत, उरशमसम्यग्हृष्टि सासादनसम्यग्हृष्टि और सम्यग्मिश्याहृष्टि जीवोंमें सब प्रकृतियोंके उल्लूष्ट और अनुत्कृष्ट अनुभागवन्धके सोलह भङ्ग हैं । एकेन्द्रियोंमें दो आयुओंका भङ्ग ओघके समान है । शेष प्रकृतियोंके उल्लूष्ट और अनुत्कृष्ट अनुभागवन्धके बन्धक जीव हैं और अबन्धक जीव हैं । इसी प्रकार एकेन्द्रियोंके समान वादर पृथिवीकायिक अपर्याप्त, वादर जलकायिक अपर्याप्त, वादर अग्निकायिक अपर्याप्त, वादर वायुकायिक अपर्याप्त, सब वनस्पति कायिक, वादर प्रत्येक शरीर अपर्याप्त, सब निगोद और सब सूक्ष्म जीवोंके जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय, वादर एकेन्द्रिय और उनके पर्याप्त जीवोंमें उद्योत ओघके समान है । पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक

३१२. जहण्णए पग०। तत्य इर्म अद्वयदं मूलपगदिभंगो। एदेण अद्वयदेण दुषि०-ओघे० आदे०। ओघे० सादासाद०-तिरिक्खाउ०-मणुसा०-चदुजादि-इस्संठा०-छस्संघ०-मणुसामुक्त्वा०-विज्ञाव्यक्त्वा०-द्विल्लिप्तिरप्तिरप्तिरप्ति०। ज०अज० अत्थ बंधगा य अबंधगा य। सेसाणं पगदीणं ज० अज० उक्ससभंगो। एवं ओघभंगो तिरिक्खोघं कायजोगि-ओरालिय०-ओरालियमि०-कम्पइ०-णवुंस०-कोधादि०४-मदि०-सुद०-असंज०-अचक्खु०-तिणिणले०-भवसि०-अबभवसि०-मिच्छा०-असणिण०-आहार०-अणाहारए ति।

३१३. एङ्द्रिय-बादरएङ्द्रिय-पज्जत मणुसाउ०-तिरिक्खगदितिगं ओघं। सेसाणं ज० अज० अत्थ बंधगा य अबंधगा य। बादरएङ्द्रियअपज्ज० सञ्चमुहुमाणं बादर-चदुक्कायअपज्जत्तगाणं सञ्चवणप्फदि-बादरपत्तेयअपज्जत०-सञ्चणियोद० मणुसाउ० ओघं। सेसाणं ज० अज० अत्थै बंध० अबंध०। शुद्धिं-आउ०-तेउ०-वाउ०-बादर-पत्त०-बादरपुद्धिं-आउ०-तेउ० [वाउ०] धुविगाणं पसत्यापसत्थाणं केसि च परियन्तीणं च मणुसाउ० ज० अज० उक्ससभंगो। सेसाणं ज० अज० अत्थ बंधगा और बादर प्रत्येक वनस्पतिकायिक जीवोंमें सब प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है।

इस प्रकार उल्लङ्घ समाप्त हुआ।

३१४. जघन्यका प्रकरण है। उसके विषयमें यह अर्थपद मूल प्रकृतिके समान है। इस अर्थ-पदके अनुसार दो प्रकारका निर्देश है-ओघ और आदेश। ओघसे सातावेदनीय, असातावेदनीय, तिर्यङ्गायु, मनुष्यगति, चार जाति, छह संस्थान, छह संहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वीं, दो विहायोगति, स्थावर आदि चार, स्थिर आदि छह युगल और उच्चगोत्रके जघन्य और अजघन्य अनुभागबन्धके बन्धक जीव हैं और अबन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंके जघन्य और अजघन्य अनुभागबन्धका भङ्ग उल्लङ्घके समान है। इसी प्रकार ओघके समान सामान्य तिर्यङ्ग, काययोगी, औदारिक काययोगी, औदारिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, नपुंसकवेदी, कोधादि चार कायवाले, मत्यवानी, श्रुतावानी, असंयत, अचल्लुदर्शनी, तीन लेश्यावाले, भवय, अभवय, मिथ्यादृष्टि, असङ्गी, आहारक और अनाहारक जीवोंके लानना चाहिए।

३१५. एकेन्द्रिय, बादर एकेन्द्रिय और बादर एकेन्द्रिय पर्याप्त लीबोंमें मनुष्यायु और तिर्यङ्ग-गतित्रिकका भङ्ग ओघके समान है। शेष प्रकृतियोंके जघन्य और अजघन्य अनुभागके बन्धक जीव हैं और अबन्धक जीव हैं। बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्त, सब सूक्ष्म, बादर चार कायवाले अप-र्याप्त, सब वनस्पतिकायिक, बादर प्रत्येक वनस्पतिकायिक अपर्याप्त और सब निगोद लीबोंमें मनुष्यायुका भङ्ग ओघके समान है। शेष प्रकृतियोंके जघन्य और अजघन्य अनुभागके बन्धक जीव हैं और अबन्धक जीव हैं। पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक वायुकायिक, बादर प्रत्येक वनस्पतिकायिक, बादर पृथिवीकायिक, बादर जलकायिक, बादर अग्निकायिक और बादर वायुकायिक लीबोंमें प्रशस्त और अप्रशस्त ध्रुवबन्धवाली, कितनी ही परावर्तमान प्रकृतियों और मनुष्यायुके जघन्य और अजघन्य अनुभागबन्धका भङ्ग उल्लङ्घके समान है। शेष प्रकृतियोंके जघन्य और अजघन्य अनुभागके बन्धक जीव हैं और अबन्धक जीव हैं।

१. आ० प्रतौ अज० अत्थ इति पाठः। २. आ० प्रतौ तेउ० बादरपत्त० इति पाठः।